

15.8 पुस्तकालय 80 202			
<u>१६.८</u> पुस्तकालय ४० २७ २ ८६ ८ १ पुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय			
विषय संख्या आगत नं ०			
लेखक			
शोर्षक की पिराट की प			
दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या
	(1941		- (164)
	100		
		N	

STRAIT STATE AND STATE OF THE PARTY AND STATE

पुरतकालय

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या

आगत संख्या 40 202

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सिहत 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।



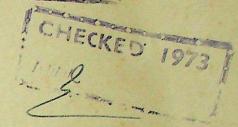


27/2/01



रूप-निघंटु कोष

श्र -



```
श्रः-[सं०] १. शिव। २. विध्यु 🛵 😘
श्रंकडुचेट्ट-[ते०] कुड़ा। कुटन ।
श्रंकन-[ सं० ] ढेरा । श्रंकोट । श्रंकील ।
श्रंकलेख्य-[सं०] कसेरू छोटा। चिंचोटक चुप। चिचोड़।
श्रकलोड्य-[सं०]
श्रंकुडुचेहु-[ते०] कुड़ा। कुटन । केरिया।
त्रें कुल-[ उ० ] हेरा । ग्रंकोट । ग्रंकोल । हेला ।
श्रंकीय-[ सं० ]
श्रंकोटक-[सं०]
श्रंकाठ-[ सं० ]
श्रकाडक-[ सं० ]
                                      हेरा। श्रंकील । हेला
श्रंकीलं-[ मु०, गोंड०, कोल०, द्रा० ]
श्रकाल-[सं०, हिं०]
श्रंकोलक-[ सं० ]
श्रंकोलमु-[ ते॰ ]
त्र्रंकोलसार-[ सं० ] स्थावर विषभेद । श्रकीम, संखिया श्रादि ।
श्रंकोल्य-[ मरा० ] ढेरा । श्रंकोल । ढेला वृच ।
श्रकाल-[ सं० ] देवदार । देवदार ।
श्रंकोल्लक-[ सं० ] ढेरा । श्रंकोट वृच ।
श्रंकील्ळसार-[सं०] स्थावर विष । स्थावर विष का एक भेद ।
श्रंकोलि-[गु॰]
श्रंकोली-[गु०]
                 हरा। श्रंकोल। ढेला वृत्त ।
श्रंकोले-[क0]
त्रुँखदुखनी राग-[हिं०] श्रमिष्यंद। सर्वाचि राग। नेत्रराग
 विशेष।
श्रंग-[सं०] शरीर। देह।
```

श्रुंगग्रह-[सं०] गात्र-पीड़ा। शरीर की वेदना।

श्रुंगनियार-[हि॰] श्ररनी । श्र**क्तिमंथ । गनियारी** ।

श्रुंगप्रिया-[सं॰] प्रियंगु । गंधप्रियंगु । फुल प्रियंग ।

श्रंजदाँ । श्रंजदान रूमी ।

श्रुंगना-[सं०] १. प्रियंगु । दहिंगना । २. स्त्री । नारि । श्रीरत ।

श्चेगिय-[सं०] १. अशोक। शोकनाश वृत्त। २. ऋतुमती।

श्रंगज - [फा॰] हींग। हिंगु।

दुमोत्पन । उन्नट कमल ।

श्रंगबार-[फा॰] श्रँजुवार । श्रंजवार ।

श्रंगदाँ-[यू॰]

श्रगदान-[यू॰]

श्रंगर-[सं०] हिमावली । हितावली । श्रंगरक्त-[सं०] कमीला। कंपिछ। श्रंगरस-[सं०] वह रस जो ताजी श्रोपधियों की कृटकर कपड़े से छानने पर निकलता है। स्वरस । श्चंगरापर्ण-[सं०] श्रंगरा नामक पान। एक प्रकार का पान। श्रंगरापास-[मरा०] श्रंगरा पान-[हि॰] पान श्रंगरा। त्रंगलोड्य-[सं०] १. श्रदरक । श्रार्द्ध । श्रादी । २. कसेरू छोटा । चिंचोटक चुप । चिचाड़ । श्चेंगसुंदर-[सं०] श्रगद । दट्टन्न । दट्टमहीं वृत्त । श्रंगसेन-[सं०] श्रगस्त । बक वृत्त । श्रंगाकर-[सं॰] लिही। बाटी। श्रंगार-[सं०] कीयला। श्रलात। श्रंगारक-[सं॰] १. कटसरैया। कुरंटक। २. **सँ**गरा। मृ^{*}ग-राज। भँगरैया। श्रंगारक मिर्ग-[सं०] मूँगा। प्रवाल। श्रेगारककेटी-[सं०] लिट्टी। बाटी। श्रगार्कुष्ठका-[सं०] हिमावली। हितावली। श्चंगारपर्णी-[सं०] भारंगी। भार्गी। १. पितवँजिया। पुत्र-जीव वृत्त । जि-श्रंगारपुष्प-[सं०] - यापेाता । २. हिंगोट । इंगुदी बृच । श्रंगारपुष्पक-[सं०] (गोंदी। श्रुंगारमंजरी-[सं॰] } करंज। महाकरंज। उहर करंज। श्रंगारमांग्-[सं॰] मूँगा। प्रवाछ। श्रंगारवर्णी-[सं०] भारंगी । भागीं । श्रंगारवल्लरी-[सं॰] घृतकरंज। नाटा करंज। त्र्रंगारवह्मी-[सं०] १. महाकरंज । बड़ा करंज । २. भारंगी । भागी। ३. गुंजा। चाटली। ४. बता करंज। करंजुत्रा। श्रंगारवृत्त-[सं०] हिंगोट। इंगुदी वृत्त । श्रंगारा-[सं०] १. हिमावली । हितावली । २. हिंगोट । इंगुदी श्रंगारिका-[सं०] १. ईख। इचुकांड। २. ढाक की कली। पलाश-कलिका। गारित-[सं०] ढाक की कली। पताश-कलिका।

40202

55.4.76 1(2)

श्रंगियार-[ने॰] श्रयार । श्रंजीर ।
श्रंगिर-[सं॰] तीतर । तित्तिर पची ।
श्रॅगीठी--[हिं॰] श्रप्ति जलाने का एक प्रसिद्ध वर्तन जिसमें के।यले
श्रथवा कंडे की श्राग जलाते हैं। यह धातुश्रों के। गलाने श्रथवा
तपाने के काम में श्राती है । हसान्तिका । विद्वशकटिका ।
बेगरसी । श्रँगैठा । श्रँगैठी ।
श्रंगुज-[यू॰] होंग । हिंगु ।
श्रंगुजदर्ख्त-[यू॰] होंग । हिंगुवृच ।

श्रंगुक्क-[यू॰] हींग । हिंगु । श्रंगुक्क-[यू॰] हींग । हिंगु । हिंगुवृत्त । श्रंगुक्क द्रस्कते-[का॰] हींग । हिंगुवृत्त । श्रंगण-[सं॰] भंटा । वार्ताकु । बगन ।

श्चेगुर-[क॰] १. श्रसगंध । श्रश्वगंधा । [हि॰] २. श्रंगूर । श्रपकदाचा ।

श्चंगुलिफला-[सं०] बीरा । निष्पावी । श्चंगली-[सं०] गजकर्णे श्चालु । गजकर्णिका । श्चंगुलीफला-[सं०] बीरा । निष्पावी ।

स्रंगर्-[हं॰] श्रंग्र । [सं॰] श्रपकदाचा। मधुरसा। रसाला। स्वादुफला। फलेक्समा इत्यादि। [हं॰] कची दाख। [द॰] श्रंग्र । [ता॰] केडिमंड्रिप पज्हम । दिराचा पज्हम्। दिराचा परम। [तै॰] दाचापंडु। गोस्तनीपंडु। [मला॰] मुंति-रीन्नयपज्हम्। मुंत्रिपरम। [खा॰] द्राचीहन्नु। [बँ॰] श्रंग्र । दाख्या। [म०] द्राच। [गु०] द्राख। [संह०] मुद्रपलम। मद्रपलम। मुद्रका। मद्रका। [वर॰] सवीसी। सव्यसी। [फा॰] श्रंग्र । देशावह। [अ॰] श्रनच। श्रानाब। ऐनाव। हसरम।

लै॰-Vitis Vinifera. श्रं॰-Grapes.

श्रंगुर का वृष्ण बता-वृष्ण की भांति होता है। इसका डंठल काष्टवत्, डंठी चिमड़ी श्रीर घाल स्त्रवत् लंबे होते हैं जिनके जपर का हिस्सा प्राय: जोड़े में देखा जाता है। पत्ते गोलाकार, पाँच दलवाले, कँटीले एवं दॅनीले श्रथवा कँगूरेदार होते हैं। फूल सुगंधियुक्त श्रीर हरे रंग के होते हैं। प्राय: बालों पर फूलों के सींके लगते हैं श्रीर फूल तथा फल गुच्झों में होते हैं। इसकी जता को जाफरी, टट्टी या मचान पर चढ़ा देते हैं। यह उसके सहारे फैलकर खूब फल देती है। परंतु इस देश के श्रंगूर उतने सुस्वादु नहीं होते जितने श्रफगानिस्तान श्रीर फारस प्रभृति प्रदेशों के होते हैं।

जहाँ पर दिन भर सूरज की भूप खूब तेजी से पड़ती हो, उस जगह की अपेजा जिस जगह संध्या के पहले कुछ छाया पहुँ चती हो, वहाँ इसको रोपण करना अच्छा होता है। इसके लिये हलकी और दुम्मट मिट्टीवाली ऊँची जमीन अच्छी होती है। उसको भली भांति जोत, मिट्टी को चुर करके और घासों को निकालकर खाद मिलानी चाहिए। पुराने गोबर के चूणे, सड़ी हुई खली, हड्डा के चूणे और शोरे आदि से बनी हुई लाद इसके छिये अच्छी होती है। सड़ी मछली भी अच्छी समम्मी जाती है। काँटी कलम अथवा दाबा कलम से इसके पौधे लगाए जाते हैं। बरसात के अंत में कुँ आर और कातिक के महीनों में छायादार जमीन पर क्यारी बनाकर मिट्टी में तरी का कुछ बालू मिलाकर उन कछमी पौधों को रोपना चाहिए। जिन जगहों पर पौधों को रोपना हो, वहाँ की मिट्टी एक हाथ गहरी खोदकर खाद और मिट्टी से दुरुस्त करके पौधों को रोपना चाहिए। पर खाद मिली हुई मिट्टी से गड़ढों को भरने के पहुले

गड्ढों में ईंटेां या खपड़ों का कुछ चूर्ण विछा देना उत्तम होता है। ऐसा करने से इनकी जड़ मिट्टी के श्रंदर श्रधिक दूर तक प्रवेश न करके जपर के हिस्सों में ही फैलती हैं, जिससे श्रधिक फल लगते हैं। बरसात में ऐसा उपाय करना चाहिए जिसमें इनकी जड़ों में पानी इकट्रा न होने पावे। पै। धों से जितनी शाखें निकल, उन्हें मचान पर चढ़ा देना चाहिए ग्रीर शाखा-प्रशाखाओं की परस्पर एक साथ सब्मिलित होने से रोकने के लिये डालिये। की समयानुसार हटाकर श्रलग श्रलग कर देना चाहिए। कातिक के सहीने में इसकी जड़ की मिट्टी खोद-कर प्रायः एक महीने तक जड़ों को खुली रहने देने से पत्ते स्वयं गिर जाते हैं। उसी समय शाखात्रों के। काटना-छाँटना चाहिए। एक ही शाखा-प्रशाखा में बार बार फल लगने देने से फल बड़े नहीं होने पाते थ्रीर पौधे भी जल्द खराब ही जाते हैं। बृचों में एक प्रकार के कीड़े लगते हैं जिससे सब के सब पौधे धीरे धीरे नष्ट हो जाते हैं। जब किसी वृत्त में ऐसे की है दिखाई पड़, तब उस वृत्त की समूल काटकर श्राग में जला देना श्रच्छा होता है। चित्र नं २ उस श्रंगूर का है जिसकी लता वाटिकाश्रों में देखी जाती है। इसके फल वैसे सुस्वाद नहीं होते जैसे परदेश से श्राए हुए फल होते हैं।

श्रफगानिस्तानश्रीर फारस श्रादि देशों के श्रंगूर श्रच्छे होते हैं। इनके सिवा काश्मीर में किशमिश, मुनका, हें।सानी श्रीर मस्का नामक कई जातियों के श्रंगूर उत्पन्न होते हैं। श्रीरंगावाद के श्रंगूर लाज श्रीर स्वादिष्ठ होते हैं। दें।जतावाद के श्रंगूर देश-देशांतरों में भेजे जाते हैं। इँगलैंड श्रीर फांस में भी बढ़िया श्रंगूर होते हैं, पर वे इतने के।मज होते हैं कि एक देश से दूसरे देश में के जाने से उनमें कुछ न कुछ श्रंतर हो ही जाता है। भारतवर्ष में सब जगह जलवायु समान नहीं है, इसिलये प्रत्येक स्थान के फलों में कुछ न कुछ भेद हुश्रा ही करता है।

श्रंगुर, किशमिश, दाख, मुनक्का श्रादि सब एक ही जाति की जताश्रों के फल हैं। कच्चे, पक्के, बीजहीन तथा छोटे, बड़े, सूखे श्रादि फलेंा के भेद से यह भिन्न भिन्न नामों से पुकारा जाता है जिनका उछेख उन उन नामों के श्रंतर्गत यथास्थान किया जायगा। इसके प्राय: स्खे ही फल श्रोषध के काम में श्राते हैं। वे स्निग्ध-कारक, संस्नन, मधुर, शीतल, स्वादिष्ठ तथा तृषा, शारीरिक उद्याता, कास, विदारी श्रोर चय रोग में गुणकारी होते हैं।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देश कचा श्रंगूर भारी, खट्टा तथा रक्तित के उत्पन्न करनेवाला श्रोर दाख से कम गुणवाला है।

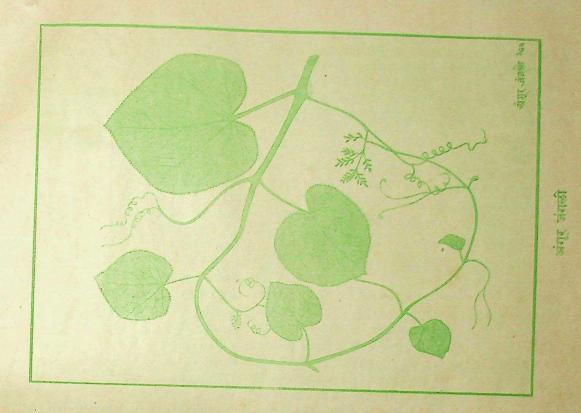
श्रंगूर के ताजे फल-रुधिर की पतला करनेवाले, छाती के रेगों में हितकारी, श्रत्यंत शीव्रता से पचनेवाले, रक्तशोधक तथा रुधिर की बढ़ानेवाले हैं। कच्चे फलें। का रस संकोचक होता है।

इसकी लकड़ी की भस्म—वस्ति की पथरी में गुणकारी तथा अर्श की स्जन दूर करनेवाली है।

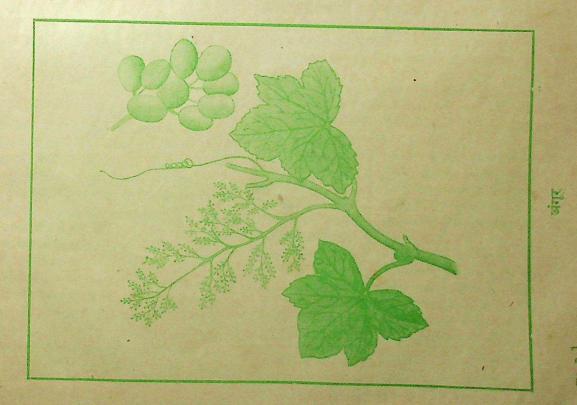
पत्ते -संकोचक तथा श्रतिसार-नाशक हैं।

श्रंगूर का शरवत-शीतल, चित्त की प्रसन्न करनेवाला, तृषा की रोकनेवाला एवं ज्वर के कारण उत्पन्न होनेवाली तृषा में लाभदायक है।

यूनानी मतानुसार गुण-देश-पाछ-पाकी, पकाशय में शीव्रता से उत्तरनेवाला, उत्तम रुधिर उत्पन्न करनेवाला, रक्तशोधक, शरीर की वृंहण-कारक, वातज मल की नष्ट करनेवाला, स्वच्छ-कारक, मल की पकानेवाला, पथ्य श्रीर मन की प्रसन्न करने-



ता क कमें ती । ने ह र ये। डिमेरे व । ति ह



वाळा है। शोष रोग में खतमी के साथ पकाकर लेप करना लाभदायक है। पका हुन्ना फल दूसरे दर्जे में गरमतर श्रीर कचा फळ पहले दज में शीतल श्रीर दूसरे में रुच हैं; स्निग्ध, श्रामाशय श्रीर श्लीहा के लिये हानिकारक तथा वातकारी है।

द्पेनाशक-सांठ श्रीर गुलकंद। प्रतिनिधि-मुनक्के के बीज।

प्रयोग-१. श्रंगूर सब प्रकारके फलों में उत्तम श्रीर निर्दोष फल है। यह सभी प्रकृतियों के मनुष्यों के श्रनुकूछ होता है। रोगी. नीराग, वलवान् , बालक, बुद्ध सबके लिये हितकारी है। यह नीरीम मनुष्यों के लिये उत्तम पाष्टिक खाद्य है श्रीर रीगी के लिये श्रत्यंत बलवद्धक पथ्य श्रयवा श्रीपधि है। जिन वड़े बड़े भयंकर श्रीर जटिल रागों में किसी प्रकार का श्रीर कोई खाने-पीने का पदार्थ नहीं दिया जाता, उनमें भी श्रंगूर या दाख दी जा सकती है। अंगूर कई प्रकार के होते हैं। उनमें से दो प्रकार के काले श्रीर तीन प्रकार के हरे श्रंशूर प्रधान हैं। काले श्रंगुरों में एक तो वह है जो जामुन के समान नीले रंग का श्रीर श्रधिक चमकदार हाता है। इसका प्रायः हवशी श्रंगुर कहते हैं। यह खान में बहुत सीठा हाता है। दूसरा काला श्रंगूर साधारण वैंगनी रंग का हाता हे श्रीर पक्रन पर बहुत मीठा हाता है; परन्तु हवशी श्रग्र सं किंचित् कम मीठा होता है, इसलिय हबशा श्रगूर से गुँगों में हीन भी समस्रा जाता है। पिटारी का श्रगूर सबस बड़ा, लंबा श्रोर श्रधिक मीठा होता है तथा हरे श्रंगुरों में सबसे श्रद्धा गिना जाता है। दूसरे मकार का हरा श्रंगुर, जिसका छिजका बहुत मोटा होता है त्रार जो प्रायः श्रा-कार में काले श्रंगूर के समान हाता है, बहुत मीठा नहीं होता त्रार उसमें श्रधिक रस भी नहीं हाता। इसलिये सब श्रगुरी में यह निकृष्ट गिना जाता है। हरे रंग का सबसे छे।टा अगुर बेदाना नाम से प्रसिद्ध हैं जो सब श्रंगुरों से कामल श्रीर स्वा-दिष्ठ होता है। यह स्वाद में कुछ मीठा और खट्टा होता है और इसमें बीज नहीं होते, इसलिये इसका बेदाना कहते ह। कर्चा श्रवस्था में सब प्रकार के श्रेगुर खट्ट श्रीर हरे रंग के होते हैं तथा पकने पर भीठे थार अपन श्रसली रंग पर श्रा जाते हैं। हरी जाति के श्रंगुर भी पककर दूसरे रंग के श्रथवा कुछ कुछ सफेद रंग के हा जात है। पके अगूरी की सुखाकर दाख या मुनका बनाया जाता है। कहते हैं कि श्रंगूरो की उनकी जता हा पर सुखाकर दाख या मुनका बनाते हैं; श्रीर जिन श्रंगुरी की दाख या मुनक्का बनता है, वे इस देश में बहुत कम त्राते हैं। काले त्रगुर का काला मुनका, पिटारी के सफेद त्रंगुर का भूरेरंग का मुनका श्रीर बेदाना श्रंगूर की किशमिश बनती ह।

श्रंगूर का इस देश में फल श्रांर श्रोपिध दा प्रकार से व्यव-हार होता है। फल रूप में पके थ्रीर ताजे श्रंगूर खाने के काम में आते हैं और श्रापधि के काम में प्रायः सूखे फता (दाख या मुनका) छाए जाते हैं।

२. अएडवृद्धि पर-इसके पत्ते पर घी चुपड़ आग पर खूब गरम करक पावीं पर बांधन से सूजन घट जाती ह।

श्चेंगूर, जंगली-[हि॰] जंगली श्चेंगूर। [वॅ॰] श्रमधीक। श्रमल्क । [द०] जगली श्रंगुर । [ते०] संबरा । शबराविल्ल । [मला॰] चबरावित्त । [मरा॰] रानद्राचा । केलिजान । [कें।॰] पाल कंडा। [सिंह०] टोवेल । रतबुळतवेळ । [लै०] Vitis Indica.

मध्यभारत, पश्चिम प्रायद्वीप श्रीर बंगाल तथा छंका की

नीची भूमि में यह पाया जाता है।

यह जता जाति की वनस्पति है। इसकी उंडी पतली होती है, पत्ते गोलाकार ४ से १० इंच के घेरे में दुतीले श्रथवा बारीक कँगरेदार किनारेवाले ग्रीर किंचित् नुकीले होते हैं। फूल हरा-पन लिए लाज रंग के होते और दें। इंच की बालों पर लगते हैं। फळ गोलाकार, किंचित् छंबे, बड़े मटर के समान थीर २-४ बीजवाले होते हैं।

प्रयोग-नारियल की गिरी के साथ इसकी जड़ का रस स्वच्छता-कारक होता तथा मृदु रेचन के लिये व्यवहार में श्राता है। कोंकण में स्वास्थ्य-रचा के लिये इसके काढ़े का उपयोग किया जाता है। यह संशोधक, रुधिर की शुद्ध करनेवाला तथा स्वास्थ्य की सुधारनेवाला है।

<mark>श्चंगूर राेवाह-[फा०] मकाेय । काकमाची । भटकाेश्चर्ग ।</mark> श्रंगैठा-[हि॰]} श्रँगीठी। वेारसी। इसांतिका। श्रंगैठी-[हि॰]}

श्रंगोजा-[फा॰] हिंगु। हाग।

श्रंगोक्ता-[फा०] १. हिंगु। हींग। २. कळगा घास। राजगिर। श्रेवरा हिंद्-[फा॰] जपापुष्प । श्रड्हुल । अधुजेह-लरी। [फा॰] हींग। हिंगू।

श्रांत्रग्रंथिक-[सं॰] पीपलामृत । पिप्पत्तीमृत । पीपरामृत्र ।

श्रांत्रेजिहिक-[सं०] श्रेंब्रिनामक-[सं०] > दौना। दमनक। श्रंत्रिनामन्-[सं०] 🕽

श्राव्याणका-सिं। श्रांबेपणी-[स॰] श्रांत्रवला-[सं०] पिठवन । पृश्निपणी । पिठोना । श्रविवाल्ल-[सं०] दाला। श्रंत्रिवल्लिका-[सं०]

श्रेविवल्ली-[सं॰] त्र्रांघ्रस्कंद्-[सं॰]} पाँव की घुट्टी । गुरुक । त्र्रांघ्रस्कंध-[सं॰]}

श्रॅचार-[हि॰] संधान। श्रचार। श्रजक-[सं०] श्रांख। नेत्र।

श्रंजदाँ-[यू॰] े श्रंगदा । इसका फारसी में 'शिसाल-श्रेजदाँ रूमो-[यू॰] | यूस" कहते ह । यह एक यूनानी दवा श्रंजदाँ वि } [यू॰] या विलायती बूटी है और घास की जाति की है। इसका रंग काला या श्रंजदान-[यू॰] हरा अथवा सुख श्रीर सफेदी छिए या श्रंजदान रूमी-[यू॰] | पीला होता है। किंतु एक हकीम के श्रंजदान वि- | [यू॰] | मत संयह एक काटदार वृत्र का गाद लायती | है। पर वास्तव में श्रंजदी एक वास ही है। यह स्वाद में तीक्ष्ण श्रीर गंधयुक्त होता है। यह घास चार प्रकार की हाती है। एक के पत्ते सैांफ के समान, दूसरे के इरकपे वां के समान आर तासर के जतून के पत्ते के समान होते हैं। चौथी श्रंजदां वह ह जिसका उल्लेख पहले हो चुका है।

यूनानी मतानुसार गुण-देाष-दूसरे दर्जे में गरम श्रीर रुच, शायनाशक, खच्छताप्रद, मलशोधक, मल श्रीर श्रातंव-प्रवर्तक, रोधउद्घाटक, पनवाशय श्रार श्रोज का बलकारक तथा श्रांत-रिक पीड़ा का दूर करनेवाली ह। गभ न रहने के लिये ऋतुधर्म के बाद एक सप्ताह तक सेवन करना चाहिए। यकृत् और वस्ति तथा आत के रोगी एवं उच्चा प्रकृतिवालें। को हानिकारक हैं। दर्पनाशक-जरिशक और कतीरा।

प्रतिनिधि-राई।

मात्रा-दे। मारो।
श्रंजन-[सं०] १. सुरमा। स्रोतोंजन। सुरमा। २. रसीत।
रसांजन। रसवत। ३. छिपकछी। गृहगोधा। ४. श्रंजन वृच।
[हि०] श्रंजन। [मरा०] छिंव। लिंबा। [गु० मु०] श्रंजन।
[मु०] याछकी। लेखिदे। [मा०] श्रंजन वृच। [ते०] श्रछि
श्राकु। श्रछि चेट्टु। [द्रा०] काशामरं। [क०] छिंव टोली।
[ता०] कपंपु बुचेड्डी। कसरी चड्डी। कशरम। [ला०] छिंवा
टोली। [मला०] कशवा। ले० Memecylon edule।
[श्रं०] The iron wood tree.

इसकी काड़ी अथवा छोटा सुहावना वृच होता है। यह पूरवी प्रायद्वीप और सीलोन में तथा महावल श्वर एवं घाट में अधिकता से पाया जाता है। यह वृच दिचिए केंकिए में कम मिलता ह। इसकी छाल पतली, सोसली आर हलके खाकी रंग की होती ह। लकड़ी खाकी रंग की और हलकी किंतु हढ़ होती है। पत्ते १॥ से ३॥ इंच तक लंबे, चोड़े आर नुकील हाते हैं। पूल नीले, चमकीले, एक इंच के घेरे में गोलाकार काछा पन लिए तथा अष्टमांश इंच तक चोड़े मुखवाले होते हैं। गुण तथा प्रयोग-इसकी जड़ और पत्ते आपिध-प्रयोग में आते हैं। पत्ते शीतळ, संकोचक, स्वच्छताकारक तथा सोम रोग और स्वाक में गुणकारों होते हैं। खरळ किए हुए पत्ते का काड़ा या फाट देना चाहिए। इसका हम लोशन क रूप में व्यवहार में आता है। केंकण में सम भाग इसकी छाल, नारियल को गरा, अजवायन और काली मिच क चूर्ण को कपड़ में बांधकर पेटली बनाकर मरोड़ पर सेंक करते ह अथवा पासकर लेप करते है।

1. मासिक धर्म के समय श्रधिक रुधिर श्रान पर इसकी जड़ का काढ़ा लाभकारी समस्ता जाता है। २. रवेत प्रदर में पत्ता की पीसकर तथा छानकर पिलाना चाहिए। ३. नत्रराग में इसके काढ़े या फीट सं श्रांख धीना गुणकारी है। ४. मूत्रकृच्छ म पत्तों का काढ़ा पिलान से लाभ होता ह। ४. चीट का सूजन श्रीर पीड़ा मिटाने का इसकी छाल, नारियल की गिरी, अज-वायन, वन हलदी श्रार काली मर्च बरावर पीसकर गरम करके लेप करना चाहिए।

श्रंजनक्कल-[हा॰] सुरमा। स्रोतॉजन। श्रंजनकेशी-[सं॰] १. नर्खा। नखा २. निल्का। विद्वम लता। श्रजनकेशिका-[सं॰] १. नर्खा। इट्टविलासिनी (गंध द्रव्य)। २. निल्का। विद्वम लता।

र. नीलका । विद्वम छता ।

ग्रंजनत्रय-[सं॰] } त्रिग्रंजन । तीन ग्रंजन (पुष्पांजन,
ग्रजन । त्रतय-[सं॰] } कालांजन ग्रार रसांजन)।
ग्रंजन दकल्लु-[क॰] सुरमा । स्रोतोंजन ।
ग्रंजनमु-[तं॰] } ग्रंजन वृष्ठ । छिंच ।
ग्रंजनसुन् । सं॰] दा ग्रंजन (स्रोतोंजन ग्रीर रसांजन)।
ग्रंजनसुन् । सं॰] दा ग्रंजन (स्रोतोंजन ग्रीर रसांजन)।
ग्रंजनादि गण्-[सं॰] सोवीरांजन, रसांजन, नागकेशर, फूल
प्रियंगु, नीलायल, खस, निलका, मधुक ग्रार पुन्नाग।
ग्रंजनाधिका-[सं॰] काली कपास। कालांजनी ।
ग्रंजनिक-[सं॰] काली कपास। कुष्णकापीस। कालांजनी।

ग्रंजनी-[सं०] १.कुटकी। कटुका। २. काली कपास। काळांजनी। ग्रंजरा-[का०] शिरियारी। सुनिषण्यक। गुरुवा शाक। ग्रंजरी-[क०] ग्रंजीर । काकोढुंबरिका। ग्रंजरूत-[का०] लाई। कुंजद। ग्रंजळक-[का०] जंगली श्रमरूद के बीज। इसकी श्ररबी में 'वाळज' कहते हैं।

श्रंजिलि-[सं०] १. कर्लिंगमान तेाल परिमाण । २. प्रसृति या ३२ तोले की तील ।

श्रंजिका–[सं॰] बजालू । बजावंती । श्रंजिकारका–[सं॰] १. बजालू । छजावंती । छुई सुई । २. वराह-क्रांता । वैरी शाक ।

श्रंजिली−[सं॰] लजालु । लजावंती । श्रंजवार−[फा॰ पं॰] श्रजुवार । श्रंगवार । श्रंजीर−[ने॰] श्रयार । श्रंगियार |

[सं०] ग्रंजीर । मंजुल । काकोढुं बरिका फल । [हि०] ग्रंजीर । गृलर । खबार । ग्रंजीर । वेह । वेह । वि० । ग्रंजीर । पेयारा । बढ़ पेयारा । [क०] मेडिपंडु । [ते०] मेडिपंडु । [ते०] मेडिपंडु । [का०] तीन । [पं०] फगवारा । काक । केकि । फड़ । इंज़र । फाग । फग । किमी । फगेरक । फागु । फोगा । खवारी । फेगरा । थापुर । जमीर । धूह । धुड़ी । दहोलिया । किमरी । [परा०] फगवरा । फगवारा । [ग्रफ०] ग्रंजीर । इंजर । [रा० पू०] कवरी । [म० प०] वीजरा । [ग्र०] पिपरी । पेपरि । [उ० मा०] फगवारा । थपुर । [ले०] Ficus Palmata. Syn: Ficus Carica [ग्रं०] Fig tree.

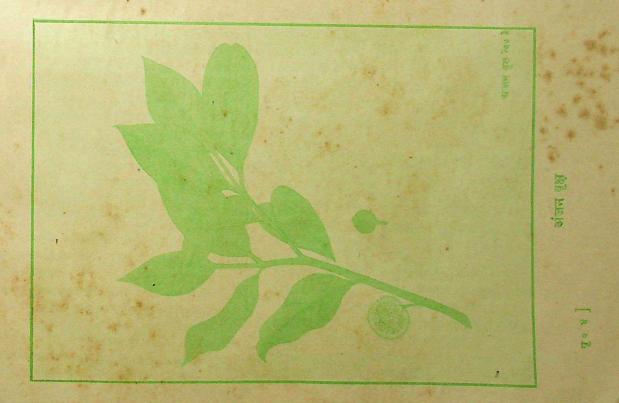
ग्रंजीर एक कानुली मेना है। इसका छोटा युच या माड़ होता है। छाज चिकनी, खाकी रंग की ग्रार लकड़ी सफेद होती है। यह युच १०-१२ फुट तक ऊँचा होता है। पत्ते छंबे, बैड़े श्रोर बीच में कटे हुए तथा खुरदर श्रोर रूखे होते हैं। फल गूलर के समान, श्राध से एक इंच के घेरे में गोलाकार, कच्चपन में हरे, पकने पर कुछ पीले या बैंगनी रंग के श्रीर श्रंदर से बहुत लाल होते हैं।

काबुल, श्रकगानिस्तान, फारस श्रादि देशों के फल मीठे होते हैं। भारतवर्ष मं भी इसका वृत्त लगाया जाता है। यह संयुक्त प्रदेश, पश्चिमोत्तर भारत, पजाब, सिंघ श्रार उससे प्रब की श्रोर, राजपूताना, श्रवध, मद्रास, बंबई, हिमालय तथा श्रावू पहाड़ पर पाया जाता है। यह दो प्रकार का होता है; एक श्राप ही श्राप जंगलों मं उत्पन्न होनवाला श्रीर दूसरा वह जिसे वाटिकाशों में लगाते हैं। जंगलों के पत्ते श्रीर फल बागी से छे।टे होते हैं। बोन से चार वर्ष बाद यह फलन लगता है श्रीर साल में दो बार फलता ह। पहली बार श्रापाढ़ श्रीर सावन में; दूसरी बार प्रस श्रीर माघ में। फल मीठा श्रीर स्वादिष्ठ होता है। श्रुच तथा डालियों में चीरा देने से इसके प्रत्येक श्रंग से दूध विकलता है। श्रंजीर का वृत्त प्रायः बीस वर्ष तक फलता है; फिर निर्जीव होकर सूख जाता है।

चित्र नं॰ ४ उस श्रंजीर का है जिसके फल रस्सी में गुथे हुए विदेश से श्राते हैं श्रीर बाजार में बिकते ह तथा चित्र नं॰ ४ उस श्रंजीर का है जिसका दृष यहाँ की वाटिकाश्रों में पाया जाता है।

मेटीरिया मेडिका के अनुसार गण-देश-इसके फलों में शकर का भाग श्रधिक रहता है तथा यह भीतर से लसीजा और चिकना होता है; इस कारण यह स्निग्धकारक श्रीर संस्नन





CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

माना जाता है। प्रायः केष्ठियद्भता थीर वस्ति के रोगों में पथ्य के रूप में व्यवहृत होता है। इसकी पुविटस भी बनाई जाती है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष-स्वादिष्ठ, रुचिकारी, पाक श्रीर रस में भारी, शीतल, रुधिर श्रीर पित्तविकार की शांत करनेवाला, वात-पित्तनाशक, कफ श्रीर श्रामवातकारक तथा नकसीर फूटने में हितकारी है।

यूनानी मता सुसार गुण-दोष-पहले दर्जे में गरम श्रोर दूसरे में तर है। मृदु, वातनाशक, कांतिकारक, श्रपस्मार, पचवात श्रोर कफज रेगां के। दूर करनेवाला, प्रकृति के लिये मृदुकारक, कम कम से रेचक तथा रोध, झीहा, शाथ, बहुसूत्र श्रीर वृक्क की कुशता नष्ट करनेवाला है। कास रेगा से इसका शरवत लाभदायक है। यकृत श्रीर श्रामाशय के लिये हानिकारक है।

द्पेनाराक-बादाम थीर सातिर । प्रतिनिधि-चिलगोजा थीर सुनक्का । मात्रा-४-७ दान ।

प्रयोग-१. इसके बीज श्रीरखिलके खाने से मंदाग्नि श्रीर श्रफरा होता ह। बालकों के श्वास मं शक्कर श्रीर सिरके में पीस-कर पिलाना चाहिए। २. शरीर की गर्मी मिटान के लिये खांड़ में मिलाकर खाना लाभदायक है। ३. घाव पकाने क लियं इसकी पुल्टिस बांधना अच्छा है। ४. सफेद कीढ़ के प्रारंभ में पत्तों का रस लगाना हितकारी है। १. सूखी खांसी में इसका सवन करना गुणकारी है। ६. शरीरपुष्टि मं (मोटा करन का) इसका सेवन करना लाभदायक है। ७. शोध पर इसको सिरके में भिगोकर खाना चाहिए। इ. मस्टुं के रोग में इसको पानी में उवालकर उस पानी से कुछी करना श्रच्छा है। ६. गुदा के फोड़े पर इसकी पुल्टिस बांधनी चाहिए। १०. रुधिर श्रीर मांस बढ़ाने के लिये इसका सुरव्वा सेवन करना श्रच्छा है। यह शीतल श्रीर सारक है। ३१. शरीर के कठार भाग पर पत्ती श्रथवा फलों की पुल्टिस लगानी चाहिए। १२. स्वाभाविक बद्ध-कोष्टता में ताजे फलें। का कुछ दिना तक लगातार सवन करना चाहिए। १३. चिंताजन्य शिरपीड़ा में वृत्त की छाल की भस्म सिरके या पानी में पीसकर लेप करने से पीड़ा शांत होती है। १४. दंतपीड़ा में इसके दूध या दूधिया रस में रूई भिगोकर दात के नीचे दबाने से लाभ हाता है। १४. फोड़े श्रीर गाँठों की सूजन पर इसका पीसकर जल में उवालकर गुनगुना लेप करना चाहिए। १६, दूध अथवा रुधिर का जमाव मिटान के लिये इसकी लकड़ी की राख को पानी में घोलकर स्वच्छ जल निधारकर फिर उस जल में दूसरी राख घोलकर जल निधारे। सात बार इस प्रकार निथारा हुन्रा जल पिलाने से बहुत लाभ होता हैं।

श्रंजीर त्रादम—[का॰] गूलर। उढुंबर।
श्रंजीर दश्ती—[का॰] केट्सर। काकोढुंबरिका। कीटाइसर।
श्रंजीर दस्ती—[का॰] केट्सर। काकोढुंबरिका। कीटाइसर।
श्रंजीर बेळ—[हि॰] गंडमाला। कंटमाला रेगा।
श्रंजीरी—[हि॰] श्रंजीर। काकोढुंबरिका।
श्रंजीरे त्रादम—[का॰] गूलर। उढुंबर।
श्रंजीरे दश्ती—[का॰] केट्सर। काकोढुंबरिका। कोटाइसर।
श्रंजीरे दस्ती—[का॰] अंजवार। श्रंजवार। [पं॰] श्रंजवार। विश्रंजीर—[का॰] लारी। मसल्जन।

लेo-Polygonum Viviparum. Syn: Polygonum Bistora.

यह हिमालय पहाड़ की नीची थ्रीर ऊँची चेाटियों पर कारमीर से सिकम तक पाया जाता है।

यह चुप जाति की वनैषिधि हैं। इसके उंठल ४ से १२ इंच तक ऊँचे, पतले थोर सीधे होते हैं। जड़वाली उंडी अँगुटे के वरावर मोटी होती हैं। जड़ के पत्त बड़े, किंचित श्रंडाकार थार १ से ६ इंच तक के घेरे में होते हैं; किंतु ऊपर के पत्त छंबे श्रार पतले होते हैं। फूलवाली उंडी १ से ४ इंच तक छंबी, सीधी थार पतली होती है। फूछ लाल रंग के होते हैं थार फल छोटे-छोटे तथा किंचित् त्रिकाेणाकार होते हैं।

कुछ लोग कहते हैं कि इसका चुप ४-६ फुट ऊँचा होता है। इसकी जड़ श्रोपिय के काम में श्राती है। यह देखने में लाल रंग की श्रोर स्वाद में फीकी होती है।

मेटीरिया मेडिका के अनुसार गुण-देाप-इसकी जड़ संकोचक तथा शाय में लाभकारा है। इसका काढ़ा साम रोग में दिया जाता है। इसका कुल्खा मसूड़े की स्जन श्रीर गत्ने के धाव में लाभकारी है। इससे घाव धोने से वह स्वच्छ होता है। विषम ज्वर में इसका जितियाना के साथ सेवन कराते हैं। यह श्रतिसार श्रीर रुधिर-साव के प्रवाह को रोकनेवाखा है।

यूनानी सतानुसार गुण-देाप-यह तीसरे दर्जे में शीतल श्रीर रुच है। संपूण श्रवयवा करुधिर तथा फेफड़े श्रीर वचस्थल के रुधिर को रोधक है। पित्त श्रीर रुधिर के दाह की नाश करनेवाला, शर्श के रुधिर, मरोड़, वमन श्रीर जीर्णातिसार का वर्ड्क तथा नजले का रोधक है। शीत प्रकृतिवाले के हानिकारक है।

द्र्पनाशक-सांठ।

प्रतिनिधि-जरिश्क श्रीर गिले श्ररमनी। मात्रा-४ सं ६ माशे तक।

त्र्रंटी-[हि॰] एरंड । श्रंडी । रेंडी । श्ररंड । श्रंड-[सं॰] १. कस्तूरी । मृगमद । मुश्क । २. श्रंडा । डिंब । ३. एरंड । रेंडी । श्ररंड । ४. श्रंडकोष । खुसिया ।

श्रंडक-[सं॰] श्रंडकोष । श्रांड । श्रंडकाकड़ी-[६ँ॰]) चकोतरा नींबू । मधुकर्कटी । पपई । एक श्रंडकाकरो-[६ँ॰]) प्रकार का विजारा । श्रंडकोटरपुष्पा-[सं॰]) वस्तांत्री । फंजी । विधारा-मेद । श्रंडकोटरपुष्पी-[सं॰])

ग्रंडकोष-[सं॰] } श्रंडक । सुसिया । ग्रंडकोषक-[सं॰] } श्रंडक । सुसिया । ग्रंड खरवूज-[हिं॰] } प्रणीता । बातकंभ कर

श्रंड खरवूज-[हि॰]) पपीता। वातकुंभ फला। रड़मेवा। शंड खरवूजा-[हि॰]) कंड्य-[स॰] गेहैं। गोधम।

श्रंडग-[स॰] गेहूँ। गोधूम। श्रंडगज-[सं∘] चकवँद् । चकमई।

श्रीडज-[सं०] १. मञ्जूली । मत्स्य । २. पद्मी । चिढ्या । ३. कस्तूरी । मृगनाभि । सुरक ।

श्रंडजा-[सं॰] १. साँप। सर्प। २. मञ्जूली। मीन। ३. पृत्ती। चिद्धिया। ४. कस्तूरी। मृगमद। मुश्क।

श्रंडवृद्धि-[सं॰] के।पवृद्धि । [फा॰] श्रावनजूल । वरम उह स्नासया । श्रं॰ Hydrocele.

जिस रोग में वायु अपन कारणों से कुपित होकर नीचे की गमन करती है, स्जन और शूल उत्पन्न करती है, कोख में विचरण करती हुई श्रंडकीप श्रार वंचण में से श्रंड में प्राप्त होकर कीप की बहानेवाली धमनियों की दूापत करके श्रंड की बढ़ाता है, उसकी "श्रंडवृद्धि" कहते हैं। यह रोग बातादि देापों से तीन प्रकार का तथा रक्तज, मेदज, मूत्रज श्रीर श्रंत्रज हुन भेदी से सात प्रकार का होता है।

इस रोग की नाशक श्रोपियाँ श्रोर उनकी प्रयोग संख्याएँ-श्चेंगृर नं० २ । श्चद्रक नं० २३ । श्चपराजिता नीली नं० १६ । श्रमजतास नं० १६। श्ररनी नं० १६। श्राक लाल नं० ३०। प्रंड नं॰ १७। प्रंड का तल नं० ११। कच्रुनं० १४। कछुत्रा ने॰ ४। कपास के बाज नं॰ १६। कमीला नं॰ ८। करंज नं॰ ४। करनपात नं० १। गूगल नं० १४। जयन्ती नं० ६, १८। जीरा सफेद नं० २८। ढाकनं० १४। ढाकके फूल नं० ४, १०। तमाखू नं॰ १२, १४, २८। त्रिफता नं॰ ३। दाखनं०३। दारु इलदी नं १०। देवदारु नं १६। धतूरा काला नं १३। वच नं॰ १०, ३८। बरियार नं॰ २२। बारयार बड़ा नं॰ ७। बाल नं० १६। भाग नं० १६, २३। भारंगी नं० ६। महस्रा नं० ४। मसूर नं॰ ६। महुश्रा नं॰ ६, ११। माजूफल नं॰ ११। मेन-फल नं । बता करज नं । १४, १४, १६। शिलारस नं ३। समुद्रफञ्च नं० ८१। सरफोका नं० २१। सुहागः नं०१३। हरीतका न० २६। हरातकी चतकी काली नं २, ३। हलदी नं० १८।

ग्रेडहरूती-[सं०] चकवँड़ । चक्रमइ । पवार । ग्रेडा-[हि०] ग्रडा । [स०] डिंब । [श०] Egg । वची की दूच न पितानवाले भादा जतुआ क गभाशय स उत्पन्न गाल पिंड जिसमें से पीछ स उस जीव के अनुरूप बचा बनकर निकटता है ।

श्रायुवंद मतानुसार गुण-देश-पित्त्यों के श्रंडे पाक में मधुर, बळकारी, वातनाशक, मधुर, श्रत्यत वीय्य-वर्द्धक श्रोर भारी होते ह, पर श्राधक स्निग्ध नहीं होते।

मञ्जूलियों के श्रंडे-श्रत्यंत पुष्टिकारक, बल-बद्धेक, स्निग्ध-कारक, लघु, कफकारी, मेद का बढ़ानवाले, ग्लानि उत्पन्न करनेवाले श्रार प्रमेह का नाश करनेवाले होते हैं।

श्रंडा-[उ॰] १. श्रामला। श्रामलकी। श्रांवला। २. [हि॰] श्रंडकोष। बेंजा।

श्रंडा, सुर्गी का-[हि॰] सुर्गी का श्रंद्वा।[स॰] कुनकुटांड । कुनकटवर्भ।

यूनानी मतानुसार गुण-देष-इसके अंदरकी जदीं गर्मश्रीर स्नाधु का जाइनवाला हाती है तथा इसका सफेदी तीसरे दज म ठढां श्रीर तर हाती है। श्रध-उवाला श्रंडा रस का सम्यक् मकार सं पकानवाला, श्रत्याहार, सूक्ष्म मलोत्पादक, हृद्य, मास्तद्क, शरार श्रार श्रोज का वल दनवाला, उद्या, प्रतिश्याय का वचस्थल में रोकनवाला, वचस्थल का खुरखुराहट श्रार पकाश्य के मुख से गरते हुए रुधिर का राकनवाला श्रार वालको का दूध के स्थान में दूध के समान गुणकारी है। जदी की चिकनाई श्राज का बल देनेवाली श्रार कशों का श्रिषक तथा उत्पन्न करनवाली होती है। इसके छिलक का भस्म श्रीध्रपतन श्रोर खियो के श्वेत प्रदर तथा उससे उत्पन्न हुई दुर्वलता नष्ट करनेवाली, वचस्थल के रोगों का दूर करनेवाली श्रीर श्राज का गुणकारी होता है। सुगी का श्रेडा श्रामाश्य के लिये हानिकारक तथा पथरी श्रीर गुलम उत्पन्न करनवाला होता है।

ग्रंडाळी-[सं०] भुई श्रांवता । भुम्यामत्तकी ।

ग्रंडालु-[सं०] मड्जी। मत्स्य।
ग्रंडिका-[सं०] ताल परिमाण ४, यव।
ग्रंडिका-[सं०] योनिरोग-विशप।
ग्रंडा-[हि०] एरंड। ग्रंड। रड़ी।
ग्रंडुकु-[कु०ते०] हुँद्रु । कुन्दुरुक। शहकी निर्यास।
ग्रंडुग-[कु०ते०] सलई वृच का गोंद। गुंदवरेसा।
ग्रंडुग पिसुलु-[ते०]
ग्रंतक-[स०] कचनार। कांचनार वृच।
ग्रंतक-[हि०] श्रांतमूल। श्रंतामल।
[स०] श्रतमल। सलान्त। लोमश।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देाष-वमनकारक, पसीना छानवाला श्रीर कफ का निकाछनेवाछा ह । पसीना छाने श्रीर कफ निकाछने के लिये सूखे पत्तों की मात्रा २ रत्ती श्रीर वसन के लिये १ माशा है।

श्रंतमारा-[वं०] रगलता। मराइफली।

अतर्ध्गा-[द॰], जलकुंभो। कुंभिका।

श्रंतर दामर-[ते॰] १. जलकुंभी । कुंभिका । २. रासन । स्ता । रायसन । श्रंतर दामर ।

श्चेतरवेळ- कां॰] श्रमरवल्ली । श्राकाशबेळ । श्रमरवेल । श्वमरलना ।

श्रंतरुहा-[सं०] दूव सफेद । सफेद दूव । श्वेत दूर्वा ।

त्रतर इतमरा-[तं॰] र्जलकुंभी। कुंभिका। श्रेतदामर-[तं॰]

श्चंतमेळ-[सं॰] श्रंतमत्त । मलांत । श्चर्तमेहानाद-[सं॰] शंख।

श्रेतवृद्धि-[सं०] श्रंत्रवृद्धि (रोग)।

त्र्यतवंग ज्वर्—[सं०] ज्वर रोग का एक भेद जिसमें श्रिषक श्रंत-दोह हो, प्यास हो, प्रलाप हो, श्वास हा, श्रम हो, संधि श्रोर हड्डियों में श्रूल हो, पसीना न श्रावे श्रीर श्रधोवायु तथा मल श्रन्छी तरह बाहर न निकले।

श्रंतस्नेहफला-[सं०] कंटकारी सफेद। श्वेत कंटकारी। सफेद रंगना।

त्रांतका-[सं॰] सातला । थूहर भेद । स्रातश-[ते॰] श्रोंगा । श्रपामार्ग ।

त्रतामळ-[वँ०] } श्रेतामूळ-[वँ०]} श्रातमूल । श्रेतमूल ।

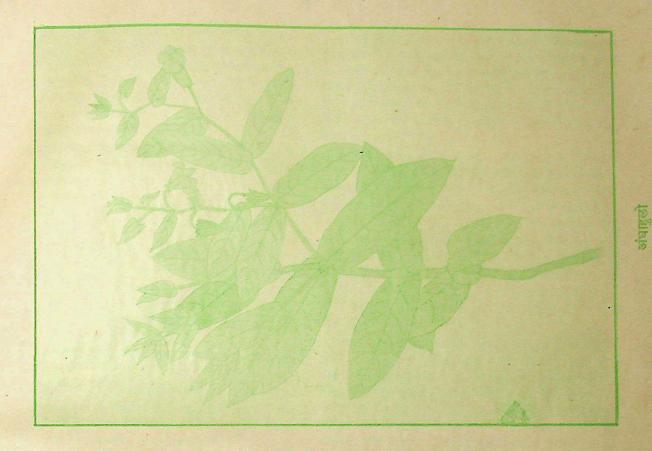
श्रंत्य-[सं०] मोथा। मुस्तक।

श्रीत्यपुष्पा-[सं०] धातकी । धव । धवई।

श्चेत्रवासिका-[सं॰] पाताल गरुड़ी । महिपवल्ली । जलजमनी ।

श्रेत्रवल्ला-[सं॰] सामलता । सामवल्ली ।

द्रंत्रवृद्धि—[सं०] श्रांतों का बढ़कर उतरना। [श्र०] फितक उल् श्रमश्राया। [श्रं० लै०] Hernia. वात का कुपित करन-वाले श्राहार के भचण करने से, शीतल जल में धुसकर स्नान करने से, श्राए हुए मलमूत्रादिक के वेग की धारण करने या रोकने स, नहीं श्राए हुए मलमूत्रादि की बलपूर्वक निकालने से, भारी बोम्म ढोने स, श्रद्यंत मार्ग चलने से, टेढ़े-सीधे हांकर चलने से, बलवान् से कुश्ती लड़ने से, विषम धनुष के चढ़ाने से तथा वात के कुापत करनवाल श्रन्य कारणों से वायु कुपित होकर छोटी श्रांतों के श्रवयवों में प्रवेश कर उस देश की बिगाइ-





कर रहने के स्थान से उनके। नीचे ले जाकर वंचण संधि में स्थित होकर उस स्थान में गाँठ के समान स्जन उत्पन्न करती है। फिर वहाँ ग्रंथि रूप से स्थित होकर कुछ काल में जब फल कोपों में प्राप्त होता है, तब पेट में श्रफरा, श्रूल श्रीर मलमृत्रादि के वेग की रोककर श्रंडचृद्धि करता है। हाथ से दबाने से यह गुड़-गुड़ शब्द करती हुई पेट में चली जाती है श्रीर छोड़ देने से श्रंडकोपों की फुलाकर उसी में श्रा जाती है।

तद्रागनाशक श्राषधि प्रयोग श्रीर नं०-एरंड का तेल

नं ० ६ । केचुया नं ० १ । श्रंजी-[सं] विधारा । यृद्धदारु ।

श्रंत:कुटिल-[सं०] शंख ।

श्चंतःकाटरपुष्पिका-[सं०]) वस्तांत्री । फंजी । नील बीना । श्चंतःकाटरपुष्पी-[सं०] }

श्रंतःसत्वा-[सं०] भिलावी । भहातक ।

श्रॅंदरसा-[हिं०] एक प्रकार की मिटाई। श्रनरसा। धुले हुए चावलों के श्राटे में घी का मोयन देकर श्रीर उसे सानकर गुड़ के पानी में उवालकर छे।टी छे।टी ले।ई बनाकर पूरी के समान बेलते श्रीर एक श्रीर पे।स्त के दाने लगाकर घी में पका लेते हैं। इसी के। श्रॅंदरसा कहते हैं।

गुए-रुचिकारी, बृष्य, स्निग्ध तथा शीतल श्रीर श्रितसार-

दूसरी किया-धुले हुए चावलों के तीन सेर थाटे में एक सेर मिस्री मिलाकर दही में भली भांति मिलाते थ्रीर एक दिन रख छोड़ते हैं। दूसरे दिन डपर्युक्त प्रकार से लोई बनाकर बेलकर एक थ्रोर सफेद तिल लगाकर घी में तल लेते हैं।

गुगा-यह बलकारी, कफ तथा वात का नाशक, हृदय की

बलकारी, श्रति शीतल श्रीर पुष्टिकारक है।

तीसरी किया-धुले हुए चावलों के श्राटे में सम भाग मिस्री मिलाकर पानी में सानकर उक्त विधि से पकाते हैं।

गुण-वृष्य, हृदयशोधक, धातुवधक, पित्तनाशक, भारी, रुचिकारी, तृप्तिदायक तथा पुष्टि, कांति श्रीर बल देनेवाला है। श्रद्छोप-[श्र॰] बुळबुल। हजारदास्ती।

श्रंदुग-[ते॰] । शालई। शछकी वृत्त । सलई का पेड़ । श्रंदुगु-[ते॰]

श्रंध-[सं॰] १. नेत्रराग। तिमिरि राग। मंद दृष्टि। २. भात। भक्त।

श्रंधक-[सं॰] तुंबह । तुंबह । सै।रभ । श्रंधकाक-[सं॰] सुगीबी । जलकाक । श्रंधपुष्पी-[सं॰] श्रंधाहुली । श्रधःपुष्पी । श्रंधपुरुवा-[सं॰] सामग्रह रेगा ।

श्रंधपूतना-[सं०] बालग्रह रोग।

श्रंधमूषिका-[सं०] देवदाली। बन्दाल। सोनकसार।

श्रंधरी हिंद-[फा॰] श्रोइहुत । श्रोड़ पुष्प । गुड़हत । श्रंधपुष्प । गुड़हत । श्रंधपुष्प । रोमालु । गोलोमी । श्रधे । सुखा । धेनु जिह्ना । श्रधः पुष्प इत्यादि । [हि॰] श्रांधाहुली । श्रांधाफूली । गुठौली । क्रांगकूली । वि॰ विक्ता । मिंग । पाथरी । [गु॰] वैंधाफुली । क्रांगकूली । कि॰ विक्ता । मिंग । मिंग । तिहान कल्प । [पं॰] केरी बूटी। कटमंडू । [सिं॰] गाश्रोजर्वा । [संग्र॰] हितमुदिया । हेतमुदिया । कु॰] कटमंडी । क्रांग रतीसुर्व । नीलकराई । [ता॰] कज्यई तुंबई । ति॰] गुसवा गुन्ति । लिं॰] Trichodesma Indicum. Syn: Borago Indica.

श्रंघाहुली देा प्रकार की होती है। एक का चुप कुछ बड़ा श्रोर पत्ते चोड़े तथा दूसरे का चुप कुछ छोटा श्रोर पत्ते सँकरे तथा लंबे होते हैं। चित्र नं० ७ बड़ी श्रंघाहुली का है जिसका उल्लेख बनापधि-प्रकाश में किया गया है। इसका चुप गोरख-पुर से प्राप्त करके चित्र तैयार किया गया है। यह पश्चिमी मांतों में तो श्रिषक पाई जाती है, किन्तु प्रव की श्रोर देखने में नहीं श्राती।

चित्र नं ० ८ उस श्रंघाहुली (ह्रोटी श्रंघाहुली) का है जिसकी पारचात्य चिकित्सकों ने प्राद्ध किया है। यह चित्र मेटीरिया मेडिका से लिया गया है। यह भारतवर्ष के प्रायः सब प्रांतों में पाई जाती है; किंतु वंगाल में बहुत कम देखने में श्राती है।

यह जुप जाति की वनस्पति सीधी श्रीर रेामयुक्त होती है। डंडी सीधी या तिरछी १८ इंच तक ऊँची होती है। सब पत्ते समवर्ती, किंतु ऊपरवाले विषमवर्ती, १ से ४ इंच तक छंबे श्रीर श्रनीदार होते हैं। फूल पहले फीके नीले रंग के, फिर सफेदी मायछ हो जाते हैं। फल छोटे छाटे खुरदरे, त्रिकीगा-कार, पकने पर सफेद या नीलापन लिए होते हैं। फूछ श्रीर फछ सूमि की श्रीर सुके रहते हैं।

यह जुप जाति की वनै।पिध प्रायः बरसात के दिनें। में खेतें। श्रीर पथरीली तथा रेतीली भूमि में श्रिधक पाई जाती है। इसका जुप दें। फुट तक ऊँचा होता है। पने लंबे, बीच में किंचित श्रंडाकार श्रथवा गोलाई लिए हुए होते हैं। फूल फीका श्रासमानी रंग का नीचे के। कुका हुश्रा होता है, इसी कारण इसका नाम श्रेंधाफूली (श्रधःपुष्पी) है। इसका समस्त जुप रेशशों से भरा रहता है, इसिलए इसका नाम "रेामालु" भी है। इसकी जड़ भूरी श्रथवा काले रंग की, जपर की छाल पतली श्रीर भीतर की रस-भरी सफेद होती है। इसका जुप सूखने पर काला हो जाता है।

चित्र नं० ६ भी इसी श्रंघाहुली का है। इसका चुप विहार प्रांत से प्राप्त करके चित्र बनाया गया है। इसका चुप, पत्त, फूल, फलादि उक्त श्रंघाहुली से छे।टे होते हैं। संभवतः इसका कारण मिटी श्रौर जल-वायु है। यहाँ देहातों में इसको गुठौली कहते हैं।

मेटीरिया मेडिका के मतानुसार गुण-देाप-इसकी जड़ श्रीर पत्ते श्रोषधि-प्रयोग में श्राते हैं। इसकी सपैविषनाशक शक्ति प्रसिद्ध है। यह संशोधक होती है श्रीर इसके पत्तों का रस स्व-च्छताकारक है। दिल्ला में यह छुप के मिलताकारक पुल्टिस के समान व्यवहार में श्राता है। छे।टा नागपुर में विशेषकर संधि की सूजनपर इसकी जड़ पीसकर लगाते हैं।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण दोष-नेत्रें। की हितकारी श्रीर मृढ़ गर्भ की श्रपकर्षण करनेवाली है।

प्रयोग-१. फेड़ों पर पत्तों को पीयकर पुल्टिस बाँधनी चाहिए।
२. सपंविष पर पत्तों का काढ़ा मिर्च डालकर पिजाना जामकारी
है। ३. प्रमेह में फूलों को मिस्ती के साथ सेवन करने से जाभ
होता है। ४. कास श्रीर श्वास में बीजों को मधु में पीसकर
गोली बनाकर सेवन करना चाहिए। ४. यदि बैंज के कंधे पक
गए हों श्रीर उनमें कीड़े पढ़ गए हों तो मंगलवार को इसकी
जड़ जाकर सींगों में बाँधने से कीड़े मर जाते हैं। ६. सिंगरफ
भस्म करने के लिये इसके पंचांग की जागदी में शुद्ध किया हुआ
सिंगरफ रखकर कपड़ा जपेटकर पाँच सेर उपजों की श्रीन देने

से उत्तम लाल रंग की भस्म तैयार होती है। यह भस्म श्रनु-पान-भेद से श्रनेक रोगों के। नष्ट करनेवाली है।

[हि॰] २. अर्कपुष्पी। अर्कपुष्पिका। ३.[सं॰]तरवड। श्राहुल्य।

श्रंधाहेत्ती-[हि॰] श्रंधाहुती । श्रधःपुष्पी । श्रंधिका-[सं॰] सरसों । सर्पेप ।

श्रंधुल-[सं॰] सिरस । शिरीप वृत्त ।

श्रॅंधेरा के बीज-[हि॰] श्रॅंधेरे के बीज-[हि॰]

श्रंभ्र देश की सुपारी-[हि॰] सुपारी श्रंभ्र देश की। श्रांभ्रो-

श्रंपल् -[मला॰] कुमुद लाल । रक्तोत्पल । लाल कुमुद ।

श्चंपुलै-[ता०] श्रंबाडा । श्राम्नातक ।

श्रंबक-[सं॰] १. ताँबा। ताम्रधातु। २. मोलसिरी। वकुलवृत्त ।

श्रंवज-[अ०] थाम। श्राम्र।

श्रंबट-[मु॰] बायविडंग। विडंग।

श्रंबट वेल-[मरा०] श्रत्यम्भपणी । रामचना । इमिर्ती ।

श्रंबटेमर-[खा॰] श्रंबडा-[सु॰]

श्रंबत-[मु०] बायविडंग भेद । विडंग भेद ।

अवतः [तु॰] वावावद्वतं सद् । त्रवासः । युवरकः । युअकः । ३. [यू॰] थ्रंबरः । [सं॰] श्रग्निजारः । [य॰] य्रंबरं श्रशहव ।

यह एक महासुगंधित द्रन्य है जो देखने में कृष्ण वर्ण का श्रीर छूने में चिकना तथा स्वाद में कड़वा होता है। लोग कहते हैं कि यह एक समुद्री जीव की विष्ठा है श्रीर किसी के मत से एक वृच का गोंद है; किंतु कई श्राचार्थों ने सिद्ध किया है कि श्रंबर का संस्कृत नाम श्रीनजार है श्रथवा श्रीनजार श्रीर श्रंबर एक ही पदार्थ है। यह भारतीय महासागर श्रादि में छ्वावस्था में मिलता है तथा भारतीय समुद्र के निकटवर्जी महाद्वीपों में पाया जाता है; एवं हिंदुस्तान, श्रिका श्रीर बेजिल के श्रास पास के समुद्रों में श्रीर इनके किनारों के पास तरता हुश्रा मिलता है। यह मोम के समान, वर्ण में सफेद, धूसर, पीत श्रथवा काले रंग का होता है श्रीर रवेत पाषाण के समान कर्जुरित होता है। जो श्रंबर सफेदी लिए हुए कुछ पीले रंग का छोटेदार हो, वह उत्तम समक्ता जाता है। हरे श्रीर काले रंग का श्रच्छा नहीं होता। यह स्वाद में चरपरा, स्निग्ध श्रीर सुगंधित होता है।

कहते हैं कि श्रंबर ह्वंछ मछ्जी की श्रॅंतड़ियों में जमी हुई एक चीज है जो भारतवर्ष, श्रफ्रिका श्रीर ब्रंजिज के समुद्री किनारों पर बहती हुई पाई जाती है। ह्वंज का शिकार भी इसके लिये होता है। श्रंबर बहुत हजका श्रीर बहुत शीघ्र जजनेवाजा होता है तथा श्रांच दिखाते रहने से बिल्कुज भस्म होकर उड़ जाता है। इसका व्यवहार श्रोपिधयों में होने के कारण यह नीकाबार (कालेपानी का एक द्वीप) तथा भारतीय समुद्र के श्रीर श्रीर टापुश्रों से श्राता है। माचीन काल में श्ररव, यूनानी श्रीर रोमन छोग इसे भारतविष से जे जाते थे। इससे राजिसंहासन के सुगंधित किए जाने का उल्लेख जहाँगीर ने किया है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देाप-कटुरस, उच्णवीर्थ्य, बघुपाकी, पित्तकारी तथा कफ, वात, सिन्नपात श्रीर शूल का नाश करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण्-देष-दूसरे दर्जे में गरम श्रीर पहले में रच, प्राण्यच्या, तीनां शक्तियों की दृढ़ करनेवाला, प्रकृति को प्रसन्न करनेवाला, वास्तविक उच्याता श्रीर बाह्य तथा श्राभ्यं-तरिक इंद्रियों को पुष्ट करनेवाला, रोध-उद्घाटक, श्रोजप्रद तथा वृद्ध को श्रनुकूल, मस्तिष्क संबंधी रोग, हृदय रोग श्रीर यकुत् रोग का नाश करनेवाला एवं हृदय की व्याकुलता श्रीर महा-मारी का हरण करनेवाला है। विषयशक्ति की बढ़ाने श्रीर वाजीकरण के लिये लिंगेंदिय पर इसका लेप करना गुणकारी है। श्रांत श्रीर पित्त को हानिकारक है।

दर्पनाशक-बब्र का गोंद थीर कप्र। प्रतिनिधि-कस्तुरी थीर केसर।

मात्रा-१ से ३ रती।

प्रयोग-१. यह यूनानी ग्रोपधि-प्रयोग में श्रधिक व्यवहार में श्राता है। पुरुषार्थ ग्रोर मानसिक शक्तियों को बढ़ाने के लिये यह एक उत्तम ग्रोपधि है। २. कफज रोग में इसकी पान के बीड़े में रखकर खाने से लाभ होता है। ३. वाजीकरण के लिये सोने का वर्क, पीसा हुग्रा मोती श्रीर ग्रंबर मधु के साथ सेवन करने से फायदा होता है। ४. वातज रोग में इसकी लींग श्रीर जाय-फल के साथ सेवन करना चाहिए। ४. वातरोग में वातनाशक तेल में मिलाकर मालिश करने से श्रधिक लाभ होता है। ६. विष पर इसकी चृत में मिलाकर देना चाहिए। ७. उन्माद रोग

पर श्रीर स्मरण-शक्ति की बढ़ाने के लिये श्रंबर, ब्रह्मी श्रीर शंखपुष्पी की मधु में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। द. शीत श्रीर पसीना दूर करने के लिये श्रंबर, केसर, कस्तूरी श्रीर शुद्ध शिंगरफ की पान के रस में खरल करके गीलियाँ बनाकर सेवन करना चाहिए।

श्रंबर श्रशहव-[श्र॰] ग्रंबर (सुगंध-दृब्य)। श्रंबर कंद-[हि॰] ग्रंबर कंद । सकाकुल भेद । शालव भेद । [सं॰] सुधामूली भेद । [तै॰] Eulophia nuda.

यह हिमालय पहाड़ के गरम प्रांतों में नेपाल से पूरव की श्रोर, श्रासाम, खासिया पहाड़ श्रोर मैनपुर में तथा दक्खिन में

कोंकण से दिचिए की श्रोर पाया जाता है। श्रंबर कंद सालब मिस्री की जाति का कंद है। इसका गुल्म हलदी के समान होता है। पत्ते १० से १४ इंच तक लंबे, श्रनीदार श्रोर चैड़ाई में श्रनियमित होते हैं। फूल बड़े, हरे रंग के या कालापन लिए लाल रंग के होते हैं।

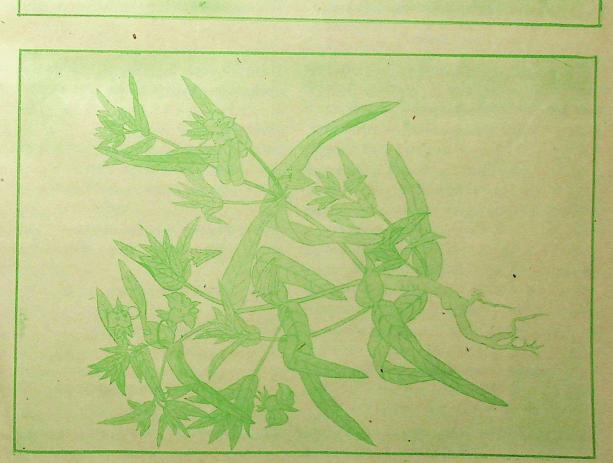
इसका कंद प्रयोग में श्राता है श्रीर सालब मिस्री की जगह व्यवहत होता है।

श्रंवरद-[सं०] कपास । कार्पासी ।

त्रंबर बेद-१. [यू०] श्रजदा। श्रजदा कबीर। यह एक यूनानी श्रीपिध इसी नाम से प्रसिद्ध है। इसकी श्ररबी में 'जादह' कहते हैं। रंग काला, पत्तियां हरी श्रीर सफेद तथा फूछ पीले होते हैं। इसका स्वाद कड़वा, तीव्र गंधयुक्त होता है। यह नदियों के किनारे होनेवाली एक प्रकार की घास है; इसकी डालियों से बाल के समान जटाएँ निकछकर लटकती रहती हैं।

यूनानी मतानुसार गुण-देष-रेचक. मूत्रल, रक्तशोधक, देाषों की मृदु करनेवाली, बुद्धिवर्द्धक, संपूर्ण श्रवयवें के रोध का उद्घाटक तथा उद्रकृमि, वात-विकार धीर विष का नाश करनेवाली एवं विच्छू के विष की शांत करनेवाली है। शिरपीड़ा उत्पन्नकारक और श्रामाशय की विकृत करनेवाली है।

द्पेनाशक-धनिया। प्रतिनिधि-पहाड़ी पुदीना। मात्रा-२ से ४ माशे तक।



```
२. श्रंजद्रा ।
श्रंबरबेल-[ मु॰ ] गिले।य। गुडुची।
श्रंबरा-[सं०] १. कपास। कार्पास वृत्त। २. [हि० केंडि]
  ग्रामड़ा। ग्रान्नातक।
श्रंवरिष-[ सं० ] श्रामड़ा।
श्रंबरी-[सं०] १. श्रामड़ा । श्रास्रातक । २. [द०] चूका शाक ।
  चुक्रिका। ३. [सं०] साचिका। सोइया। ४. [गारो०] त्र्यावला।
  श्रामलकी।
श्रंबरीय-[ तं० ] }
श्रंबरीप-[ तं० ] } श्रामड़ा । श्राम्रातक ।
श्रंबल-[ता०] १. कमल । पद्म । २. कुमुद् लाल । रक्तीत्पल ।
  लाल कुसुद्। ३. [ पं० ] श्रावला। श्रामलकी।
श्रंबलकुटा-[हिं०] विषांबिल । वृत्ताम्ल ।
श्रंवलिए-[ सं० ] चांगेरी । श्रंविलाना ।
श्चंबलाचेह् पिटे-[ ते॰ ] श्रामड़ा। श्रामातक।
श्रंवली-[ ४० प० ] श्रामड़ा । श्राम्रातक ।
र्श्रंबष्टका-[सं०] १. पाठा । पाढ़ी । २. भारंगी । ब्राह्मणयप्टिका ।
 बभनेठी । ३. चांगेरी । खटकल । तिपत्ती । ४. जूही । यृथिका ।
  ४. मेारशिखा । सयूरशिखा । ६. माचिका । मेाइया । साकुः
 रुंड। ७. श्रामड़ा। श्राम्रातक।
श्रंबष्टकी-[सं०] १. पाठा । पाढ़ी । २. भारंगी । बाह्मखयष्टी ।
 ३. चांगेरी । श्रंबिलोना । खटकला । ४. जूही । यूथिका । ४.
 माचिका । मोइया । ६. श्रामडा । श्राम्रातक । ७. मोरशिखा।
  मयूरशिखा।
श्रंबष्टा-[सं०] १. पाठा। पाड़ी। २. भारंगी। बाह्यस्पयछी।
श्रंबष्टिका-[सं∘] ∫ ३. चांगेरी । ४. माचिका । मोइया । खट-
 कल श्रामला। १. जूही। यूथिका। ६. मोरशिखा। मयूर-
 शिखा। ७. माचिका। मोइया। ८. श्रामदा। श्राम्रातक । श्रमला।
श्रंबष्ठो-[ सं० ] पाठा । पाड़ी ।
श्रंबह-[ फा॰ ] १. श्राम । श्राम्र । २. [यू॰] जामफल । सफरी ।
श्रंबा-[सं॰] १. माचिका । मोइया । २. पाठा । पाढ़ी । ३. [फा॰
 खा॰] श्राम । श्राम्र ।
श्रेवाडा-[हि॰] ग्रामड़ा। श्राम्रातक। ग्रमरा | श्रमला। [ द॰ ]
 माचिका। मोइया। श्रंबष्टा।
श्रेवाडा पान-[ हिं० ] पान श्रंवाडा । श्रम्लवारी पर्ग । श्रम्ल-
 बाटी पान।
श्रंबाडो-[मा०] श्रंबाडा । श्राम्रातक ।
श्रंबादि-[ मरा० ] १. माचिका। २. मोइया।
श्रेवानु भाड़-[गु॰] श्राम। श्राम्रवृत्त।
श्रवा भोसा-[भोल०] कचनार सफेद । श्वेतकांचन वृत्त । सफेद
श्रंबारि-[हिं०] माचिका। मोइया
```

```
श्रंवालमु-[ते०] श्रामडा। श्राम्रातक।
त्र्यंवाळिका−[ सं० ] १. माचिका । मोइया । २. पाठा । पाढ़ी ।
  पुरइन पाती।
श्रंवाचर-[ हिं० ] श्रमावर । श्राम्रवर्त ।
श्रंबि-[सं०] भेड़ा। मेष।
श्रंविका-[ सं० ] १. माचिका । मोइया । श्रंवष्टा । २. मैनफल ।
  मद्न । करंहर । ३. कुटकी । कटु राहिणी । कटुका ।
 ग्रॅविया हरदी-[हिं०]
श्रॅविया हर्दी-[हि॰] श्रामा इलदी। श्रमिया हलदी। श्राम्र-
 श्रॅविया हरूदी-[हिं०] | गंघ हरिदा।
 श्रॅबिया हल्दी-[हिं०]
 श्रंविलाणा-[ तं० ] ]
                        चाँगेरी। चौपतिया। खटकळ बूटी।
 श्रंविलोना-[ हि॰ ]
 श्रंतु-[सं०] १. सुगंधवाला । नेत्रवाला । वालक । २. जला ।
  पानी।
 श्रं वुकेटक-[ सं० ] घड़ियाल । नक ।
 श्रंबुकंद्-[सं०] सिंघाड़ा । श्रंगाटक ।
 श्रं बुक-[ सं० ] १. श्राक सफेद। रवेतार्क । मदार। सफेद श्राक।
   २. एरंड लाल । रक्तरण्ड । लाल श्रण्डी ।
 श्रंबुकिट-[सं०]
 श्रंबुकित्र-[सं०] विद्याल । नक्र । मगर ।
 श्रेंबुकीश−[ सं∘ ] १. गोह । गोघा । २. सूँस । शि<sup>'</sup>शुमार ।
 श्रंबुकुक्टिका-[सं०]) १. प्लव (पत्ती)। जल में तैरनेवाली
श्रंबुकुक्टी-[ सं∘ ] ∫ चिड़िया। हंस, सारस, चकवा, बगुला,
  बत्तक त्रादि । २, मुर्गाबी । जलकुक्ट ।
श्रंवुकूर्म-[ सं० ] गोह । गोधा ।
श्रंबुक्रब्स्-[ सं॰ ] जल-पीपल । जल-पिप्पली ।
श्रंबुकेशर-[ सं० ] विजीरा नींवू। वीजपूर।
श्रेवुचर-[सं०] १. कुलेचर। जलचर। जल में रहनेवाले जीव।
  २. जल चौलाई। कंचट।
श्रंबुचाम-[ सं० ] सेवार । शैवाल ।
त्र्रंवुचारिगो–[ सं॰ ] स्थळ कमत । स्थत पद्म । पद्मचारिगी ।
श्रंबुचुक-[म०प्र०] चूकाशाक। चुकिका।
श्रंयुज-[सं०] १. इजल । हिजल वृत्त । २. जबर्वेत । विकुंचक ।
  ३. जलचालाई। कंचट। ४. कुलेचर। जलचर। जल में रहने-
  वाले जीव। १. कमल । पद्म।
श्रंवुज्ञामलकी-[ सं० ] पानी श्रांवला । प्राचीनामलक ।
श्रंवुर-[ सं॰ ] श्रश्मंतक । श्राबुटा वृत्त ।
श्रंवुड-[ उ० ] श्रामड़ा । श्राम्रातक ।
श्रंबुतचुक-[म॰ प्र॰] चूका (शाक) । चुक्रिका । खटपालक ।
श्रंवुताछ-[ सं० ] सेवार । शैवाछ ।
श्रंबुद्-[ सं॰ ] मोथा । मुस्तक ।
```

```
श्रंबुधर-[सं॰] १. नागरमोया । नागरमुस्तक । २. भद्रमोथा ।
 भद्रमुस्तक।
श्रंबुधि-[ सं॰ ] समुद्र । सागर।
श्रंबुधिफल-[ सं॰ ] समुद्रफल । समुंद्र फल ।
श्रंबुधिफेन-[सं०] समुद्रफेन । समुंदर फेन । श्रब्धि-कफ ।
श्रंबुधिश्रवा-[सं॰]} घीकुवार । घृतकुमारी ।
 श्रंयुनाम-[सं०] १. सुगंधवाला । चालक । नेत्रवाला । २.
  हाऊबेर । हबुषा ।
 श्रंबुप-[ सं० ] चकवँड़ । चकमर्द । पर्वार ।
 श्रंबुपत्रा-[ सं० ] उटंगन । उचटा ।
 श्चंबुपत्रिका-[सं०] १ १. वटंगन। उच्चटा। २. गुंजा लाल। रक्त-
 श्रंबुपत्रा-[ सं० ] पुंजा। ३. गुंजा सफेद। श्वेत गुंजा।
 श्रंबुप्रसादन-[सं॰] निर्मेली। कत्तक वृत्त ।
  श्रंबुप्रसाद्न फल-[ सं० ] निर्मेली (फल)। कत्तक वृत्त।
  श्रंबुभृत-[सं०] मोथा। मुस्तक।
  श्रंतुमयूरक-[सं॰] जलापामार्ग । जलिच वड़ा । जलिच टिचटा ।
  द्रांतुमात्रज-[सं०] घोंघा। शंवूक।
  श्रंवु यष्टिका-[ सं० ] भारंगी । भागी ।
  श्रंबुरुह-[सं०] कमल। पद्म।
  श्रंवुरुहा-[ सं० ] १. स्थल कमल । स्थल पद्म । २. कमलिनी ।
   पद्मिनी।
 श्रंबुरी-[कोल॰] श्रामड़ा। श्राम्रातक।
 श्रंवुल-[ पं॰ ] श्रावला। श्रामलकी।
 श्रंबुविह्मक-[ सं० ] घोंघा। शंबुक।
 श्रंबुवाल्लका-[ सं० ] करेला । कारवेल ।
 श्रंबुवर्ह्मो-[सं०] १. करेली । कारवेली । २. जल-पीपल । जल-
  पिष्पली ।
श्रंतुवारिगी-[ सं० ] स्थल-कमल। स्थलपद्म।
श्रंबुवासिनी-[सं०] १. पाड़र। पाटला वृत्त । २. पाढ़र नं० १।
श्रंबुवासी-[सं०] पाढ़र। पाटला वृच।
श्रंबुवाह-[ सं॰ ] मोथा । मुस्तक ।
श्रंबुचेतस-[सं०] जलबेंत। निकुंचक।
श्रंबुशिरिषिका-[सं॰] ) जल सिरस ।
श्रंबुशिरीष-[ सं∘ ] ∫ टिंटिनी।
त्रंबुग्रुकि-[ सं॰ ] जल-सीप । जल-ग्रुक्ति ।
श्रंबुस श्रलव-[ श्र॰ ] मकोय । काकमाची ।
श्रंबुसिपंगी-[ सं० ] जॉक। जलौका।
श्रंबुसाद्न-[सं०] निर्मेली। कतक।
 श्रंबुसारा-[ सं∘ ] देला । कदली वृच ।
```

```
श्रंयुसालव-[ सं० ] मकोय। काकमाचीः।
श्रंवसाह्न-[ सं० ] कुंद । कुंद-पुष्प-वृत्त ।
श्चेबे-[फा०] श्राम। श्राम्र।
श्रंबेडा-[ गु॰ ] श्रंबाडा । श्राम्रातक ।
श्रंदेरा-[ कुर० ] श्रामड़ा । श्राम्रातक ।
श्रंबेलिया-[ सिंह० ] वायविडंग । विडंगा ।
श्चेबेहलद्-[ मरा० ] गंध-पलासी । कचूर-भेद । कपूर-कचरी ।
त्रंबोधा-[हिं०] ग्रामड़ा। ग्राम्नातक।
श्रंबोर-[मु॰] तूत नं० १। तूद युच।
श्रंबोहम-[ माल॰ ] श्रामड़ा । श्राम्रातक ।
श्रंभ-[ सं० ] १. जल । पानी । २. सुगंधवाला । नेत्रवाला ।
  बालक।
श्रंभपा-[ सं॰ ] पपीहा । चातक पत्ती ।
ग्रंभफल-[ सं० ] विहीदाना । वीहदाना ।
 श्रंभसार-[ सं० ] मोती । मुका ।
 श्रंभसू-[ सं० ] घोंघा। शंबुक।
 त्रंभू-[ लघ० ] काला जीरा नं० २ । स्याह जीरा । कु॰एजीरक ।
 श्रंभेडा-[ गु॰ ] श्रामड़ा । श्राम्नातक । श्रमरा । श्रमला ।
 श्रंभोज-[ सं० ] १. कमल । पद्म । २. जलवेंत । निकुंचक ।
 श्रंभोजनाल-[ सं॰ ] कमल की नाल। पद्मनाल।
श्रंभोजा-[सं०] जल सुलेठी । वह्नीयष्टी मधु । जलयप्टी ।
श्रंभोजिनी-[ सं० ] कमलिनी । पद्मिनी।
श्रंभोटा-[ उ० ] कचनार सफेद। श्वेत कांचन वृत्त।
त्रंभोद्-[सं०] १. भद्रमोथा । भद्रमुक्तक । २. पुंडेरी । प्रवेंडि
  रीक। पुंडरिया।
श्रंभोद्र-[सं०] मोथा। मुस्तक।
श्रंभोधिपल्लव-[ सं० ]
श्रंभोधिवल्लभ-[ सं० ] } मूँगा। प्रवाल।
श्रंभोमुक-[ सं० ]
श्रंभोरुह-[सं०] कमल । पद्म।
श्रंभोरुहकेशर-[सं०] कमलकेशर। पद्मकेशर।
श्रॅवला-[मरा०] श्रावला। श्रामलकी।
श्रेश-[ सं० ] स्कंध । कंधा ।
श्रंशवान-[ सं० ] सोमलता । सोमवली ।
श्रंशुक-[ एं० ] तेजपत्ता। पत्रज।
श्रंशुकाय-[ सं॰ ] मूँगा। प्रवाल।
श्रंशुपर्णिका-[ सं०])
त्र्रंशुपर्गी-[ सं० ] } सरिवन । शालिपर्गी । सालपान ।
श्रंशुमती-[सं०] सरिवन । शालिपर्णी ।
श्रंशमतीफला-[ सं॰ ]
श्रंशमत्फला-[ सं॰ ] } केला। कदलीवृत्त । रंभा।
 श्रंशुमत्फली-[ सं० ] केला । कदली ।
```

श्चेग्रुमा-[सं०] बंशलोचन। वंशरोचना। श्चेग्रुमान-[सं०] सोमलता। सोमवल्ली। श्चेग्रुद्दक जल-[सं०] दिन की धृप में थीर रात को शीत में रखा हुआ पानी।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष — सब प्रकार के रोगों को दूर करनेवाला, कफ, भेद श्रीर वातनाशक तथा दीपन, वक्तिशोधक, रवास श्रीर खांसी को दूर करनेवाला श्रीर नेत्र-रोग-नाशक है।

ग्रंस-[सं०] कंघ । कंघ । ग्रंसपारिक-, सं०] वकायन । महानि व । ग्रंसिपारिक-, सं०] वकायन । महानि व । ग्रंहिपणी-[सं०] पिठवन । पृश्निपणीं । ग्रंहिपणी-[सं०] जवासा । यवास । धमासा भेद । ग्रंहिपणी-[सं०] जवासा । यवास । धमासा भेद । ग्रंहिपणी-[सं०] विवेसार । ग्रंसनगृच । पीतसाल । ग्रंसना । ग्रंहिपजुस-[ते०] लोगा छे। हो। लोगी । लोनिया । ने।नी शाक । ग्रंहिपजुस-[ते०] लोगा छोटी । लोगी । ग्रंहिपजुस-[ते०] लोगा छोटी । लोगी । ग्रंहिपजुस-[तं०] लिसोरा । श्वंद्याहणी । ग्रंहिपम्ब केला-[संह०] ग्रामदा । ग्राम्नातक । ग्रंमला । ग्रंहिपजुस-[तं०] किसोरी । सिंकिरिष्टा । ग्रंहिपजुस-[पं०] १. ग्रालुखारा । ग्रालुक । २. सप्तालुक । ग्रंहितालु ।

अश्रोरा-[मरा०] ईख । इच्च । गन्ना । अकंदा-[मु॰] श्राक। श्रकेषृत्त । श्रकाव। श्रकवन। अक्क़-[अ०] े केवि के समान एक काला पन्नी अथवा एक अक्रक्अ−[४०] र्जगली कै।वा । महू। फालनहवह। अकड़ाहर-[हि॰] धनुस्तंभ । धनुवात । अकड़े।-[गु०] आक। अर्क। मदार। श्रकत मकत-[अ०] लताकरंज । कंटकरंज । कठकरेज । श्रकद्चा साड़-[मरा०] प्राकर-[म०] श्राक। श्रके वृत्त। श्रकाव। श्रकवन। त्रकरकरहा-[हि०] १. श्रकरकरा । श्राकर करभ । २. श्रकर-करा नं० १। ३. [पं०] श्रकरकरा नं० २। श्रकरकरा-[हिं०] १. श्रकरकरा। २. श्रकरकरा नं० १। श्रकरकरा नं० २ । [सं०] श्राकार करभ । श्राकल्लक । श्रकछक इत्यादि । [वँ०] श्राकरकरा । [पं०] श्रकरकरा । [मरा०] श्रक्तळकारा । [गु०] श्रक्तळकरेा । [मा०] श्रक्त करें। [ते०] श्रक्तरक्तमु। [द्रा०] श्रक्तरकारम्। [क०] अकलकरें । [हिं०] अकर्करा। [अ०] आकरकरहा। [लै०] Anacyclus Pyrethrum [রাণ্ড] Pellitory root;

The Pellitory of Spain.

यह अरव आर भारतवर्ष की एक प्रसिद्ध बूटी है, जो श्रिफका के उत्तरी प्रदेशों में श्रीवक उत्पन्न होती है श्रीर वहीं से इस देश में बाती है। इसकी बाँगरेजी में ''ब्लेटोरी स्ट" श्रीर लैटिन में "पाईरथशाई रैडिम्स" कहते हैं। इसके चुप को लैटिन में "ऐनेसाइकिल्य पाईरथरम्" कहते हैं। यह खुप जाति की वनै।पधि पहाड़ी भूमि में अधिक पाई जाती है। इसकी छोटी छोटी अनेक शाखाएँ जमीन से निकलकर प्रसर के समान भूमि पर फैलती हैं। चै। मासे की प्रथम वर्षा में इसके छोटे छोटे छप निकलते हैं। डाजी राएँदार होती है। डाली, पत्ते ग्रीर फूछ सफेद बाबूने के समान होते हैं। डाली के जपर गील गुच्छेदार इतरी के आकारवाला तथा बावृते से विपरीत पीले रंग का फूल आता है। बीज सीआ के समान होते हैं। इसकी जड़ २ इंच से ४ इंच तक छंबी श्रीर श्राधे से पैान इंच तक मोटी होती है। छाल मोटी, भूरी और अरीदार होती है। कुछ लोग कहते हैं कि इसकी जड़ एक विता छंबी थार छाटी उँगली के समान मोटी होती है। इसकी जड़ ही श्रीपिध के काम में श्राती है। इसमें विशेष प्रकार की कोई गंध नहीं होती। यही जड़ अकरकरा कह-लाती है श्रीर इसकी शक्ति सात वर्ष तक बनी रहती है। इसकी चबाने से मुख में जबन होती है एवं मुख श्रीर कंठ में वह कांटे के समान चुभती हुई मालूम पड़ती है श्रीर तब कड़वे, चरवरे, कसैले श्रादि का कुछ भी ज्ञान नहीं होता।

कहते हैं कि यह मिस्र देश की पहाड़ी भूमि में बहुत उत्पन्न होती है तथा वंगाल, महाराष्ट्र श्रीर गुजरात में भी पाई जाती है। इसकी उंडी पोली होती है। महाराष्ट्र श्रीर गुजरात में इस उंडी का श्रचार श्रीर शाक बनाते हैं।

यद्यपि कहा जाता है कि श्रकरकरे का जुप भारतवर्ष के कई प्रांतों में पाया जाता है, कि जु यह श्रकरकरा मुक्तको प्राप्त नहीं हो सका। इसका डाक्टरी नाम 'ऐनेसाइकिएस पाइस्य-रम" है, जो विदेश से श्राता है।

भारतवर्ष में दो प्रकार का श्रकरकरा होता है जिसका उल्लेख नीचे किया जाता है-

श्रकरकरा नं० १—यह चुप जाति की वनस्पति वर्षजीवी होती है और इस देश की वाटिकाओं में लगाई जाती है। इसका चुप श्रकरकरा नं० २ के चुप के समान है, पर श्रधिक टढ़ और रसदार होता है। पत्ते भी बड़े होते हैं। पर्य्याय—[हिं०] श्रकरकरा। [बँ०] रेाशिनिया। [मु०] श्रकरा। [पं०] श्रकरकरहा। पेकर मूळ। [मप०] उकरा। [ते०] मराति मेग्गा। मराति चिगे। [लै०] Spilanthes Oleracea Syn: Spilanthes Acmella.

इसके समस्त चुप का स्वाद श्रकरकरे के समान तीक्ष्या, चर-पराहटवाला होता है, विशेषकर फूबेंग की घुंडी श्रधिक उच्यतायुक्त श्रीर जलन उत्पन्न करनेवाली होती है, जिससे मुख से लार श्रिक गिरती है। इसी हेतु मालियों ने इसका नाम श्रकरकरा रखा है। तुतलाकर बोलनेवाले बालकों के लिये यह बहुत उपकारी श्रीपध है। कुछ लोग दंतपीड़ा होने पर फूलों की घुंडी भी चबाते हैं। यह श्रकरकरा श्रत्यंत उत्तेजक होता है; इस कारण शिरपीड़ा, जिह्नास्तंभ, गले की पीड़ा, मस्डों के दई श्रीर दंतपीड़ा में व्यवहत होता है।

श्रकरकरा नं० २—इसका लेटिन नाम Spilanthes Acmella है। यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में पाया जाता है। इसका छुप वर्षजीवी होता है। इस पर थे। इन्बहुत रोएँ होते हैं। कोई कोई छुप रोएँ से भरे रहते हैं। शाखाएँ जह के पास १-२ फुट लंबी फेली हुई अथवा खड़ी रहती हैं। इनकी अनेक शाखा-प्रशाखाएँ होती हैं। पत्त समवर्ती, पैान इंच से डेढ़ इंच के घेरे में अंडाकार, कँग्रेदार और अनीदार होते हैं। शाखाओं के अंतवाली लंबी डंडी पर फूलों की छुंडी लगती है। फूल पीले अथवा सफेद आते हैं। इसकी छुंडी अकरकरा नं० १ की छुंडी की अपेचा अधिक चरपराइटवाली होती है। पह दंतपीड़ा पर चवाई जाती है जिससे लार अधिक गिरती है और मसूड़े लाल हो जाते हैं।

श्रकरकरा के गुण-देष — उण्णवीर्य, वलकारक तथा प्रतिश्याय, सूजन, पित्त श्रीर कफ की दूर करनेवाला, स्वाद में चरपरा, किसी किसी के मत से मधुर, शीतवीर्य श्रीर मातदिल है। रुधिर की गाँठ की खोलनेवाला तथा सिर के मल की श्रद्ध करनेवाला है। इसका लेप करने से लकवा, पचाधात, कफवात, गरदन का जकड़ना या ढीला होना श्रीर पीड़ा, जोड़ों का दर्द, तोतलापन, छाती श्रीर दाँत का दर्द, गृध्रसी, जलीदर इत्यादि का नाश होता है। टंढी प्रकृतिवाले मनुष्य की इंदिय में ताकत देनेवाला, खुलकर मूत्र लोनेवाला तथा खियों के रजीधर्म, ज्वर श्रीर पसीने में हितकारक तथा स्तनों में दूध बढ़ानेवाला है।

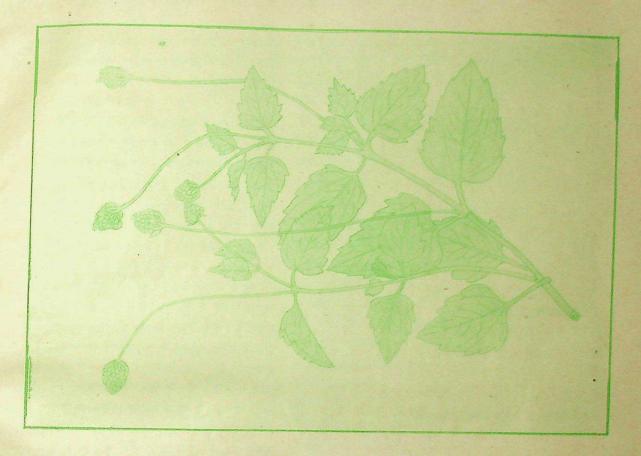
यूनानी मतानुसार गुण-देष—यह दूसरे दर्जे में रुच श्रीर गरम है। कोई तीसरे दर्जे के श्रंत में श्रीर चौथे दर्जे तक खुरक मानते हैं। किंतु किसी किसी के मत से तीसरे श्रीर चौथे दर्जे में शीतल है। फुफ्फुस की हानिकारक है।

द्र्पनाशक—मुनका श्रीर कतीरा। प्रतिनिधि—सोंठ, पीपल श्रीर मधु। प्रयोग—जदु। मात्रा—३ माशे।

जिगर के रेगों में इसके प्रतिनिधि पीपल श्रीर मधु तथा श्रामाशय के रेगों में रास्ता श्रीर श्रगर हैं; परंतु इन दोनें। के न मिजने पर सोंट श्रीर सोंट से श्राधी काली मिर्च जेनी चाहिए। गरगरों में अकरकरे के प्रतिनिधि-स्वरूप डेढ़ गुना पहाड़ी पुदीना लेना उत्तम है और हलकी पीड़ा में इसकी जगह इलायची लेते हैं।

डाकररी मतानुसार गुण-देष — ग्रकरकरा चवाने से थूक की गिल्टियों पर वह उत्ते जक के समान गुण दिखलाता है; इसी कारण लार बहुत बहती है। जीभ के रह जाने या सुन्न हो जाने, शरीर के पट्ट के रोगों, दाँत के दर्द, जबड़ें। की घूमनेवाली पीड़ा ग्रीर गले की घंटी के लटक ग्राने में इसका चूर्ण मलते या इसके। चवाते हैं। ३० ग्रेन से ६० ग्रेन तक की मात्रा चवाने के लिये लेनी चाहिए।

प्रयोग-१. इसकी जड़ उत्ते जक होती है थीर उसके लेप से चमड़ा लाल हो जाता है तथा चरपराहट होने लगती है। ग्रकरकरें की लकड़ी भारी होती है ग्रीर तोड़ने में ग्रंदर से सफेद दिखाई देती है। वमन या विरेचन करनेवाली श्रीपधि का सेवन करने के पहले इसकी खूब चबाकर श्रुक देने से उसका स्वाद नहीं जान पड़ता। इस कारण हकीम लोग कड़वे काढ़े श्रादि पिलाने के पहिले इसकी चबवाकर थुका देते हैं। २. इसका जैतून के तेल में पीसकर मालिश करने से शिर राग, संधियों के दर्द तथा मुख श्रीर छाती के रोगों में फायदा होता है। ३. इसके गरम गरम काढ़े का सिर पर लेप करने श्रीर उसे तालू पर मलने से सदी थीर नजला दूर होता है। ४. मस्तकी या कसैली वस्तु के साथ चबाने से दूपित दोष से प्रकट हुए मिरगी रेगा, श्रांखों के सामने दिखाई पडनेवाले ग्रंधेरे श्रीर लकवा रोग में फायदा होता है। ५. श्वास लेने की क्कावट में इसकी सुँघनी बनाकर नस्य लेना चाहिए। ६. तातलेपन में इसका चूर्ण जीभ पर मलना हितकारी है। ७. दाँतों तथा मसूढ़ें। के दर्द में सिरके में भिगोकर मसुढ़ें। पर लगाना अच्छा है। ८. इसका काढ़ा मुख में रखने से हिलते हुए दाँत दढ़ होते हैं। गले के फोड़े नष्ट होते हैं तथा जीभ की श्रीर घंटी जटकने में फायदा करता है। ६. पसीना लाने के लिये शरीर पर इसका चूर्ण मलना चाहिए। १०. बालकों के मिरगी रोग में इसकी डोरे में बाधकर गले में पहनाते हैं। ११. जीभ का रूखापन मिटाने के लिये श्रीर मुख में पानी लाने के लिये मधु के साथ इसका लोप करना हितकारी है। १२, डाढ की पीड़ा में इसकी चवाते रहना श्रव्छा है। १३. शिरपीड़ा में इसका पीसकर श्रीर गरम करके छलाट पर लेप करना चाहिए। १४. दांत, तालुमूल श्रीर गले के रागों में इसके काढ़े का कुछा करना हितकारी है। १४. दस्त लाने के बिये इसके चूर्ण की ६ माशे की फंकी देनी चाहिए। १६. ज्वर उतारने के जिये जैतून के तेल में पकाकर शरीर पर माजिश करना उत्तम है। इससे पसीना भ्राता श्रीर ज्वर उत्तर जाता है। पुरानी खाँसी में इसका काढ़ा पिछाना हितकारी है।





अक्रक्रा नं

१७. बालक की जल्दी बुखाने के लिये इसके चूर्ण की फंकी दी जाती है। १८. दाँत के दर्द में इसके चूर्ण का मंजन करना चाहिए। १६. मंदािन छै।र श्रफरे में सेांठ के साथ इसके चुर्ण की फंकी देना हितकारी है। २०. क्लीव रेगा में श्रीर पुरुपार्थ वड़ाने के लिये मूसली आदि धातुवर्द्धक छै।पिधयों में मिलाकर दूध के साथ सेवन करना चाहिए। २१. हृदय रेगा में कुलं-जन, सींठ थीर अकरकरे का काढ़ा देना अच्छा है। २२. शरीर की शून्यता पर लोंग के साथ, निरंतर रहनेवाले ज्वर में चिरा-यते के शर्क के साथ, शिरपीड़ा में वादाम के साथ श्रीर चेहरे के बादी के रोगों में पीपलामुल के साथ इसकी श्रीटाकर देना चाहिए। २३. श्रांख की पुरानी पीड़ा में श्रांखों के जपर इसका लेप करना हितकारी है। २४. श्रद्धांग वात में उशवे के साथ इसका काड़ा दिया जाता है। २४. श्रपस्मार में बाह्मी श्रीर शंखाहुली के साथ इसका काढ़ा देना हितकारी है। २६. त्रालस्य में इसका काढ़ा लाभकारी है। २७. जलोद्र में उचित श्रनुपान के साथ इसका सेवन करने से फायदा होता है। २८, गृध्रह्मी में अखराट के तेल के साथ मालिश करना अच्छा है। २१. श्रानियमित मासिक धर्म में इसका काढ़ा पिजाना हितकारी है। ३०. सूत्र की रुकावट में इसका चूर्ण त्रिफला श्रीर मिस्री के साथ सेवन करना लाभकारी है। ३१. श्रालस्य श्रीर शिथिलता दूर करने के लिये सेांठ के साथ इसकी फंकी दी जाती है। ३२. प्रतिश्याय की शिरपीड़ा में इसकी दाँतों के बीच दवाकर रखना चाहिए। ३३. श्रद्धांग वात में राई श्रीर इसका चुर्ण जीभ पर मलना लाभदायक है। ३४. श्रपस्मार का वेग रोकने के लिये दौरा न होने की दशा में इसकी सिरके में पीसकर मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। ३४. दांतां की खोखली जगह में १ रत्ती श्रकरकरा, ४ रत्ती नौसादर श्रीर ४ रत्ती श्रफीम एक में मिलाकर २ रत्ती भर देने से दांतों की पीड़ा मिट जाती है। ३६. सब प्रकार की दंतपीड़ा में कपूर और इसके चूर्ण का मंजन गुणकारी है। ३७, इंदिय मोटी करने के लिये १ तीले श्रकरकरा की १ तीले प्याज़ के रस में पीसकर उस पर लेप करना चाहिए। ३८. श्रकरकरे के तेल की इंदिय पर मलने से वह कठार होती है श्रीर काम-शक्ति बढ़ती है। मधु के साथ तिला बनाकर इंद्रिय पर लेप करने से संभाग में स्त्री शीघ स्विलित होती है। ३६. श्रकरकरा श्रीर नौसादर बारीक पीसकर तालू श्रीर मुख में भली भाँति रगड़कर श्राग रखने से मुख नहीं जलता।

श्रकरकाता-[बँ०] ढेरा। श्रंकोट। श्रंकोत । श्रकरब-[श्र०] बिच्छू। वृश्चिक। बिच्छी। श्रकरा-[सं०] र्थावता। श्रामलकी। श्रकरा-[सु०] श्रकरकरा नं०२।

```
श्रकरा करभ-[सं॰] । श्रकरकरा। श्राकरकरभ। श्रकरकरहा।
श्रकरांभक-[ सं० ] [
श्रकरी-[हिं०] कटकला नं० २।
त्रकरोट-[ मरा॰ ] १. श्रखरोट । श्रवोट । २. [ वँ० कच्छ० ]
 अखराट जंगली । वन अचीट । जंगली अखराट ।
ग्रकरोट्ट-[ते०]
यकरोटु-[ता॰]
                  श्रवराट । श्रनोट ।
श्रकरोठ-[मरा०]
श्रकरोडु-[बा॰]
 ग्रककर:-[ सं० ]
 श्रक्तकरा-[हि॰ ] } श्रकरकरा । श्राकरकरभ । श्रकरकरहा ।
श्रकलकरा-[मा०]
श्रकलिएहकु-[ने०] ईख। इचु। गन्ना।
त्रकलिमियां-[ यू॰ ] एक यूनानी श्रीपधि जिसका जलाने सं
 सोना या चांदी, सोनामक्ली इत्यादि के समान, साग की तरह
 अपर नीचे जम जाती है।
श्रकलोमाय (फ्र ज़ह-[अ०])
                           रूपामाखी। तारमाचिक धातु।
श्रकलोमाय फिज्जा-[श्र∘]∫
त्रकलीलुळ्मळक-[ अ॰ ] } नालून । गयाह केसर । त्रकलेलुळ्मुळ्क-[ अ॰ ]
अकल्करः-[ सं० ]
श्रकलकरा-[हि॰]
                   थकरकरा। श्राकरकरम। श्रकरकरहा।
श्रकल्लः-[ सं॰ ]
श्रकल्क−[ सं० ]
श्रकलकर:-[सं०]
त्रकल्लकरा-[मरा०] } श्रकरकरा । श्राकरकरभ । श्रकरकरहा ।
त्रकलकरा-[ गु॰ ] <sup>)</sup>
त्रकवन-[ हि॰ ] त्राक। रक्तार्क। श्रकीना। लाल फूल का
श्रकसन-[ हि॰ ] श्रसगंघ देशी । श्रव्यगंघा । देशी श्रसगंघ ।
श्रकसवेल-[मा॰] श्रमरवेल नं॰ १। श्राकाशवल्ली। श्रमरलता।
त्रकृहवाँ-[ फा॰ ]) [हि॰] मुलहठी । बाबूना गाव । यह बाबूने
त्र्यकृहचान्-[का०]∫ की जाति की एक बूटी है।
                      ो १. [हिं ] काले बबूल का गोंद।
त्रकाकिश्रा-[यू॰]
                         [सं०] काल बब्बूर निर्धास।
श्रकाकिया-[यू॰]
                         [द०] कीकर का गोंद। [ता०]
श्रकाकिया श्रसरा-[यू॰]
                         कारुबेलम पिशिन। [ते०] नञ्च
श्रकांकेया श्रासरा-[4्°]
त्रकाकिया त्रसारे-[यू॰] } तुम्मवंका । [मला॰] कारवेलकम
                         पशा। [द०] कारेगाडवित गोंदु।
श्रकाकिया उसरा-[ यू॰ ]
                         कारेजाली गोंदु। [बँ०] काल
श्रकाकिया उसारा-[य्॰ ] <del>|</del>
त्रकाकिया उसारे-[यू॰] ] बबुलेर गुन । [मरा॰] कालो
 वाबिलिचा गोंद । [गु॰] काली बबलनु गुंदर । [लै॰] (वृच)-
```

A cacia Ferruginea. Syn: Mimosa ferruginea र. [श० फा०] श्रकाकिया। यह एक प्रकार के बबूल के वृत्त का गोंद है। इस वृत्त के बीज की "करज" कहते हैं। यह काले रंग का, स्वाद में कडुवा श्रोर सुगंधियुक्त होता है। श्रनेक विद्वानों की सम्मित है कि श्रकाकिया बबूल की जाति के एक वृत्त का गोंद है, किंतु वास्तव में यह इस वृत्त का गोंद नहीं है। यह इस वृत्त की ताजी श्रीर केमिल फलियों से उत्पन्न द्व सत्व है। इसका वृत्त खेर के वृत्त की जाति का होता है श्रीर नाम भी लैर के ही समान है। कई प्रांतों में इसकी काला बबूर भी कहते हैं, इस कारण मैंने इसका प्रधान नाम 'बबूर काला' रखा है श्रीर इसका सविस्तर वर्णन तथा गुण-देाप इसी नाम के श्रंतर्गत दिया है; पाठकों के लाभार्थ इस वृत्त का चित्र यहाँ दे दिया जाता है।

गुण-देष — अकाकिया संकोचक, स्निग्धकारक तथा श्रति-सार, श्रामातिसार, श्रामरकातिसार, स्जाक श्रीर जीर्ण वस्ति के दाह पर गुणकारी है। यधिष श्रकाकिया श्रतिसार श्रादि में श्रफीम श्रथवा श्रफीम के येगा से बनी हुई श्रीपिधयों की श्रपेचा कम गुणकारी है, तथापि यह श्रन्य बृटियों श्रथवा स्वनिज संकोचक गुणवाली श्रीपिधयों की श्रपेचा स्वतंत्र व्यव-हार करने से श्रिषक लाभप्रद होता है। जब जलोदर का रेगी श्रतिसार या रकातिसार से पीड़ित होता है, तब श्रफीम श्रथवा श्रफीम मिली हुई श्रीषध प्रायः हानिकर होती है; क्योंकि वह प्रायः जलोदर की बढ़ाती है। ऐसी श्रवस्था में श्रकाकिया का प्रयोग उपकारी होता है।

जिन ताजी फिलियों में कीमल बीज हों अथवा बीज पुष्ट न हुए हों, उनको धूप में सुखाकर चूर्ण करके अतिसार और रक्ता-तिसार आदि में सेवन कराने से जाभ होता है। यदि इसमें कोई दूसरी संकोचक, स्निम्धकारक, उत्तेजक बूटी और अफीम मिलाई जाय तो वह और शीघ्र गुणकारी हो जाती है। इसी प्रकार अकाकिया में भी इन ओषियों के मिलाने से गुणों की विशेष वृद्धि होती है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष— अशुद्ध अवस्था में तीसरे दर्जे में शीतल श्रीर रुच तथा शुद्ध किया हुन्ना दूसरे दर्जे में शंत कर है। रुचता-प्रद, मल की दुःखित अव-यव से रोकनेवाला, वर्द्धक, मुख से रुधिर की रोकनेवाला, आमाशय श्रीर यकृत की वलकारी, नेत्रों की वलपद श्रीर उनके दुखने में गुणकारी तथा रुधिर-स्नाव की बंद करनेवाला है एवं गुद-अंश में इसका खाना श्रीर लेप करना गुणकारी है। यह रोघ उत्पन्न करनेवाला है।

द्र्पनाशक—बादाम-रोगन । प्रतिनिधि—चंदन श्रीर रसीत । मात्रा—३॥ माशे ।

श्रकात्सज बुह्मि-[मला०] श्रमरबेल नं० २। श्राकाश बहुरी। श्रमरलता। श्रकानादि-[हि॰] पाठा लघु । श्रंबष्टा । लघु पाठा । श्रकान्विधि-[उ०] पाठा । पाड़ी । अकारकरम-[सं०] अकरकरा । आकरकरम । अकरकरहा । स्रकारून-[अ०] बच। बचा। अकाव-[हि॰] आक। अर्क। मदार। स्रकाश गठड गहु-[बा॰]) स्रकाश गठडन-[बा॰] } नाही। कड्बी। नाई। **अकाश्वन-[द०] अमरवेल नं० १।** आकाश वॅवर । श्रकाश वल्लरी। **अकाशवेल**-[हि०] अमरवेल नं० २। आकाश वल्लरी। श्रमरलत्ती। त्रकाश मांसी-[हि॰] श्रकास मांसी। सूक्ष्म जटामांसी। छोटी जटामांसी। श्रकास गड्डाह-[द०] नाही। नाई। श्रकासबेल-[हि॰] १. श्रमरबेल नं॰ २ । २. [गु॰] श्रमर॰ वेल नं १। ग्राकाशवल्लरी। त्रकास मांसी-[हिं] त्राकाशमांसी। सूक्ष्म जटामांसी। छोटी जटामांसी। श्रकाहुली-[यू॰] अक़ाहूळी-[यू॰] रे अर्कपुष्पी । अर्कहुली । द्घियार । त्रकाहोली-[यू॰] **)** अक़ोक़-[यू०] यह एक प्रसिद्ध पत्थर है। इसका रंग सफेद, गहरा, छाल, नीला या पीला होता है। मुसलमान फकीर प्रायः इसकी माला गले में पहनते हैं। यूनानी मतानुसार गुण-देाष-दूसरे दर्जे में शीतल त्रीर रूच, हृदय की बलकारी, है। छदिल की गुणकारक, रुधिर-स्नाव को रोकनेवाला, विशेषतः त्रातिव का रोधक और दृष्टि के लिये बलकारक है। इसकी पास रखने से क्रोध की गर्मी दूर होती है। यह गुरदे श्रीर गले की हानिकारक है। द्र्पनाशक-कतीरा और कहू के बीज। प्रतिनिधि-मूँगा श्रीर कहरुवा। मात्रा-१॥ माशे। श्रकु-[उ०] ईख। इन्ता जला गन्ना। त्रकुते मुडु-[ते०] थृहर नं० १। स्तुही। ब्रकुप्य-[सं०] १. सोना । स्वर्ण धातु । २. चाँदी । रजत । रीप्य। रूपा। त्रकुरुन-[यू०] बच। बचा। घोड्-बच। श्रक्तो मृदू-[ते०] थृहर नं० ३। त्र**क्ट**-[सं॰] श्रागड फछ । श्रकोट-[सं०] सुपारी। गुवाक वृत्त।



अकाकिया वृक्ष

Zo 18]

अकीट-[बा॰] कीसम । कीशाम्र । श्रकोट कीरा-[बँ०] श्रकरकरा। श्राकरकरम । श्रकरकरहा। श्रकोल- [हं0] हेरा। श्रंकोट । हेरा। [बँ0] श्रखराट जंगली। वन श्रचोट। जंगली श्रखराट। श्रकोहर-[हिं०] हेरा। श्रंकोट वृत्त । अकी आ - [हि॰] आक। अर्क वृत्त । मदार। श्रक्षरकरम्-[ते॰] श्रक्करकारम्-[द्रा॰] थकरकरा । श्राकरकरभ । श्रकर-शक्कलकर-[क॰] करहा। श्रक्कलकारा-[मरा०] श्रकांत-[सं०] वन भंटा। बृहती। वड़ी कटाई। श्रकांता-[सं०] श्रकोट-[ग्रा॰] } अलरोट। अन्नोट। अक्तिका-[सं०] श्रक्कीका-[सं०] नील। नीली वृत्त। नील का पेड़। ऋह्लोमियाउल जहव-[त्र०] सोनामक्ली। स्वर्णमाचिक घातु श्रच-[सं०] १. बहेड़ा । विभीतक वृत्त । २. चौहार केाड़ा सौवर्चळ खवण । सोंचर नेान । ३. तूतिया । तुत्य । नीला थोथा। ४. रुद्राच । उदाच । ४. कर्प परिमाण । २ तोले । ६ ऋपभक । इंदाच । ७. कमलगट्टा । पद्मवीज । अलक-[सं०] १. वहेड़ा । विभीतक वृत्त । २. तिनिश । जारुल । वंजुल वृत्त । ३. रुद्रात्त । उद्रात्त । ४. ऋषभक । इंद्रात्त । ४. कर्षे परिमाण । २ तोले । त्रज्कारका-[सं०] घीकुवार । घृतकुमारी । ग्वार पाठा । त्रज्काष्ठ-[सं०] बहेड़ा । विभीतक । श्रद्मगंधिनी-[सं॰] ककही । श्रतिवला । श्रदातंडुल-[सं०] ककही। श्रतिबता। श्रद्गत-[सं॰] १. यव । जा । २. खील । लाजा । लावा । श्रदाता-[सं०] काकड़ा सिंगी। कर्कटश्रंगी। श्रदातैल-[सं०] बहेड़े का तेल । विभीतक तैल । श्र**चधर-**[सं०] सहारा । शाखाट । सिहार । अत्तधूत्त -[सं॰] } बैछ। वृष। अवधातिल-[सं०] अत्तपाक-[सं०] चाहार काड़ा । सीवर्चन लवण । सांचर नान । त्रतिपंड-[सं॰] शंखाहुती । शंखपुष्पी । श्रच्पीड़-[सं०] १. धमासा। दुरालमा। २. बनितका। श्वेतवाना । श्वेतवुन्हा । श्रचपीड़का-[सं०] १. शंखिनी। यवतिका। २. धमासा। दुरालभा । ३. रवेतवाना । रवेतवुन्हा । श्रचपीड़ा-[सं०] १. श्वेत वाना। श्वेतवुन्हा। बनतिका। २. शंखिनी। यवतिका। यवेची।

त्रदाय-[सं०] १. गौरैया । चटक पत्ती । २, बगेरी । बनचटक अत्तर-[सं०] १. श्रोंगा। श्रपामार्गं। चिचड़ा। २. जल। पानी । स्रत्तरचटक-[सं॰] पांशु लवण । मटियानान । रेह का य्रच्चवीर्ययान-[सं०] कनेर सफेद। श्वेत करवीर। सफेद ग्रज्ञास्य-[सं०] कैथ । कपित्थ वृत्त । श्रज्ञार लवण्-[सं॰] नमक । लवण । श्रीच् -[सं०] नेत्र। श्रीख। चन्नु। त्रिक-[सं०] श्राच्छुक। रंजन दुम। त्र्रिपीलु-[सं०] वकायन । महानि व । त्र्यक्तिभेषज्ञ-[मंo] पठानी लोघ । पटिका लोध । त्रज्ञिच-[सं०] १. पाँगा निमक। समुद्र छवण। २. सहि-जन । शोभांजन वृत्त । सेंजन । ३. काली मिर्च । गोल मरिच । श्रद्गोक-[सं∘] श्राच्छुक। रंजनदुम। स्रद्मीव-[सं०] १. सहिजन। शोभांजन वृत्त। मुनगा। २. बकायन । महानि व । ३. पाँगा नेान । समुद्रजनण । ४. मिर्च। काली मिर्च। गोल मिर्च। य्र**चेय**-[सं॰] याक छाछ । रक्तार्क । श्रज्ञोट-[सं०] १. श्रखराट । गिरिज पीलु । २. श्रखराट जंगली । वन श्रजोट। ३. पीलु। मळ। श्रज्ञोटक-[सं॰] १ १. श्रखरोट। श्रचोट। २. पीलु फछ। श्रदारकी-[सं०] मल। श्रदा।ड−[स॰] श्रद्मोडक−[सं०] } श्रवरोट । कर्परात । पहाद्दी पीलु । अज़ोलमु-[ते॰] अखराट । अचोट वृच । अद्योहार-[सं०] खजूर मीठा । मधुखजू रिका । श्रदम-[सं०] शीतल चीनी। ककोल। ग्रदय-[सं०] चौहाड़ कोड़ा । सीवर्च्चत । सोंचर नमक । ग्रखज्ञा-[यू॰] ग्रंधाहली । ग्रधःपुष्पी । श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष - हलकी, रुचिकारक, बलदायक, कफन्न, वातनाशक, कि चित् पित्तकारी श्रीर हाजमा बढ़ानेवाली है। श्रखतनाक उल्रैहम-[फा॰] योषापस्मार । हिस्टीरिया नामक श्रखतलाजुल कलब-[४०] हत्कंप । है। बदिब रोग । त्रखद्-[सं॰] चिरैांजी । पियाल वृच । श्रखनी-[हिं॰] तक्रमांस । खाल श्रीर मसाले के साथ विधि-पूर्वक उबाला हुआ मांस। श्रखर-[हि॰] कपास। कार्पासी वृत्त ।

प्रखरीज़-[ध॰] कुसुम। कुसुभ। वरें।
प्रखरीट-[धि॰, वँ०, पं०, गु०] प्रखरीट। [सं०] प्रवरिट,
प्राचीट, प्राखीट, प्राचीड इत्यादि। [धि॰] पहाड़ी
पीलु। [वँ०] प्राकरीट। प्राखरीट। [मरा०] प्रकोड।
पकरीड। [गु०] प्रकरीर्ड। प्रखीड। [क०] प्राखीट।
वेहद गोनुमर। [ते०] प्रचीलमु। कींड गोगुनु। प्रकरीडु।
[द्रा०] प्रकोडु। [ता०] प्रकरीटु। [खा०] प्रकरीडु।
[पं०] प्रखरीट। दून। चारमग्ज। चारमग्ज। धनधान।
दनदान। खीर। का। डर्ग। प्रखीरी। क्रीट। कवीटंग।
सरण। उघुज़। मग्ज़। उनका। [भो०] टगिरिंग। [श्रासा०]
कविसंग। [लि०] कीवल। [कारा०] प्रखीर। क्रीट दुन।
[प्र०] जीज़। जोज़ हिंद। [लै०] Juglans
Regia Syn: Juglans Arguta, [धं०] Walnut.

श्रखरोट एक प्रसिद्ध काबुळी फल या मेवा है। यह दे।
प्रकार का होता है। एक कागजी श्रखरोट जिसका छिलका
पतला होता है श्रोर दूसरा वह जिसका छिलका मोटा होता
है। जो वृच्च रेापण करके उत्पन्न किया जाता है श्रीर भळी
भौति सींचा जाता है, उसके फळ का छिलका पतला होता
है; तथा जो वृच्च श्राप ही श्राप उत्पन्न होता है, उसका छिलका
मोटा होता है। इसके वृच्च इस देश के हिमालय के गरम
प्रति, काशमीर से पूरव की श्रोर श्रीर खासिया पहाड़ी तथा मनीपुर श्रादि श्रनेक प्रांतों में पाए जाते हैं।

इसका वृत्त बड़ा, समय पाकर गिरनेवाला श्रीर मसाजेदार सुगंधित होता है। छाज खाकी रंग की श्राध से दे! इंच तक मेटी होती है। इसकी छाल को पंजाब में ढिंडास कहते हैं। पत्ते ६ से १२ इंच तक लंबे, चौड़े, श्रंडा-कार श्रीर श्रनीदार होते हैं। वे शीत काज में गिर जाते हैं श्रीर माघ से चैत्र तक नए पत्ते निकल श्राते हैं। फूल मैनफल के फूल के श्राकार के हरापन लिए सफेद रंग के होते हैं श्रीर गुच्छों में श्राते हैं। ३०-४० वर्ष के बाद वृचों में फल लगने लगते हैं। चैत्र-वैशास में फूल लगते हैं; फिर फल लगकर श्राषाढ़ से श्राध्विन तक पक जाते हैं। फल गोला-कार २ इंच तक लंबे, मोटे श्रीर गृदेदार होते हैं श्रीर उनके श्रंदर कटोर बीज होता है। इसके श्रंदर एक प्रकार का दूध भी होता है; इसलिये फलों को तोड़कर तीन मास तक रख छोड़ते हैं। उस समय तक यह चेपदार पदार्थ गूदा बन जाता है। इससे तेल भी निकलता है।

उपर्यु के दो प्रकार के श्रखराटों के श्रतिरिक्त एक जंगली श्रखराट भी होता है, जिसका परिचय श्रागे दिया जाता है।

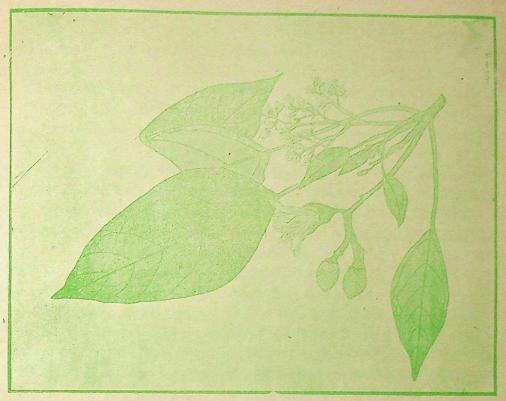
अखरोट की गिरी भूरे रंग की और चिकनी होती है। वह स्वाट में फीकी और बादाम की मींगी के समान स्वादिष्ठ होती है। गुण-दोष—यह बादाम के समान गुणकारी है। मधुर, कुछ खट्टा, स्निम्ध, शीतळ, वीर्य-वर्द्धक, गरम, रुचिकारक, कफ श्रीर पित्तकारी, भारी, प्रिय, बळ बढ़ानेवाला, मलवर्द्धक श्रीर मल के। बांधनेवाला तथा वात, पित्त, चय रोग, वात-रोग, हृदयरोग, रुधिर-विकार, रक्तवात श्रीर दाह की ह्रनेवाला है।

निरी मिस्नी के साथ खाने से मोटापन जाती है, परंतु मुख में दाने निकल त्राते हैं श्रीर जीभ में भारीपन तथा शिरशूल उत्पन्न करती हैं; श्रीर यदि गिरी के जपर का सफेद छिठका उतार दिया जाय तो मुख श्रीर तालू को हानि नहीं पहुँचाती। ज्वार की भूसी के साथ देर तक तवे पर भूनने से श्रीर हाथें से मलने से छिठका निकल श्राता है। गरम मिजाजवालों के। यदि कुछ कष्ट जान पड़े तो शिकंजवीन का सेवन करना लाभ-दायक है।

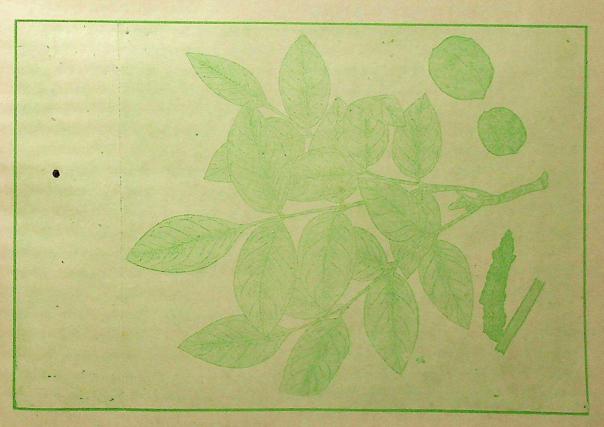
यूनानी मतानुसार गुण-देश — पहले दर्जे में गरम श्रीर दूसरे में रूच, श्ररंत मृदु, प्रकृति की मृदुकारक, व्यर्थ मळ का नाशक, श्रोजप्रद, श्रजीर्ण-नाशक, मस्तिष्क, हृदय, यकृत् श्रीर श्रांतिरक इंदियों की वळकारक है। इसकी भूनी हुई मींगी शीतजन्य कास में गुणकारी है। उष्ण प्रकृतिवालीं की हानिकारक है।

द्र्पनाशक—श्रनार का रस।
प्रतिनिधि—चिरैांजी श्रीर चिछगोजा।
मात्रा—१-२ तोले।

प्रयोग-१. इस वृत्त की छाल कृमिनाशक श्रीर खच्छता-कारक है। इसकी चबाने श्रीर दांतों पर मलने से होंठ सुंदर श्रीर लाल हो जाते हैं; इस कारण पंजाब की खियाँ इसका व्यवहार करती हैं। श्रांतों के कीडे नष्ट करने के लिये छाल का काढ़ा पिलाया जाता है। पत्ते संकोचक श्रीर बलकारक होते हैं। पत्तों का काढा क्रमिनाशक तथा सुजे हुए एवं मवादवाले घावें पर गुणकारी है। फल श्रामवात की धीरे धीरे नाश करनेवाला है। इसकी पुरानी गिरी खाँसी उत्पन्न करनेवाली श्रीर सड़ी रोग उत्पन्न करनेवाली है। ताजी गिरी खाने में उत्तम होती है। इसकी छाल ग्रीर फल के छिलके रंग के काम में आते हैं। इसकी गिरी पै। ष्टिक है; किंतु श्रधिक खाने से मुख में छाले पड़ जाते हैं श्रीर सिर में पीड़ा होने लग जाती है। गुड़ या मिस्री के साथ खाने से गुणकारी २. घाव श्रीर फीड़े की साफ करने के लिये इसके काढ़े से धोना चाहिए। ३. परो ब्राही श्रीर बलकारी हैं तथा उनका काथ कृमिनाशक है। ४. कंठमाला पर इसके पत्ती का काढ़ा देना श्रीर उसी से गाँठ धोना लाभकारी है। ४. गठिया में इसकी गिरी खाने से फायदा होता है और रुधिर शुद्ध होता है। ६. इसकी खाने श्रीर बगाने से विष का प्रभाव नष्ट होता है । ७, नहरुत्रा (स्नायुकः) की सूजन पर







THE THE

इसकी छाल की पानी में पीसकर गरम करके लेप करना और पट्टी वांधकर सेंकना लाभकारी है। १४-२० दिन में इस प्रयोग से ऋत्यंत लाभ होता है। इ. बादी की पीड़ा में ताजी पीसी गिरी का लेप करके, ईंट गरम कर, उस पर जल छिडक. कपड़ा लपेटकर इससे सेंक करने से फायदा होता है। दाद में प्रातःकाल, हाथ-सुँह घोकर, दाँतों से गिरी केा बारीक पीसकर लेप करने से लाभ होता है। १०. दाँत साफ करने थ्रीर उनके कीड़े नष्ट करने के लिये इसकी छाछ की दातुन करना उत्तम है। ११. श्रफीम श्रीर भिलावें के विष पर गिरी खाना लाभजनक है। १२. नाडीव्रण (नास्र) पर सम भाग मोम मीठे तेल में गलाकर, पीसी हुई गिरी मिलाकर, लेप करने से फायदा होता है। १३. श्रांख की ज्योति बढाने के लिये दे। श्रखरोट श्रीर तीन हरीतकी की गुठली जलाकर, उसकी अस्म के साथ ४ दाना काली मिन्ने की खरल करके शंजन लगाना चाहिए। १४. इसका छिलका उबालकर पीने से जलाब का काम देता है। १४. रक्तार्श का रुधिर बंद करने के लिये इसके छिलके की अस्म की किसी विष्टंभी श्रीपध के साथ खिलाना गुणकारी है। १६. इसके कामल पत्तों का शीतल किया हन्ना काड़ा पिलाने से सब प्रकार के दस्त बंद हो जाते हैं। १७. चत में ताजे श्रखरोट का छिलका चाटवाले स्थान पर लगाने से बहुत लाभ होता है। १८. कान की पीड़ा में गरम किया हुआ पीले पत्तों का निचोड़ा हुआ रस डालना चाहिए। १६. श्वास रोग में ताजे श्रखरोट का मधु में डाला हुत्रा मुख्वा रात को सोते समय २ तीले की मात्रा में सेवन करने से बहुत लाभ होता है। २०. इसके छिलके की राख ऋतुमती स्त्री यदि मधु के साथ बत्ती बनाकर श्रंदर रखे तो ऋतु का श्राना रुक जाता है।

श्रखरीट का तेल —[हिं०] श्रखरोट का तेल । [सं०] श्रचीट तैल । [यू०] रेग्न श्रखरोट । [फा०] रेग्न चारमग्ज़। [श्र०] दुहनुक्लोज ।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — श्रखरोट का तेल सफेद श्रीर स्वाद में मीटा होता है। इसका स्वभाव गरम, तर, वायु के विकार, कफ श्रीर पित्त के विकारों की नष्ट करनेवाला, श्रीज बढ़ानेवाला, केशों की हितकारी, कफकारी, प्रायः श्रवयवीं की बलप्रद, प्रकृति की मृदु करनेवाला श्रीर चित्त की प्रसन्न रखनेवाला है। उष्ण प्रकृतिवाली के लिये गरिष्ठ है।

प्रतिनिधि-बादाम का तेल ।

श्रखरोट का तेळ बनाने की रीति-पहली किया— ४ सेर गिरी केल्हू में डालकर पेरे। जब वह महीन होकर तेळ छोड़ने लगे, तब एक सेर श्रीर डाल दे। जब श्रधिमी हो जाय, तब श्राध सेर मिस्री के दुकड़े छोड़कर पेरने से खली जम जाती है श्रीर तेल श्रलग निकल श्राता है। इसे छान-कर बेातल में सुरचित रखना चाहिए। दूसरी किया—िगरी की महीन कृटकर गाढ़े कपड़े की यें जी में भरकर यंत्र से दवाने से सफेद, पतजा थीर स्वादिष्ठ तें जी निकलता है। इस खली की पानी में उवाठने से जी तें जिक्कता है, वह हरे रंग का होता है। इसमें चमड़े की जलाने थीर फफोले उटाने की शक्ति होती है। ताजी गिरी का तें जुरानी गिरी के तें ज से अधिक मीटा होता है। पुराने तें छ से दुर्गिध आती है। यह तें ज्यों ज्यों पुराना होता जाता है, त्यों त्यों इसमें फफोले उटाने की शक्ति अधिक होती जाती है।

प्रयोग-१. सरदी लगने पर या विश्वचिका की ऐंडन में इसका मर्दन करना बहुत गुणकारी है। २, शरीर का शोध उतारने के लिये एक पाव गोमूत्र में १ से ४ ती ले तक तेल डालकर पिछाना चाहिए। ३. बादी से फूले हुए अर्श पर इसे लगाना हितकारी है। ४. श्रादित वात में इसकी मालिश करके बादी मिटानेवाली श्रीषधियों के काढे का वफारा देना उत्तम है। ४. कुच-शोध पर इसकी मालिश गुणकारी है। ६. पागल कुत्ते के विष पर ६-६ वंटे पर एक एक तोला तेल एक छटाँक गरम पानी में मिलाकर सेवन करते रहने से एक सप्ताह में शरीर से विष निकल जाता है। त्रखरार जंगळी-[हि॰] जंगली श्रखराट । दचिणी श्रखराट । देशी ग्रखरोट । [सं०] ग्रजोट । [वँ०] वन ग्रकरोट । वन श्रखरेग्ट । श्रकरेग्ट । श्रकोल । जंगली श्रकरेग्ट । [मरा०] जाफल श्रखोड । [मा०] जंगली श्रखराट । जंगली प्रंडा । जेलप । जाफला। अखोड। [गु०] अखोड़। अखोड़ा। [तै०] नाट श्रकोट वित्त । [क॰] नाट श्रकोडु । [द्रा॰] नाट्डु श्रकोट केाहै। [कच्छ०] श्रकरोट। [ता०] नाट्ट श्रकरोट्ट कोट्ट । [ते०] नाटु श्रकरोटु विट्ट । [खा०] नाट श्रकरोडु । [मला०] बदाम । बादाम । बुद्याह । केरस । कनिहरि । िसि०] कक्कुन । [वर०] टेा-सिक या-सी । [स्याम०] कनयिन। काक या उलिक। सकमन यऊ। [फा॰] गिर्द-गाने हिंदी। चहार मग्जे हिंदी। [अ॰] जोज बर्री। जौजे बर्री। खासिफे हि दी। [लै॰] Aleurites Moluccana Syn: Aleurites Triloba. [शं] The Belgaum Indian Walnut.

उपयुक्त नामों में अधिक नाम वे ही हैं जो वास्तव में अखरोट के हैं, इस कारण उनके पहले ''जंगली'' शब्द छगाना अस्ता है।

यह भारत के कई भागों में होता है, विशेषकर मलाबार में श्रिक पाया जाता है। वास्तव में यह मलाया टापू से ही हिंदुस्तान में जाया गया है। श्रव यह द्विण भारत के प्रायः सभी प्रांतों में श्रीर विशेषकर मदास में श्रिक होता है; क्यांकि मदास की भूमि इसके जिये श्रनुकूज होती है। वंगाल श्रीर उसके श्रासपास भी यह वाटिकाश्रों में लगाया जाता है। इसका वृच बड़ा, ४० से ६० फुट तक ऊँचा होता है श्रीर वारहों मास हरा-भरा रहता है। केमल शाखाएँ नए पत्ते, श्रीर धनहरे भूरे श्रधवा खाकी रंग के छे।टे-मोटे रोश्रों से भरे रहते हैं। पत्ते ४ से १२ इंच तक लंबे, बोड़े, श्रंडाकार श्रीर श्रनीदार होते हैं। पत्ते की डंडी २ से १ इंच तक लंबी होती है। शाखाश्रों के श्रंत में सफेद फूलों के गुच्छे लगते हैं। श्रीष्म ऋतु में फूल लगते हैं श्रीर फल लगकर सावन भादों तक पक जाते हैं। फल २ से २॥ इंच के घेरे में गोल होते हैं तथा बीज बड़े बड़े होते हैं। इसके फलों श्रीर छोटी शाखाश्रां पर गोंद लगता है। फलों का गोंद खारे के काम में श्राता है तथा गिरी से तेल निकाला जाता है।

गुग्-देष-फल की मींगी धारेग्य-जनक थीर पृष्टिकारी है। इससे तेल निकाला जाता है। तेल निकालने की किया वही है जो खलरोट के तेल की है। यह कहरुबा के समान होता है। साबुन के समान जम जाता है थीर जल्दी सूख जाता है।

प्रयोग—१. इसका तेज १-२ श्रोंस की मात्रा में श्रवश्य मृद्ध रेचन का काम करता है। ३ से ६ घंटे में श्रांतें साफ हो जाती हैं। एरंड के तेज के समान कोमल श्रोर श्रवश्य दस्त जानेवाजा है, घल्क एरंड के तेज से यह श्रव्ला समभा जाता है। इसमें विशेषता यह है कि न इसमें स्वाद होता है, न गंध होती है श्रोर न दस्त के समय कोई तकजीफ ही जान पड़ती है। जजन, श्रूज, मरोड़ श्रीर मतजी श्रादि नहीं होती। बलाबज के विचार से १ से ४ तोजे तक सेवन करना चाहिए। २. त्रया (घाव) को भरनेवाजा होता है। ३. गरिष्ठ भोजन के बद्धकेष्ठ पर इसके तेज या मींगी में बवूल का गोंद मिजाकर पेट श्रीर नजों पर लेप करना चाहिए। ४. यह खाने श्रीर जलाने दोनों के काम श्राता है। इसकी खली (पिन्याक) भी उत्तम रेवक है।

श्रखिल-उल मिलिक-[पं॰] तज बादशाही । कटीला । परंग । श्रखेड़ा-[गु॰] श्रोंगा । श्रपामार्ग । चिचड़ा ।

श्रखोड़-[गु॰] १. श्रखराट । श्रचोट । २. श्रखराट जंगली । वन श्रचोट ।

श्रखोड़ा-[गु॰, मा॰] श्रखरोट जंगली।

श्रलोर-[कारा॰] श्रलोरी-[पं॰]} अलरोट। श्रजोट।

श्चगंधक-[सं०] तेजवल । तुंवरु ।

श्रगंधिक-[सं॰] चेहार केष्ट्रा । सैावर्चेळ ळवण । सेांचर नेान । श्रगंधिका-[सं॰] बर्वरी । बनतुलसी ।

श्रगकरा-[ते॰] वाँक खेखसा। वंध्या कर्कोटकी। वन ककोड़ा। श्रगचे-[गु॰] श्रगस्त। सुनिद्रम।

अगज—[सं॰] १. शिलाजीत । शिलाजतु । २.तुंबर । तुंबुर ।

३. धनिया हरा । द्यार्द धान्ये । ४. वंदा । परगाङ्घा । वंदाक । स्रगज्ज खालोस-[फा॰] हींग । हिंगु । स्रगती-[ता॰] स्रगस्त । सुनिद्धम वृत्त । स्रगत्यो-[मा॰] संखिया । श्राखु पाषाण ।

त्रगथित्रा-[हि॰] त्रगथित्रा-[गु॰] त्रगथिया-[हि॰] त्रगथीत्रा-[गु॰] त्रगथीयो-[गु॰]

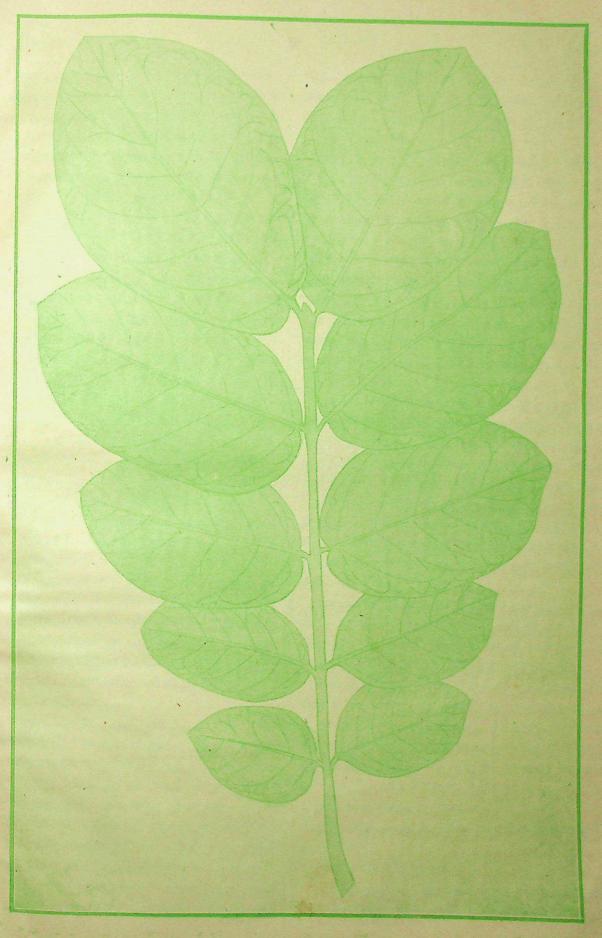
श्चराध्यो-[मा॰] संखिया। श्राखु पाषाण।
श्चराद्-[सं॰] १. चकवँड। चकमई। २. रोग। व्याधि। ३.
श्चीषध । दवा। ४. रोगमुक्त । व्याधिमुक्त । ४.
श्चारोग्य। नीरोग। ६. [सं॰] दहुमदीँ। दहुइ। कोटारी।
श्चंग सुंदर श्चादि। [हि॰] दाद-मर्दन। दादमारी। दाद-मर्दनी। [प्र॰, मरा॰] दाद-मर्दन। [द॰] दाद का पत्ता।
दाद का पात। विल्लायती श्चगती। [ता॰] शिमई श्चगति।
सिमई श्चगति। वंडु कोल्लि। [ते॰] सिमा श्चविछ। सिम
श्चविसि। सिम श्चविस्ता। [च॰] जादुमारि। [क॰, खा॰]
शिमे श्चगशे। सिमे श्चगसे। [द्वा॰] शिमे श्चगति। चंदुकोलि।
[मला॰] शिम श्चकदी। [लै॰] Cassia Alata. Syn:
Senna Alata.

श्रगद के वृष्ठ बंगाल, पश्चिमी प्रायद्वीप श्रोर बरमा श्रादि कई प्रांतों में होते हैं। यह चक्वँ हु श्रोर कर्सादी श्रादि की जाति की बूटी है। इसका वृज्ञ छोटा या माड़ बड़ा होता है। शाखाएँ मोटी श्रोर श्रंत में रोएँदार होती हैं। पत्ते १-२ फुट छंबे सीकें। पर १ से १०-१२ तक जोड़े छगते हैं। वे श्रंडाकार श्रोर २ से ६ इंच तक लंबे होते हैं। फूल छोटी डंडी पर श्राते हैं। उनके दल १। इंच छंबे, चमकीले, पीले रंग के श्रीर काली रेखाओं से युक्त होते हैं। फलियाँ ४ से म इंच तक छंबी श्रोर श्राध से पीन इंच तक चैड़ी होती हैं। उनमें १० या इससे श्रधिक बीज होते हैं। यह एक प्रकार का चकवँड है, जो बनों, उपवनों तथा प्रामों के पास उत्पन्न होता है।

गुण-दाद, पामा, खुजली श्रीर विचर्चिका राग का नाश करनेवाला है।

पत्तों श्रीर फूलों का सेवन बलकारी है। तामिल लोग इसके पंचांग को दैविल्य, कामेच्छा की कमी श्रीर विषेते जंतुश्रों के काटने पर व्यवहार में लाते हैं।

प्रयोग—१. इसकी जड़, पत्ते श्रादि श्रीषध के प्रयोग में श्राते हैं। वे पुराने रोगों की श्रपेचा नवीन रोगों में श्रधिक गुणकारी होते हैं। दाद के लिये यह एक बहुत ही श्रव्छी श्रीषध है। यह दूसरे चर्मरोगों में भी व्यवहत होता है तथा सपैविष पर भी लाभकारी है। गले के रोग, श्र्वास रोग श्रीर



अगस्

Eo 10]

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

चर्म रोग में इसके पत्तों श्रीर फूलों का काढ़ा दिन में कई बार देना चाहिए। २. दाद-रोग में इसकी जड़ की सुहागे श्रीर हरीतकी के साथ पीसकर लेप करना चाहिए। ताजे पत्तों की पीसकर लेप करने से या उनका कुछ दिनां तक दाद पर रगडते रहने से अथवा नमक के साथ पीसकर लेप करने से लाभ होता है। ३. मुखपाक या अुख के छाले में पत्तों के काढ़े से कुछा करना चाहिए। ४. खाँसी में इसके पत्तों की श्राहुसे के पत्तों के साथ चूसते रहने से लाभ होता है। १. बलवृद्धि के लिये पत्तों का चूर्ण मधु के साथ चाटने से फायदा होता है। ६. दाद में फ़लों की पुल्टिस लाभकारी है। ७. विपेले जीवें के दंश पर पत्ते का रस मछना चाहिए। ८. उपदंश के बाव पर पत्तों का रस लगाना अथवा पत्तों की उवालकर बफारा देना हितकारी है । १. पामा, खुजली थादि पर पत्तों की नीवू के रस में पीसकर लेप करना चाहिए। खुजली में पत्तों ग्रीर फूलों के काढ़े से कई बार धोना चाहिए। इसकी छाल में भी यही गुण है। १०. केष्ठबद्धता में पत्तों के चूर्ण की फंकी देनी चाहिए। ११. इसके पत्तों की सनाय के साथ उवालकर पिलाने से अथवा सूखे पत्तों का काढ़ा देने से दस्त आते हैं।

त्रगन—[हिं०] लवा। चंडूळ पत्ती। त्रगनचरामा ने काच—[ग्र०] त्रातसी सीसा। सूर्यकांत। त्रगन चिड़िया—[हिं०] लवा। भरद्वाज पत्ती। चंडूल। त्रगया—[य्०] यह यूनानी त्रोपधि इसी नाम से प्रसिद्ध है। रसायनी लोग इस बूटी की तलाश में बहुत रहते हैं। इसका रंग हरा श्रीर स्वाद कडुवा तथा तीला होता है।

गुण-दोष—तीसरे दर्जे में गरम श्रीर दूसरे में रुच है। यह श्रत्यंत कामोदीपक है। इसके स्वरस में गंधक को ४० दिन भिगोकर धूप में रखे। फिर २ रत्ती मात्रा पान के साथ सेवन करने से चुधा की श्रत्यंत वृद्धि होती है। इसके स्वरस के द्वारा भस्म किया हुश्रा वंग श्वास श्रीर कास के। गुणकारी है। त्वचा को हानि करनेवाला है।

द्पेनाशक—मुद्रां संख श्रीर गाय का घी। मात्रा—२ रत्ती।

अगया घास-[हिं०, वें०] रे।हिस घास नं० १। रे।हिष तृण ।
अगया वात-[उ०] अरनी । अग्निमंथ । गनियार ।
अगर-[हिं०] अगर । [सं०] अगुरु । प्रवर । लोह । राजहि ।
योगज । वंशिक । कृमिज । कृमिजंध । अनाधक आदि ।
[वं०] अगर । उगर । अगर काष्ठ । अगर चंदन । [मा०,
उ०, ते०, सु०, ता०] अगर । अगर । [मा०, क०, प०]
अगर । [द्रा०] अहिलकहे । अहरुकहे । अहरु कट्टई ।
[पं०] ऊद । ऊद फारसी । [स०] हिंदी अगर । [ता०]
अगिबिचंड । [ते०] कृष्णा अगर । अगई काष्टमु । [आसा०]
ससी । सची । विस्त्रत्व । [फा०] ऊद हिंदी । उदे हिंदी ।

उद्गर्का । अगरे हिंदी । अगर । [अ०] अगरे हिंदी । ऊद । श्रोद । श्रोदे हिंदी । उदे हिंदी । अगलुगेन । ऊद साम । [लै०] Aquilaria agallocha [अं०] Calambac; Aloe wood; Eagle wood.

श्रगर के वृच प्रव हिमालय, भूटान, श्रासाम, खासिया पहाड़, सिलहट, मालावार, मलगायल और मनीपुर श्रादि प्रांतों में पाए जाते हैं। यह वृच बहुत बढ़ा श्रोर ऊँचा होता है। वारहों मास हरा भरा रहता है श्रीर छे।टी के।मल श्राखाश्रोंवाला होता है। छाल पतली होती है। लकड़ी सफेद, के।मल, चिकनी श्रीर काटने पर गंध्युक्त होती है। इसका सार भाग बहुत रह, काले रंग का श्रीर मधु के समान गंधवाला होता है। पत्ते र से ३॥ इंच तक लंबे, चाड़े, चमकीले, श्रंडाकार श्रीर श्रनीदार होते हैं। वे श्रन्य वृच के पत्तों की नाई पतकड़ में नहीं गिरते। इस पर के फूल-फल श्रनहोनी बात से प्रतीत होते हैं। फूल सफेद श्रीर फल १-२ इंच लंबे होते हैं।

इस वृच की लकड़ी सफेद, कुछ पीलापन लिए खुरदुरी श्रीर रेशेदार होती हैं। इसमें बहुधा कीड़े छग जाते हैं। जब वह विगड़ने लगती है, तब उसको काटकर टुकड़े करके सूमि में गाड़ देते हैं। कुछ दिनों के बाद वे भारी, काले, तेलिया श्रार सुगंधित हो जाते हैं। सिछहट की श्रगर श्रच्छी होती है। जिसका रंग काला हो, जो वजन में भारी हो श्रीर पानी में डाछने से दूब जाय तथा पानी से निकालकर कपड़े या हाथ से जल का श्रंश पोंछ करके दियासलाई छगा देने से वह बत्ती के समान जलने छगे एवं उसमें से निकला हुआ धूम्र सुगंधित हो वह श्रेष्ठ है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष —गरम, कट्ट, तिक्त, पित्तकारक, हलकी, कान श्रीर श्रांख के रोगों का नाश करने-वाली तथा शीत, वात, कुछ श्रीर कफ के। हरनेवाली है। मंगळकारी श्रीर सुगंधित धूप में व्यवहार करने योग्य है।

यूनानी मतानुसार गुण-देषि—दूसरे दर्जे में गरम श्रीर तीसरे में रुच, प्राणवायु के। स्वच्छकारक, रोध-उदाटक, हृदय के। प्रसन्नकारक, स्नायु के। बलकारी, इंदिय, यकुत, पक्वाशय श्रीर श्रंत्रि के। बल देनेवाली, वातनाशक, गर्भाशय की शीतता के। लाभकारी, श्रोजप्रद श्रीर हृदय की व्याकुलता का नाश करनेवाली है। गरम मिजाज के। हानिकारक है।

द्र्पनाशक-कपूर श्रीर गुलाव।

प्रतिनिधि—दालचीनी, लैांग, केसर, चंदन, बालछुड़ श्रीर रूमी मस्तकी।

मात्रा-६ रत्ती से ३ माशे।

प्रयोग-१, श्रगर की उत्तम लकड़ी श्रीपध-प्रयोग में श्राती है। यह सुगंधित धृपादि में डाली जाती है। वात- रक्त में श्रार श्रीर सेंठ का काढ़ा पिलाने से श्रीर शून्य स्थान में इसका लेप करने से लाभ होता है। ३. श्रतिसार में श्रार श्रीर श्रतीस के चूर्ण का सेवन करना गुणकारी है। ४. छिदि वा वमन में श्रार श्रीर भूने हुए कमलगट की सफेद गिरी के चूर्ण को मधु के साथ चाटना चाहिए। ४. चक्कर (घुमरी) में इसकी ठकड़ी स्वान हितकारी है। ६. उवर की तृपा में इसकी काढ़ा पिछाना श्रीर उवर में श्रार श्रीर सतावर का काढ़ा देना हितकारी है। ७. पसीना रोकने के लिये इसका महीन चूर्ण मलना चाहिए। म. मंदामि श्रीर हृदय रोग में इसके चूर्ण को मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। १० श्रार का गोंद वात रोग में लेप करना हितकारी है। १० श्रार का तेल गर्म, कृमिनाशक, श्रोज को बढ़ानेवाला तथा स्नायु को हृढ़ करनेवाला है। वात रोग, गठिया श्रीर खुजली में इसकी मालिश करनी चाहिए।

स्रगर तुरकी-[का॰] वच। बचा। घोर बच।
स्रगर तुर्की-[का॰] अगर। स्रगुरु।
स्रगरसार-[हिं॰] काली स्रगर। स्वाद्वागुरु। स्वादु स्रगर।
स्रगरा-[हं॰] काली स्रगर। स्वाद्वागुरु। स्वादु स्रगर।
स्रगरा-[हं॰] वेवदाली। देवताइ। घघर वेल। सोनेया।
स्रगरा-[हं॰, वं॰] स्रगर। स्रगुरु।
स्रगरकाष्ट-[वं॰] स्रगर। स्रगुरु।
स्रगरकाष्ट-[क॰] सीशम। सिंशपा वृच।
स्रगर चंदन-[वं॰] स्रगर स्रगरु।
स्रगरसार-[हिं॰] काली स्रगर। कृष्णागुरु। स्वादु स्रगर।
स्रगरे तुर्की-[का॰] बच। बचा।

श्रगर। श्रगुरु।

प्रतिनिधि-देवदारु का तेल।

श्रगरे हिदी-[अ०, फा०])

श्रगलु शोठि-[क॰] पाठा। पाड़ी।

श्रगलुगेन-[श्र॰]

त्रगसि-[क॰] तीसी। श्रवसी। श्रतसी।
श्रगसे-[क॰, खा॰] १. श्रगस्त। [सं॰] श्रगस्त्य। वंगसेन।
श्रगसेध-[सं॰] वक। सुनिद्रुम। इत्यादि। [हि॰]
श्रगस्त-[हि॰] वसना। इतिया। इथिया। श्रगथिया।
श्रगस्त-[सं॰] प्रजोर गाछ। [मरा॰] इद्गा। [मा॰]
श्रगस्ते। श्राथ्ये। [क॰] श्रगचे। श्रगिचे। [गु॰]
श्राथिये। श्राथ्ये। श्राथ्ये। श्राथेये। [पं॰] इद्गा। इथिया।
[ते॰] श्रविसी। श्रगिसे। श्रवसि । श्रविसे। [ता॰]

अरगती। अर्गति। [द्रा०] श्रहत्ति। श्रत्ति । [तै०]

Sesbania grandiflora. Syn: Aeschynomene

अगसतमरि-[ता०] जलकुंभी । वारिपर्णी । कुंभिका ।

grandiflora. Syn: Agati grandiflora. Syn: Coromilla grandiflora. [য়৹] Large-flowered Agati.

श्रास्य का वृत्त मध्यम श्राकार का २० से ३० फुट तक ऊँचा होता ह। छाल हळके भूरे रंग की श्रीर चिकनी होती हैं। लकड़ी सफेद श्रीर कीमल होती है। पत्ते इमली के पत्तों के समान पर उनसे श्राकार में बड़े १-१॥ इंच छंबे, कि चित् श्रंडाकार, श्राध से एक इंच तक छंबे सींकों पर १०-१२ जोड़े समवर्ती लगते हैं। फूल २ से ४ इंच तक लंबे, तिरछे, लाळ या सफेद होते हैं। फलियाँ १०-१२ इंच छंबी, तिहाई इंच चौड़ी श्रीर चिपटी होती हैं।

यह वाटिकाओं में लगाया जाता है; विशेषकर दिज्ञण भारत, गंगा के श्रासपास, देश्याब ग्रीर वंगाल में श्रधिक होता है। फूल के रंगों के भेद से यह चार प्रकार का होता है। इनमें

फूल के रंगा के भद स यह चार प्रकार का हाता ह। इनमें से सफेद और किंचित पीले फूलवाले अगस्त का वृच प्रायः हिं दुस्तान के दिचिए और पूर्वीय प्रांत, अंतरवेद और राज-पूताना आदि अनेक प्रांतों में होता है। लाल फूलवाले अगस्त का वृच भी कहीं कहीं वाटिकाओं में पाया जाता है, किंतु बंगाल में अधिक देखने में आता है। इसका वृच दीर्घजीवी नहीं होता, प्रायः ७-द वर्ष में सूख जाता है। वर्षा ऋतु से शीत काल तक फूल-फल लगते रहते हैं। फूलों का शाक और बजके बनते हैं।

इसके वृत्त लगाने के लिये वर्षा ऋतु उत्तम समय है। बीज से श्रीर शाखा से गूल कलम करके पौधे तैयार किए जाते हैं। इसके लिये साधारण दुम्मट मिट्टी पर्याप्त है श्रीर खाद देने से वृत्तों का तेज बढ़ता है। लाल फूलवाला श्रगस्त बारहें। मास फूल देता है।

गुण-देष — यह शीतल, रूखा, वातकारक, तिक्त, कडुवा श्रीर शीतवीर्य है। पित्त, कफ, चातुर्थिक उवर श्रीर प्रतिश्याय (जुकाम) का नाश करनेवाला है। इसका फूल शीतल, स्वाद कडुवा, कसैला, पचने में चरपरा तथा चौथिया उवर, रतौंधी, पीनस, कफ, पित्त श्रीर वात का नाश करनेवाला है।

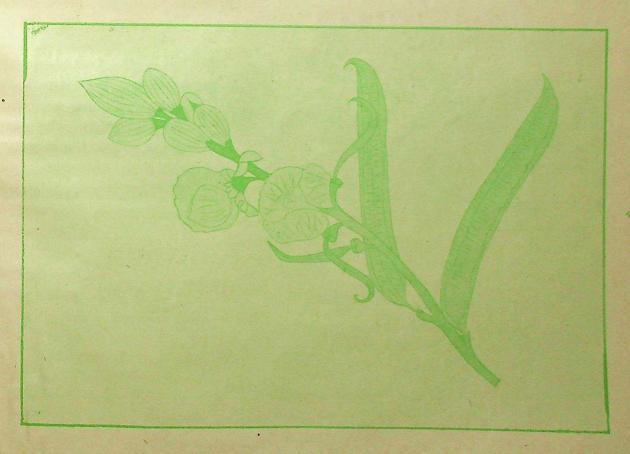
इसके पत्ते चरपरे, कडुवे, भारी, मधुर, किंचित् गरम तथा कृमि, कफ, कंडु, विष श्रीर रक्त-पित्तनाशक हैं।

इसकी फली सारक, बुद्धिवर्धक, हलकी, पचने में मीठी, कडुवी, स्मरणशक्ति के बढ़ानेवाली, त्रिदेख, शूळ, कफ, पांड-रोग, विष, राजरोग थार गुल्मनाशक है।

इसकी पकी फली रूखी और बादी है। इसका फूल शीतल, स्वाद में कडुवा, कसैला, पचने में चरपरा तथा चौथिया ज्वर, रतौंधी, पीनस, कफ, पित्त और वात का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. इसकी जड़, छाल, पत्ते श्रीर फूल प्रयोग में श्राते हैं। वंबई में इसके पत्तों श्रीर फूलों का श्रधिक उपयोग किया





अगाद पुष्प और फरह

00000

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar



MIN MIN

0 00 0

श्रा श्रा श्रा श्रा श्रा जाता है। नाक से शब्द करनेवाले प्रतिश्वाय थ्रोर शिरपीड़ा में इसके रस का उपयोग किया जाता है। नाक में इसके फूँक देते हैं जिससे नाक से मवाद निकलकर पीड़ा दूर हो जाती है। संधिवात पर लाल फूजवाले श्रगस्त की जड़ पानी में पीसकर लगाते हैं। जड़ का रस १-२ तेले की मात्रा में प्रतिश्याय में दिया जाता है।

पत्ते मृदुरेचक होते हैं। चेचक में छाल का हिम या फीट दिया जाता है। छाल बहुत संकोचक श्रीर बलकारी है। अरोड़ पर पत्ते की पुल्टिस लाभदायक है। दृष्टिमांच पर पत्ते का रस श्रीख में टपकाया जाता है। वंबई में इसके फूल श्रीर फलियाँ दाल में छे।इकर अथवा तरकारी बनाकर खाते हैं। फलियों की बनाई हुई तरकारी का स्वाद श्रच्छा नहीं होता; तो भी स्वाद पर ध्यान न देकर लोग खूब खाते हैं। इसके कीमल पत्तों, फूलों श्रीर फलियों की तरकारी बनती है: पर इसका श्रधिक सेवन श्रतिसार उत्पन्न करनेवाला है। इसकी छाल ग्राही होती है। २ ग्रतिसार में छाल के चूर्ण की फंकी देना लाभदायक है। ३. ससूरिका (चेचक, शीतला) में छाल का हिम या फाँट पिताना हितकारी है। थ. प्रतिश्याय में पत्तों श्रीर फूलों का रस सूँ घना चाहिए। ४. सिर की पीड़ा श्रीर उसके भारीपन में पत्तों श्रीर फूलों का रस नासिका द्वारा सस्तक में चढ़ाने से पानी गिरकर व्यथा नष्ट होती है। ६. कोष्ठ-बद्धता में पत्तों का काढ़ा देना चाहिए। ७. चाट श्रीर चाट की सूजन पर पत्तों की पुल्टिस बांधना हितकारी है। म. चातुर्धिक ब्वर में फूल या पत्तों का रस सूँघना चाहिए। ६. वात रोग श्रीर गठिया की सूजन पर लाल फूल के श्रगस्त की जड़ को पानी में पीसकर गरम करके लेप करना हितकारी है। १०. धुंध में फूलें। का रस र्थाल में टपकाना गुणकारो है। ११. रतौंधी में फूलों का शाक खाना श्रच्छा है। १२. खुजली पर इसके रस का मर्दन करना चाहिए।

२. मोलसिरी। बकुल वृत्त । मोलसरी।

श्रगस्तिकुसुम-[सं०]
श्रगस्तिद्व-[सं०]
श्रगस्तिद्व-[सं०]
श्रगस्तिद्वम-[सं०]
श्रगस्तिदुम-[सं०]
श्रगस्तिपुष्प-[सं०]
श्रगस्तिया-[हि०]
श्रगस्तया-[सं०]
श्रगस्त्याक-[सं०]
श्रगस्त्याक-[सं०]
श्रगस्त्याक-[सं०]
श्रगस्त्याक-[सं०]
श्रगस्त्याक-[सं०]
श्रगस्ता वक वृत्ता हद्गा ।
श्रगस्त्याक-[सं०] भोजा गृहंधूम ।
श्रागिचे-[क०] श्रगस्ता वक वृत्ता ।
श्रागिचे-[क०] श्रगस्ता वक वृत्ता ।

ग्रगिया-[हि॰] त्रिंग्या खड़-[हिं॰] भूतृण । भूस्तृण । शरवान । रोहिस त्रिगया घास-[हिं॰] ग्रगिर-[सं०] चीता। चित्रक चुप। ग्रगिवथ-[उ०] ग्रश्नी । ग्रप्तिमंथ । गनियार । ग्रगिशचेट्टु-[ते॰] कुड़ा। कुटन वृच। श्रगिसे-[ते०] श्रगस्त । वक वृत्त । त्रशंजा-[फा॰] हींग। हिंगु। अगुइकाष्ट्रमु-[ते०] यगर। यगुरु। श्रगुयाबात-[उ०] श्ररनी । श्रप्तिमंथ । गनियार । त्रगुर-[पं॰] त्रगुरु-[सं॰] } त्रगर। श्रगुरु। अगुरु-[सं०] शीशम। शिंशपा बृज्ञ। अगुरुगंध-[सं०] होंग । हिंगु। त्रगुरुश्रिश्रपा−[सं∘] शीशम काळा। कपिळ शि'शपा। काळा शीशम। त्रगुरुसार-[सं॰] काली श्रगर । कृष्णगर । स्वादु श्रगर । त्रगुरुखारा-[सं॰] शीशम। शि'शपा। त्रगृद्-[सं०] प्रंड सफेद । स्वेतैरंड । सफेद श्रारंड । त्रगृद्गंध-[सं०] १. हींग। हिंगु। २. प्याज। पर्वांडु। ३. कस्तूरी । मृगनाभि । ४. छहसुन । छशुन । त्रगेथ-[हि॰] श्चगेथु-[पं॰] थरनी । धमिमंथ । गनियार । गनियछ । अगेथू-[वं०] श्रगेथूरनी-[हिं0] त्रगोकर-[ते॰] खेखसा। कर्कोटकी। खेकसा। चटइल। श्चग्गलिचंड-[ता॰] श्चगर । श्चगुरु । **श्रग्नद्-**[वँ ०] पाठा । पाढ़ी । त्र्राग्न-[सं॰] १. चीता । चित्रक । २. भिलावाँ । भङ्घातक । ३. नींबू। नि बूक। ४. जठराग्नि। पित्त (पचानेवाली शक्ति) **४** ॥ या। यातिश। श्रग्निक-[सं॰] १. बीरबहूरी । इंद्रगोप कीट । २. मिलावाँ । भहातक। ३. चीता। चित्रक चुप। श्रश्चिकाष्ट-[सं॰] १. करील । करीर । २. अगर । अगुरु । ३. शमी । बिक्रा । साई गाख । श्रद्भिगभे-[सं०] १. श्रंबर । श्रद्भिजार । २. श्रातिशी शीशा। सूर्यकांतमि । त्रक्षिगर्भा-[सं॰] १. शमी । विकुर । २. मालकांगुनी वही । महाज्योतिष्मती । बद्दी मालकंगनी । श्रग्निचूड़-[सं॰] } सुरगा। सुर्गा। कुक्कुट पची।

श्रिप्तज-[सं०] श्रंबर। श्रंबर श्रशहव। श्रिप्तजार।
श्रिप्तजात-[सं०] कोई कोई कहते हैं कि श्रिप्तजार श्रंबर
श्रिप्तजार-[सं०] से एक भिन्न वस्तु है श्रोर इसका वृज्ञ
श्रिप्तजाल-[सं०] पश्चिमी समुद्र के किनारे होता है तथा
श्रिप्तजार नाम से प्रसिद्ध है। यह देखने में लोहित वर्ण का
श्रीर स्वाद में कडुवा होता है।

श्रिशिजिह्वा-[सं०] किल्हारी। लांगली। करियारी। श्रिशिजिह्विका-[सं०] के किल्हारी। लांगली। करियारी। श्रिशिजवाला-[सं०] १. गजपीपल । गजपिप्पली। २. चन्य। चिका। चाव। ३. किल्हारी। लांगली। ४. जलपीपल। जलपिप्पली। १. धातकी। धव। धवई। ६. धत्रा सफेद। श्वेतधुस्तुर।

श्रीयद्रश्य-[सं०] श्राग से जलना। इसकी गणना श्रागंतुक रोगों में है। यह रोग दो प्रकार का होता है—एक तेल श्रादि से जलना; दूसरा तप्त, जोहे श्रादि श्रीर श्रिप्त से दग्ध होना। दें।नों प्रकार के श्रिप्तरुघ के चार मेद होते हैं— १. प्लुष्टद्रश्य-जिसमें शरीर का वर्ण बदल जाय। २. दुद्रध-जिसमें दाह, पीड़ा श्रीर फोड़े हो जायँ तथा जो बहुत दिनों में मिटे। ३. सम्यक् दग्ध—जिसमें श्रंग का वर्ण तांबे के समान हो, दाह श्रीर पीड़ा हो तथा फेले नहीं; श्रीर ४. श्रितद्रश्व, जिसमें त्वचा श्रीर मांस सब दग्ध होकर शरीर से पृथक् हो जायँ, नसं, स्नायु, हड्डो, संधि इत्यादि दग्ध हो जायँ, उनमें श्रश्यंत पीड़ा श्रीर दाह हो तथा ज्वर, तृषा, मूच्छां हो श्रीर जिसमें श्रकुर देर से निकले।

साधारणतः यह रोग तीन मागों में विभक्त हो सकता है; जैसे—१. साधारण दग्ध—जिसमें जला हुन्ना स्थान प्रायः लाल होकर फूल जाय या उसमें थोड़ी देर तक श्रत्यंत जलन मालूम हो तथा तत्काल छाले या फफोले पड़ जायँ। २. गंभीर दग्ध—जिसमें जले हुए श्रंग का थोड़ा या बहुत सा चमहा जलकर खराब हो जाय, उसमें कहीं कहीं ऊपर को उमरे हुए, नरम, मोटे, धूसर या बादामी रंग के दाग या चकत्ते से पढ़ जायँ तथा उन चकत्तों के चारों श्रोर छोटे छोटे फफोले पड़ें या छाली हो जाय। श्रीर ३. सौदातिक दग्ध—जिसमें शरीर का एक स्थान या कई स्थान बहुत देर तक श्रत्यंत तीक्ष्ण श्रिप्त से जळते रहें।

इस राग की नाशक श्रीषिधर्य श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या—श्रनार नं॰ ३१। श्राम नं॰ १६। श्रालू नं॰ २। इमली नं॰ ३४। कपास नं॰ ४, २८। कपास के बीज नं॰ ४, १३। करंड नं॰ १। करेला नं॰ २४। कायफल नं॰ ६। केळा नं॰ ८। केश नं॰ १। कहरुवा नं॰ ४। कोयला नं॰ ३। खैरसार नं॰ १२। गाजर नं॰ ४। गिलोय नं॰ ६। गेहूँ नं॰ १३। गोरखपान नं॰ ६। घीकुँश्रार नं॰ २३, ३४। चुना नं० २४, ३१, ४१, ४३। चें। छाई नं० २७। जो नं० १०, २१। जासुन नं० ४०। सरवेर नं० २। तिल नं० ७। तीसी नं० १८। तीसी का तेल नं० ८। घातकी नं० १०। नारियल नं० ४। नील नं० ६। परवल कडुवा नं० ३। पाढ़र नं० ४। पीपल नं० १६। बड़ नं० ३१। बधुआ नं० ८। बादाम जंगली नं० ४। बिहीदाना नं० ८। वेर नं० २४। सधु नं० ४०। सुलेटी नं० ४। मेथी का साग नं० ३। मेंहदी नं० ४। राल नं० १०। लोगा बड़ी नं० ७। सफेदा नं० १। सरिवन नं० ४। सिरका नं० १४। हरीतकी नं० १०। होंग नं० ८।

श्रशिद्मनक-[सं॰] श्रग्निद्मना-[हिं॰] श्रग्निद्मनी-[सं॰] श्रग्निद्मनी-[सं॰] श्रग्निद्वना-[हिं॰]

श्रित्मनी ज्ञुप जाति की वने।पिध धमासे का भेद है। कुछ वैद्य इसकी दौने का भेद मानते हैं। इसका चित्र शालिग्राम निघंदुभूषण से उद्धत है।

गुण-देशि चरपरी, गरम, रूखी, वात श्रीर कफनाशक, रुचिकारी, श्रम्न-प्रदीपक, हृदय की हितकारी तथा वात, कफ, गुल्म, वायगीला श्रीर प्लीहा का नाश करनेवाली है। श्रानिदीपन-[सं०] वरुन। वरुण वृच।

<mark>श्चाग्निदीप्ता</mark>-[सं०] मा<mark>लकंगनी घड़ी। महाज्योतिष्मती</mark> लता। बड़ी मालकांगुनी।

त्रिग्निधमन-[सं०] वकायन । महानि व । घोड़ा नि व । त्रिग्निनिर्यास-[सं०] त्रिग्निनिर्यास-[सं०] हे त्रंबर । त्रिग्निजार ।

श्रग्निपत्री-[सं॰] भूतृषा। भूस्तृषा। श्रगिया। रोहिस घास। श्राग्निपाली-[सं॰] चीता। चित्रक।

श्रिग्निफला-[सं०] मालकंगनी बड़ी। महाज्योतिष्मती छता। श्रिश्चित-[सं०] १. से।ना। स्वर्णधातु। २. श्ररनी। श्रिश्ममंथ। गनियार।

त्रांग्नभ-[सं०] सोना । स्वर्ण ।

अग्निभा-[सं०] मालकंगनी बड़ी। महाज्योतिकाती लता।

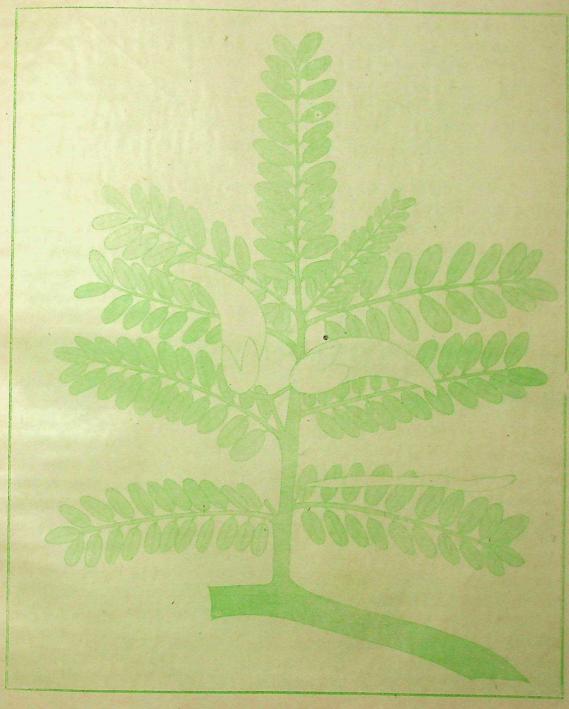
त्र्राग्निभु-[सं॰] १. सोना । स्वर्ण । २. जल । पानी । त्र्राग्निमंथ-[सं॰] त्ररनी । गणिकारिका।

त्राग्निमणि-[सं॰] त्रातशी शीशा । सूर्यंकांतमणि ।

त्रग्निमथन-[सं०] त्राती । गणिकारिका । त्रग्निमय-[सं०] विधारा । बृद्धदारु ।

श्चाग्नमांद्य-[सं०] मंदाग्नि । [श्र०] जोफ-उल्-मेंग्रदा ।

जिसमें थोड़ा भी किया हुआ भोजन भली भाँति नहीं पचता उसकी "मंदािश" कहते हैं। मनुष्य की कफ की अधिकता से मंदािश होती है, श्रीर मंदािश से "कफज रे।" उत्पन्न होते हैं।



अगस्त सफेद

पृ० २२]

प्रे. प्रे. प्राप्तकालय ८६ मु (०) प्राप्तकालय ८६ मु (०) प्राप्तकालय ५० २०२ विषय संख्या आगत नं ० लेखक			
- दिनांक	सदस्य संख्या	दिनांक	सदस्य संख्या
-			



शाजकल पढ़े-लिखे भारतवासियों में श्रिष्ठकांश ऐसे हैं जो इस रोग के शिकार हो रहे हैं। उनका श्रामाशय या कोछ ठीक-ठीक काम नहीं करता। वे लोग इसको मामूली बात समसते हैं, परंतु पीछे इसी से श्रनेक प्रकार के रेगा उत्पन्न हो जाते हैं। इस रोग का बीज प्रायः विद्याभ्यास काल में ही उत्पन्न होता है; श्रीर यह ऐसा दुष्ट रोग है कि एक बार इसका श्राक्रमण हो जाने पर जीवन-पर्यंत कुछ न कुछ बना ही रहता है। जो लोग श्रिष्ठकतर मस्तिष्क का काम करते हैं श्रीर व्यायाम तथा श्रंग-संचालन का जिनको कम श्रवसर मिलता है एवं जिनके भोजन श्रीर विश्राम का प्रवंध उपयुक्त नहीं होता, जिन्हें स्नान के उपरांत तुरंत भोजन की श्राइत होती है श्रीर जो चाय तथा कहने का श्रिष्ठक व्यवहार करते हैं, वे इस रोग से श्रिष्ठक पीड़ित होते हैं। ज्यों-ज्यों श्रवस्था श्रिष्ठक होती जाती है, त्यों-स्यों कष्ट भी वहता जाता है।

इस रेग की नाशक श्रीपिधयाँ श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या-शकरकरा नं १६। श्रार नं दा श्रजमीदा नं ७। अजवायन नं० ४, ४, १२। अजवायन का तेल नं० १। श्रतीस नं १२। श्रद्रक नं १६, १७। श्रनंतमूल काली नं० ३। श्रफीम नं० २८। श्रवरक नं० १। श्रांबा हलदी नं० १। श्रामडा नं० २। श्रानी नं० १। श्राक लाल नं० १, २६। र्ग्रावला नं० २, ४। इमली नं० २२। इलायची बड़ी नं० ७ । ऊँट कटीरा नं० ३ । कंटकारी नं० २८ । कचनार लाल नं ०७। कटभी नं ०७। कन्ना नीवू नं ०७। करं ज नं ०२१। कलपनाथ। कलिहारीनं० १४। काकड़ासिंगीनं० १। कुचलानं० १०। कुटकी नं० ८। कुलंजननं० ४। कुलंजन बड़ा नं० ४, १०। कूट नं० १२। केला नं० १४। कैं। इं। नं० १। गंधक नं० ४, ३८। गिलोय नं० २०, ३०। गिलोय का सत नं० २६। गुड़ नं० ३। गूगल नं० ८। गेहूँ नं० १६। गोरची नं० ४। घीकुँवार नं द, ३६। घीकुँवार लाल नं द। घृत नं ६, १८। चना नं० २०। चना खार नं० १। चांगेरी नं० २। चिरायता नं ० १२ । चूका नं ० ४ । जी नं ० १४ । जस्ता नं ० ४। जायफल नं १३। जीरा सफेद नं २०, २४। ढाक नं० ७, २१। तुंबरु नं० २। तुलसी नं० ३३। तूत मीठा नं १। दंती बड़ी नं ० १०। धनिया नं ० २२, ३८। नमक नं ०६। नाड़ी हिंगु नं ० १०। नारंगी नं ० १३, १६। नारि-यज नं ६। नारियज दरियाई नं ० ७। नासपाती नं ०६। पपीता नं ६, १४। पाठा नं ११। पाताल गारुड़ी नं १४। पारा नं १४। पाषाणभेद नं ४। पिंड खजूर नं ११। प्याज नं० १४। पीपल (बृच) नं० ३३। पीपल नं० १४, २६, ३१, ४२। पुनर्नवारक्त नं० २४। पेठा नं० ४। बबूर नं० ४०। बरुन नं० ६। बहेदा नं० ८। बाय विडंग नं० ४। बेर नं० २ । बेख नं० ३८ । बेाल नं० ११ । भाग नं० ४,

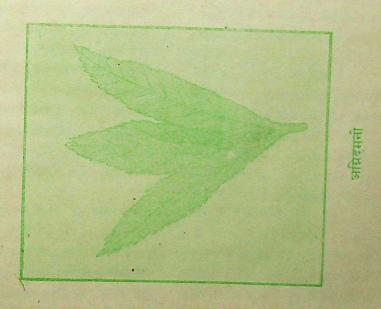
१४। मँगरेला नं०२। मकीय नं०३। मिर्च नं० १६। मानकंद नं० ३। मुंडी नं० १८। मुसब्बर नं० २। सीगा नं० १४। राई नं० १। राई काली नं० ६, १२। राख नं० ७। लाल मिर्च नं० १२, १४। लोहा नं० १०। लींग नं० २, १२। शिलाजीत नं० ३४। सतिवन नं० १। सत्या-नाशी की जड़ नं ० १। सनाय नं ० द । सरफोंका नं ० ३। सहि-जन नं० १२, १७। सिंगरफ नं० ४, ६। सुहागा नं० ७। सेंघा नमक नं० २। सेंांठ नं० १३। सो। श्रा के बीज नं० ३। सोना पाठा भेद नं० २। सोनामक्ती नं० १। हड्जोड़ी नं० २। इरिताल नं० २२। इरीतकी नं० ६। हीरा नं० १। हुरहुर नं० १०। त्रियमाळी-[सं॰] चीता । चित्रक । अग्निमुख-[सं०] १. भिलावी। भछातक। २. चीता। चित्रक। ३. क्स्म के फूल। कुसुंभ पुष्प। श्रश्मिखी-[सं॰] १. भिलावाँ। भछातक। २. कलिहारी। लांगली। ३. गिलाय। गुहुच। गुरुच। त्रश्चिरजा-[सं०] } बीर बहूटी। इंद्रगोप कीट। श्रक्षिरज्ञु- [सं∘]∫ त्राज्ञयहा-[स॰] स्रश्निराहिणी-[सं॰] } मांस रोहिणी। रोहिनी। मांस रोहिनी। त्रश्चित्वत्र-[सं०] भिलावाँ । भलातक । अग्निवती-[सं॰] भृतृष । भूस्तृष । अग्नि वल्लभ-[सं०] १. शाल । सालू वृत्त । सलुया । २. राछ। सर्ज निर्यास। ग्रिग्निवीर्य-[सं०] सोना। स्वर्ण धातु। श्रग्निवीर्थ-[सं०] श्रग्नि चेंड्र पाकु-[ते॰]} कुरंड। करंडिका। श्रग्नि वेंद्रपाकु-[ते॰] त्रिग्निशिख-[सं०] १. कसूम। कुसु'म। वरं। २. केसर। जाफ-रान । ३. सोना । सुवर्ण धातु । ४. कलिहारी । लांगलो । ४. प्रतिकरंज। दुर्गंघ करंज। नाटा करंज। ६. जमींकंद। श्रोता। अग्निशिखा-[सं०] १. कलिहारी। लांगली कलिकारी। २. चै। ताई। तंडुलीय शाक। ३. चीता। चित्रक। ४. [ते०] कसूम। कुसुंभ। त्रग्निशंखर-[सं०] १. केसर । कुंकुम । जाफरान । २. कुसुम । कुसुंभ वृत्त । ३. किलिहारी । लांगली । ४. विशल्य-करणी। श्राग्नष्टोम-[सं॰] साम छता । सामबङ्घी । त्रप्रिसंभव-[सं०] १. कुसुम । कुसु^{*}म । २. त्रारंण्य कुसंभ। बनकसम।

श्रश्मिसंस्पशा-[सं०] पपरी । पपरी ।

श्रश्निसहाय-[सं॰] १. कबूतर । बन पारावत । जंगली कबू-तर । २. उल्लू । उल्लूक पची । ३. वायु । पवन । हवा । त्र्रिसार-[सं॰] रसीत । रसवत । रसांजन । श्राग्नस्फुलिंग-[ते॰] मूँ ज। रामसर। श्रग्र-[सं०] पन परिमाण, ४ तोला। श्रग्रज-[सं॰] नीलकंठ। भास पद्मी। श्रग्रधान्य-[सं॰] बाजरा । साजक । श्रग्रपर्णी-[सं॰] केंांछ । किर्वाछ । कपिकच्छु । श्राग्रपुष्प-[सं०] वत । वेतस । ेश्रग्रमांस-[सं०] हृदय। दिना। कलेजा। त्रप्रतोड्य-[तं∘] कसेरू छे।टा । चिंचोटक चुप । छे।टा कसेरू । त्राप्रलोहिता-[सं॰] बथुत्रा। वास्त्क शाक। **श्र**प्रया-[सं॰]) त्रिफला। फलत्रिक। (हरीतकी, बहेदृा श्रग्रा-[सं∘] र्श्वीर श्रावला) त्रिमा-[सं॰] १. शरीफा। श्रातृष्य। सीताफछ। २. राम-फला। एनाना। श्रघविर्णी-[व॰] मंड्कपर्णी। मंडुक पानी। श्रवाड़-[मु॰, मरा॰] } श्रोंगा। श्रपामार्गं। चिचड़ा। श्रवाड़ा-[मरा॰] } **त्रघेडी-[गु॰] १. श्रोंगा। श्रपामार्ग। २. काकर्जघा। मसी।** श्रघेड़ो-[गु॰] श्रांगा। श्रपामार्गः। श्रचरणा-[सं॰] योनिराग भेद । श्रवार-१. [६०] संधान । श्रुवार । [म०, प्र०] चिरौंजी । पयाल वृष् । श्रचित्यज-[सं॰] पारा । पारद । **श्रचिरपह्मव-**[सं॰] सतिवन। सप्तपर्णं वृत्त। छतिवन। श्रची-[ता॰] सोना पाठा । श्योनाक वृत्त । त्राच्छ-[सं०] १. गोंद पटेर । गु'द वृत्त । २. रीछ । भल्लुक । भालू। ३, बिछौर। स्फटिक। श्रच्छभस-[सं०] रीछ । भालू । भल्लूक । श्रच्छमल्लूक-[सं॰] र् त्रच्छिन्नपत्र-[सं॰] सिहारा । शाखाट वृत्त । सिहार । श्र**ञ्छुक** –[सं०] १. तिनिश। जारुल वृत्त । २. श्राच्छुक। रंजनद्रुम। त्रच्युतावास-[सं॰] पीपत । श्रम्बस्थ वृत्त । श्रजंभ-[सं०] मेढ़क। भेक। होता। श्रज-[सं०] १. वकरा । छाग । खसी । २. सोनामाखी । स्वर्ण-माचिक धातु। श्रजक-[सं०] १. वर्बरी नं० २ । श्रर्जक । २. तुल्सी । सुरसा । श्रजकर्ण-[सं०] १. बिजैसार। असन वृत्त । २. शाल बढ़ा। शाल भेद । बढ़ा शाल । श्रजकर्णक-[सं॰] १. बिजैसार । असन वृद । २. शार्ख घड़ा । श्रजकर्ण।

ग्रजकूलंग-[ता॰] ग्रसगंघ । ग्रम्वगंघा । अजकेशी-[सं॰] नील । नीली वृच । श्रजचोर−[सं०] बकरी का दूघ । छाग-दुग्ध । त्रज्ञत्तीरनाश-[सं॰] सिहारा । शाखोट वृच । सिहार । त्रजखर-[अ॰] १. जरांकुश। हरद्वारी जटा। २. रेाहिस श्रजखर मक्को−[श्र∘] रेघास । श्रगिया । त्रज्ञगंधा-[सं०] १. श्रजमोदा । श्रजमोद । २. तिलवन । श्रज-गंधिका। ३. वर्षरी। बनतुलसी। त्रजगंधि-[म॰] नीलाम्ली । काली पिठाली । श्रजगंधिका-[सं०] १. श्रजमोदा। श्रजमोद। २. तिलवन। श्रजगंथा। ३. वर्षरी। बनतुलसी। बनुई तुलसी। त्रजगंधिनी-[सं॰] मेड़ा सिंगी। सेपर्शंगी वृत्त । श्रजगर-[सं॰] बहुत बड़ा सींप । सर्प । स्रजगस्त्रिका-[सं०] १. वर्वरी । बनतुलसी । २. चुद्रोग भेद्र। फुंसी। बालकों के शरीर के समान वर्णवाली चिकनी, पीड़ा-रहित, मूँग के समान जो पीड़िका उत्पन्न होती है, उसकी "श्रज-गिछिका" कहते हैं। श्रजगल्ली-[सं०] वर्वरी । वनतुलसी । **त्रज्ञगार-[फा॰] सजी । स्वर्जिनार ।** श्रजजिसनय-[फा॰] सेंटा । कसब । त्रजटा-[सं॰] भुइँ र्घावला । भूम्यामलकी । पाताल र्घावला । त्रजड़ा-[सं॰] १. भुइँ र्थावला । भूम्यामलकी । २. कैंछ। कपिकच्छु । ३. लाल मिर्च । कटुवीरा । त्र<mark>ाजडाफल-[सं०] कै</mark>ांछ । किवाछ । शुकशि बी । त्र्या-[सं॰] जूही पीली । स्वर्णयूथिका । पीली जूही । त्रजदंडि-[सं॰]) वहादंडी। कंटपत्रफला। श्रजदंडी -[सं॰]) श्रंबरवेद । यह एक प्रकार की घास है। श्रजदा-[फा॰] श्रजदाकवीर-[फा॰]∫ इसका फूल सफेद रंग का जरदी लिए हुए होता है। त्रजनामक-[सं॰] १. सोनामाखी । स्वर्णमाचिक धातु । ३ रूपामाखी । तारमान्तिक धातु। श्रजनी-[सं०] इथजोड़ी । इस्तजोड़ि । श्रजपाड्-[सं॰] कप्रवाही। पँजीरी का पात। श्रजप्रिया-[सं॰] बेर छे।टा । छघुवद्री । त्रज्ञफारुतिब-[अ॰]) नख । नखी नाम गंध-दृब्य । श्रजफारुत्तीब-[४०] र् श्रजवला-[सं∘] १. तुनसी। कृष्णतुलसी। २. वर्बरी। ^{वर} तुलसी। श्रजबह-[घ॰] माई छे।टी । बादगर । छे।टी माई । श्रजभन्त-[सं०] बब्छ । कीकर । श्रजभन्ता-[सं॰] धमासा छोटा । चुद्र दुरालभा । हि गुन्ना ।





Digitized by Arya Samaj Foundation Chennal and eGangotri

श्रजमल-[सं०] गेहूँ। गोध्म। अजमा-[गु॰] १. श्रजवायन । यवानी । २. कपू रवल्ली । पँजीरी का पात।

श्रजमान-[हिं०] श्रजवायन । यवानी । त्रजमानु पत्रु-[गु॰]) कर्रवली । कर्रवेल ।

श्रजमानु पात्रं-[गु॰] **श्रजमायन-**िहि०] श्रजवायन । यवानी । जवाइन ।

श्रजमायन खुरासानी-[य्०] खुरासानी श्रजवायन । पार सीक यवानी।

श्रजमायन देशी-[यू०] श्रजवायन। यवानी। **अजमुद-[** मु॰] करप्स केाही । श्रजमोदा पहाड़ी। श्रजमुद्1-[द०] श्रजमोदा। श्रजमोद। त्रज्ञसूद-[हिं०, मु०] करप्स केाही । अजमीदा पहाड़ी । श्रजमृदा-[हि॰] श्रनमोदा । श्रजमोद । अजमेइ-[सिं०] बुई। कपूर मधुरा। श्रजमा-[गु०] श्रजवायन। यवानी।

श्रजमे।त-[हि॰]} श्रजमे।दा । वन-यमानी । श्रजमे।द् -[हि॰]

श्रजमीद कीही-[यू॰] करप्स केाही । श्रजमीद पहाड़ी। श्रजमाद खुरासानी-[हि॰] खुरासानी श्रजमाद। पारसीक श्रजमे।दा।

त्रजमोद् पहाड़ी-[हिं०] करप्स कोही। करप्स पहाड़ी। **श्रजमोदा-**[सं॰] १. श्रजमोदा । खराध्वा । मायूरी । दीप्यक । वसकुशा । कारवी । लोचमस्तका इत्यादि । [हिं॰] श्रजमीत । श्रजमोद् । श्रजमोद् । श्रजमूद् । [वँ०] श्रजमूद् । रांधुनी । चनु । वनयमानी । [द्रा॰] श्राशामदा । [द॰] श्रजसुदा । श्राजमुदा । श्रजवाँ । [म० प०] रांधुनी । [ता०] श्रशमटागन । तागम । श्रशमता श्रोमान । [ते॰] श्रजमीदा । वामा । श्रश-मदागां वेामा । श्रजमेादा वेामरु । [क॰] वेामा । [गु॰] वेाडी श्रजमोद । बोडी श्रजमो । [म०] श्रजमोदा वावा । कारंजा । [खा॰] श्रजमोदा वामा। [फा॰] करप्स। [श्र॰] बज्रुल॰ करप्स। [तै॰] Carum Roxburghianum. Syn: Opium involucratum, Ptychotes Roxburghiana.

भारतवर्ष के कई प्रांतों में इसकी खेती की जाती है तथा खेतों में यह श्राप ही श्राप भी उगती है।

पह चुप जाति की वनस्पति वर्षजीवी होती है। इसके चुप काति क, श्रगहन में उत्पन्न होते हैं श्रीर गर्मी में स्वकर चैा-मासे में नष्ट हो जाते हैं। पत्ते अनेक भागों में विभक्त रहते हैं। प्रत्येक भाग भ्रनीदार, कॅंगूरेदार या कटे हुए किनारेवाले होते हैं। फूल थीर फल इसे के रूप में अजवायन के फूछ-फब के समान बगते हैं।

श्रनेक वैद्य श्रीर श्रतार श्रमवश जंगली श्रजवायन की श्रज-मोदा मानकर व्यवहार में खाते हैं और देा एक निवंदुकारों ने इसका लैटिन नाम "सेसिली इंडिकम" Sesili Indicum लिखा है। परंतु वास्तव में यह नाम जंगली श्रजवायन का है जिसका विहार प्रांत में "घोड़ जवाइन" या "घोर श्रजवायन" कहते हैं छोर श्रजमोदे की नगह व्यवहार में छाते भी हैं। इसका पूर्ण परिचय ''अजवायन जंगली'' के श्रंतर्गत दिया गया है।

श्रजवायन जंगली का चुप ४ से १२ हंच तक ऊँचा श्रीर श्रनमोदे का १ से ३ फुट तक ऊँचा होता है।

त्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देशाय-कडुवी, चरपरी, तीक्ष्ण, श्रमिदीपन, गरम, उष्णवीर्यं, दाहकारी, बृष्य, बलकारी, हलकी, कफ ग्रीर वात के रोगों की दूर करनेवाली एवं कृमि, वमन, हिचकी श्रीर वस्ति रोंग का नारा करनेवाली है।

इसका श्रक वात श्रीर कफ-नाशक तथा वस्ति-शोधक है। यूनानी मतानुसार गुण-देशय-इ्वरे दर्जे में गरम श्रीर रूच, व्वास, रूच काश चौर आंतरिक अवयव के शित की गुग-कारी, वायु श्रीर श्रफरा की नाश करनेवाली, यकृत, प्लीहा श्रीर पथरी की दूर करनेवाली, मूत्र छानेवाली तथा चुवा श्रीर श्रोज का चालन करनेवाली है।

इसकी जड़, बीज की श्रपेचा चलवान्, संपूर्ण कफज रोगों श्रीर जले।दर में गुणकारी तथा श्राहार पचानेवाली है। बीज परिमास (वाष्प) श्रीर मृगी उत्पन्न करवाले श्रीर जड़ फेफड़े के लिये हानिकारक है।

दर्पनाशक - श्रनीसून, काहू के फूछ श्रीर मस्तगी। प्रतिनिधि - खुरासानी अजवायन, सौंफ और अजमीद पहाड़ी।

मात्रा-- २ से ६ मारो तक।

प्रयोग-१. प्रायः बीज ही श्रीषध-प्रयोग में श्राता है। यह हिक्का, छदि धौर वस्ति की पीड़ा में लाभकारी है तथा अग्नि-मांद्य में व्यवहत होता है। २. श्रूख रोग में इसके चुर्ण की फंकी काले नमक के साथ देनी चाहिए। ३. श्रफरे में इसके चूर्ण को गुड़ में गोली बनाकर सेवन करना हितकारी है। ४. वात-शूल में इसके। गुड़ के साथ श्रीटाकर पिलाना श्रष्टा है। ४. पसली, शूल थ्रोर श्रंग की वातज पीड़ा में इसको गरम करके बिस्तर पर दर्द की जगह के नीचे रखना चाहिए। ६. मूत्राशय की वातज पीड़ा में इसकी नमक के साथ कपड़े में र्वाधकर नलों पर सेंक करना छाभदायक है। ७. भूख बदाने के लिये इसके चूर्ण में नमक और पीपल का चूर्ण मिलाकर सेवन करना हितकारी है। इ. माजन के बाद हिचकी उत्पन्न होने पर इसको चूसकर रस निगवना उत्तम है। १. दाँतों की पीड़ा में इसकी धूनी देना गुणकारी है। १०. बालक की

गुदा के छोटे छोटे सफेद कीड़े नष्ट करने के लिये इसकी धूनी देना उपकारी है। ११. घाव पकाने के लिए इसकी गुड़ के साथ तेल में पकाकर दिन में कई बार बांधने से फायदा होता है। १२. वमन में लोंग की टोपी या फल और अजमीदे का मधु के साथ चाटने से लाभ होता है। १३. सूली खांसी में पान में रखकर सेवन करना चाहिए। १४. वातरेग में इसको तेल में पकाकर उस तेल की मालिश करनी चाहिए। १४. शूल में एक माशे सेंट के चूर्ण में इसका तेल १० वूँ द छोड़कर गर्म किए हुए सैंफ के अर्क के साथ सेवन करना चाहिए। १६. उदर रोग में इसको गुड़ के साथ ७ दिन तक सेवन करने से लाभ होता है। १७. पथरी में इसके दे। माशे चूर्ण के। एक तोला मूली के रस के साथ सेवन करना हितकारी है।

[सं०] २. खुरासानी श्रजवायन । पारसीक यवानी । ३. श्रजवायन । यवानी ।

श्रजमोदा श्रोमा-[ते॰] श्रजमोदा । श्रजमोदिका । श्रजमोद । श्रजमोदा ।

श्रजमोदा वामर-[ते॰] श्रजमोदा वामा-[खा॰] श्रजमोदा वावा-[मरा॰]

श्रजमोदिका-[सं०] १. श्रजमोदा । श्रजमोदा २. श्रजवा-यन । यवानी ।

श्रज्ञथा-[सं०] भाँग। विजया। भंग।

श्रजर-[सं०] सोना। स्वर्ण धातु।

श्रजरा-[सं०] १. विधारा भेद । जीर्ग फंजी जता । काला विधारा । २. कैंछ । किर्वाच । कपिकच्छु । ३. घीकुँवार । घृतकुमारी । ४. छिपकली । गृहगोधा ।

श्रजले।मा-[सं॰] } कैंछ । किर्वाच । श्राक्षगुप्ता । श्राक्षगुप्ता ।

श्रजवल्ली-[सं०] मेड़ासि'गी। मेषश्र'गी।

श्रजवाँ-[हिं॰, मु॰] श्रजवायन । यवानी ।

श्रजवादन—[हिं॰] श्रजवाण—[मा॰] श्रजवान—[हिं॰]

श्रजवान का पत्ता-[द०] कप्रविच्छा। कप्रवेछ।
श्रजवान के पत्ते-[कच्छ०] करप्स केहि। धजमेद पहाड़ी।
श्रजवायन-[हि०] श्रजवायन। श्रजवी। श्रजमेद पहाड़ी।
श्रजवायन-[हि०] श्रजवायन। श्रजवी। श्रजमेयन।
जवायन। [सं०] यवानी। यवानिका। व्ययंधा। ब्रह्मदर्मा।
श्रजमेदिका। यवसाह्मया। दीप्या। दीप्यका ह्लादि। [बँ०]
यमानी। योवान। [मरा०] श्रोबा। [ग्र०] श्रजमा। श्रजमे।
[क०] उंडु। [ते०] वासु। श्रोममी। श्रोमसु। [मरा०] उँवा।

[ता॰] ग्रमन । ग्रोमन । [कच्छ॰] चोहरा । [कारा॰] ज्ञितिह । [खा॰] ग्रोमा । ग्रोमु । [मा॰] ग्रजवाण । [फा॰] जीनान । नानख्वाह । [अ॰] ग्रमूने मुल्की । [वँ॰] यउयान । [मु॰] ग्रजवा । ग्रोवा । [फा॰] नानुखा । [अ॰] कमुन । [लै॰] Carum capticum.Syn: Lingusticum Ajowan Ptychotis Ajowan. [अं॰] The Bishop's weed Lowage Bishop's weed. Ajwa seeds.

भारतवर्ष में अजवायन की खेती अधिकता से की जाती है। उत्तर में पंजाब और वंगाल से लेकर दाचण तक इसकी खेती होती है।

इसका छुप वर्षजीवी श्रीर १ से ३ फुट तक ऊँचा होता है। पत्ते डालियों पर दूर दूर लगते हैं श्रीर धनिए के पत्ते के समान कटे हुए होते हैं। फूल छुत्ते की तरह सफेद श्रीर बीजकेष वारीक होते हैं।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण देख-पाचक, रुचिकारक, तीक्ष्ण, इलकी, श्रमि-प्रदीपक, पित्तकारक, स्वाद में चरपरी श्रीर कडुवी तथा शुक्र, शूल, वात, कफ, उदर कृमि, श्रफरा, गुलम श्रीर प्रोहा के। नाश करनेवाली है।

इसका श्रक-पाचक, रुचिकारी, दीपन तथा शूज, श्रति-सार तथा शुक्र का नाश करनेवाला है। विशूचिका के श्रारंभ में इसका सेवन करना गुणकारी है।

पत्ते का साग — अग्निकारक, रुचिकारक, गरम, चरपरा, कडवा, दीपन, पित्तकारी तथा वात, कफ और शूळ का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — तीसरे दर्जे में गरम श्रीर रूज, पाचक, द्वधा-वर्द्धक, रोध-वद्धाटक, मूत्र श्रीर श्रातंव प्रवर्तक तथा कफ-विकार, वायु-विकार, जलोदर श्रीर विशेषकर पथरी (श्रश्मरी) का नाश करनेवाली, गरम मिजाजवाले के हानिकारक, सिर में पीड़ाकारी श्रीर स्तनें। का दूध सुखानेवाली है।

दर्पनाशक—उन्नाब, धनिया श्रीर खाँड़ । प्रतिनिधि—मँगरैला श्रीर काला जीरा। मात्रा—र से ६ माशे तक।

प्रयोग—१. इसके बीज श्रीपध-प्रयोग में श्राते हैं। यह स्निग्ध, उत्तेजक, बलकारी, श्रपान वायु निस्सारक तथा मंदािष्ठ, श्रतिसार श्रीर विश्वचिका में लाभकारी है। यह प्रायः हींग, हरीतकी श्रीर सेंधा नमक के साथ व्यवहार में श्राती है। बाजार में श्रजवायन का श्रक मिलता है, जिसकी श्रारेजी में श्रोमम वाटर (Omum water) कहते हैं। श्रजवायन का सत्त श्रीर तेल भी बिकता है। ये चीजें मध्य भारत में उज्जैन श्रीर दूसरी जगह बनती हैं। २. प्रतिश्याय में इसके। श्राप पर गरम करके पतले कपड़े में पीटली विधकर सूँ धना चाहिए।

न

1 1]

d

ती

₹,

et,

ते-भ

रा, का

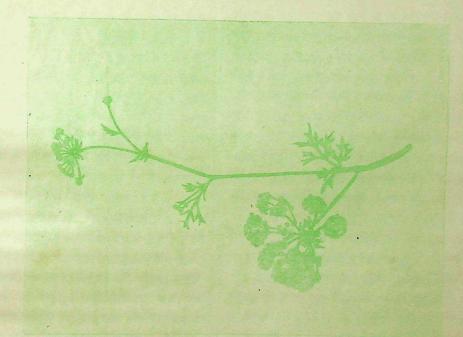
रम तिर तिर

रम नेां

यह भे में

यन नेन

ξl



अ जन्मक

श्रजवायन के कपड़क्रान चूर्ण का नस्य लेने से सिर दर्द, नज़ला, सर्दी से उत्पन्न हुआ जुकाम दूर होता है और दिमाग के कृमि नष्ट होते हैं। ३. श्रमरा में ६ माशे श्रजवायन के चूर्ण में शा मारो काला नमक मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। इसके चुर्ण की ३ मारो की मात्रा दोनें। समय गरम पानी के साथ सेवन करने से वायुं गोला का नाश होता है श्रीर पेट का फूलना वंद होता है। ४. मंदान्नि में अजवायन और सोंठ की पानी में ४ प्रहर सिगोकर पीसे श्रीर छानकर गरम करे, फिर उसकी नमक मिलाकर पीए तो लाभ होता है। ४. शूल, श्रकरा श्रीर मंदाशि में श्रजवायन, काली मिर्च श्रीर नमक के चूर्ण की गरम जल से प्रातःकाल सेवन करने से लाभ होता है। इंदायन के पके ताजे फलों में अजवायन भर कर रख दे, जब सूख जाय तब अजवायन का निकाल बारीक पीस उचित मात्रा में काला नमक मिलाकर रख छोड़े। एक तोले की मान्ना गरम जल के साथ देने से शूल, श्रफरा, पेट का दर्द आराम होता है। ६. वालक की छदि श्रीर श्रतिसार में मां के दूध के साथ इसका देना हितकारी है। ७. श्रालस्य में इसके चूर्ण का सेवन करना हितकारी है। प्र. कामीनमाद श्रीर मादक पदार्थों के सेवन का व्यसन छुड़ाने के लिये इसका व्यवहार करना उत्तम है। १. सूखी खाँसी में पान के साथ इसका सेवन करना चाहिए। १०. श्रतिसार में इसका चुर्ण, हिम, फाँट या काढ़े का सेवन करना हितकारी है। ११. कायले या मिट्टी खाने के व्यसन में इसके चूर्ण की फंकी देना हितकारी है। १२. चुधा श्रीर पाचन-शक्ति की वृद्धि के लिये घी, खाँड़ या पुराने गुड़ के साथ इसका छडड़ू बनाकर खाना चाहिए। १३. को छबद्धता पर ६-६ माशे हरें, पीपन, सफेद, मिर्च श्रीर सेंघा नमक का चूर्ण, ३ माशे लैांग का चूर्ण, एक तोला सावृत श्रजवायन, सबका ७ दिन तक जँबीरी नींवू के रस में भिगोकर तथा छाया में सुखाकर। सेवन करना चाहिए। १४. इनफ्लुएंजा (कफज्वर) में एक छटाँक श्रजवायन की ढोली पे।टली की सवा सेर पानी में पकाकर १० छुटाँक शेष रहने पर उतारकर शीतल कर पिलाने से लाभ होता है। १४. श्रजवायन की पानी में गाडा पीस दिन में दी बार लेप करने से दाद, चंवल, कृमि-जनित चर्म रे।ग, कृमि पड़े हुए वर्ग, श्रप्तिदग्ध स्थान श्रादि में लाभ होता है। १६. श्रजवायन का चूर्ण तीन माशे की मात्रा से दिन में देा बार गरम दूध के साथ सेवन करने से खियों का रुका हुआ रज खुल कर आने लगता है। १७. इसके पके हुए पैाधों के पंचांग का चार तैयार कर के उसकी एक रत्ती की मात्रा पान में रख कर खाने से कफज काश, श्वास राग, बदहज़मी, उदर शूळ, श्रफरा श्रादि त्राराम होते हैं। १८. इसके चूर्ण की ४ माशे की मात्रा देानें समय छाछ के साथ सेवन करने से पेट के कृमियों का

नाश हे।ता है! १६. जले हुए अजवायन के कपड्छान चुर्ण में सम भाग सेंघा नमक मिला कर सात दिन सुरमे की तरह खरत कर दे।नेां समय सळाई से श्रीक्षें में लगाने से श्रीक्षें की फूजी कट जाती है, दातों पर मखने से दात साफ होते हैं थौर मस्द्रों पर मछने से मस्द्रों का फूछना थौर दर्द थाराम होता है। २०. सम-भाग अजवाबन श्रीर फिटकरी की छाछ के साथ पीस कर सिर पर मछने से जूं एँ मर जाती हैं। २१. सम-भाग अजवायन और नौसादर के चुर्ण की ३ माशे की मात्रा से दोनें। समय सेवन करने से छीहा रेग श्राराम होता है। २२. वातज अर्थ में इसके चुर्ण की ३ माशे की मात्रा कुछ घी मिले हुए गरम दूध के साथ सेवन करने से लाभ होता है। २३. श्रजवायन, सेांठ श्रीर सेंघा नमक प्रत्येक के एक एक सेर चूर्ण में तीन छुटाँक गंधक का तेज़ाब भली भांति मिला कर ४-६ दिन के बाद सेवन करे। मात्रा १ माशा, श्रनुपान गरम जल। इससे सब प्रकार के उदर विकार नष्ट होते हैं।

श्रजवायन का तेल —देग-भभके द्वारा श्रकं खींचने पर श्रकं के जपर इसका तेल तैरता है। इसी श्रकं में कई बार श्रजवायन श्रीर पानी डालकर श्रकं खींचने से तेल श्रधिक प्राप्त होता है। तेल के जपर एक पदार्थ जम जाता है जिसकी श्रजवायन का फूल कहते हैं। श्राजकल श्रजवायन का सत्त श्रांगरेजी दवाखानों में श्रधिक मिलता है।

प्रयोग-१. मंदाग्नि के लिए पान में दे। बूँद तेल डालकर खाना हितकारी है। २. शूल में एक माशे दारचीनी के चूर्ण में २-३ वूँद छे। इकर सेवन करना चाहिए। ३, श्रजीर्थ में २-३ बूँद तेल जहसुन के साथ सेवन करना हितकारी है। ४. श्रफरा में इसका फूल सैांफ के श्रर्क के साथ देना हितकारी है। ४. शूल में इसी में ४ बूँद सैांफ का तेल मिलाकर पीने से लाभ होता है। ६. बाइटे में इसका तेल श्रीर सत मिलाकर मर्दन करना गुणकारी है। ७. कंठ, गले की नाली तथा गले के दाह, नासिका का पुराना त्रण, दुर्गेधदायक त्रण श्रादि पर तेल लगाने से लाभ होता है। ८. प्रजवायन का सस्व, शुद्ध कपूर श्रीर पुदीने का सत्त्व (पिपरमेंट) तीनें सम-भाग ले एक शीशी में एक एक कर डाछ कर मज़बूत काग लगा हिलाकर भूप में रख देने से थोड़ी देर में तैलवत् दव पदार्थ बन जाता है। इसमें से १०-११ बूँद की मात्रा सैांफ के अर्क अथवा पानी में देने से उदर शूल, बदहज़मी, श्रफरा, श्रजीर्थ, विशूचिका, मितली भादि में विशेष उपकार होता है।

अजवायन जंगली-[हिं॰] १. श्रजवायन जंगली नं॰ १। २. श्रजवायन जंगली नं॰ २। वन यवानी। वन श्रजवायन। श्रजवायन जंगली नं॰ १-[हिं॰] बन श्रजवायन। वन जवाइन । [सं॰] वन यवानी । वन यवानिका । [वँ॰] वन योवान । [मरा॰] किरमानी श्रजवा । [लै॰] Seseli Indicum. Syn: Ligusticum Diffusum.

यह भारतवर्ष के खेतों में सिवालिक की तराई से आसाम और कारोमंडल तक तथा बिहार श्रीर बंगाल में श्रधिक पाई जाती है।

इसका चुप वर्षजीवी होता है। शाखाएँ ४ से १२ इंच तक लंबी, श्रनेक प्रशाखात्रों के कारण सचन, सीधी श्रथवा फैली हुई रहती हैं। पत्ते प्रायः ३ भागों में विभक्त होते हैं। प्रत्येक भाग कटा हुआ, नुकीला श्रीर श्रनीदार होता है। फूल छत्ते के रूप में सफेदी लिए गुलाबी रंग के, फल गोल, बारीक, किंचित् लंबे श्रीर फीके पीले रंग के होते हैं।

कतियय वैद्य इसके। श्रजमोदा मानकर व्यवहार में लाते हैं। इसके। 'घोड़ जवाइन' कहते हैं।

इसके बीज प्राय: चैापायों के लिये श्रोपिध-प्रयोग में श्राते हैं। यह उत्तेजक, शूलनाशक, श्रातों की हितकारी तथा गोल कीड़े का नाशक है। चूर्ण की मात्रा २० ग्रेन से १ हाम तक।

श्रजवायन जंगली नं० २-[६०] बन श्रजवायन। बन जवाइन। [पं०] माशो। रांगस्त्रुर। मरिजहा। [लै०] Thymus Serpyllum,

यह हिमालय के गरम प्रांतों में काश्मीर से कुमाऊँ तक पाई जाती है।

यह चुप जाति की वनस्पति श्रनेक शाखाश्रों के कारण सबन, कि चित् रामयुक्त, ६ से १२ इंच तक ऊँची श्रीर घहुत सुगंधित होती हैं। पत्ते छेाटे छेाटे इंच के श्रष्टमांश भाग से चतुर्थांश भाग तक के घेरे में कि चित् श्रंडाकार होते हैं। फूछ बाब रंग के गुच्छों में श्राते हैं। फल बारीक श्रीर चिकने होते हैं।

पंजाब में इसका बीज कृमिश के समान व्यवहत होता है। हकीम लोग दृष्टिमांच, र्यांत की पीड़ा, दृद्ध रोग, मूत्र की रुका-वट भ्रादि पर इसके। व्यवहार में जाते हैं।

दंत-पीड़ा पर कभी कभी इसका तेल लगाया जाता है। फ्रांस में इसके पंचांग का काढ़ा, खुजली और अन्य चर्मरोगें। पर व्यवहार में लाया जाता है। यह नशे और शिरपीड़ा में लाभकारी है।

श्रज्ञश्टंगिका-[सं०] १. मेढ़ासिंगी । मेपश्रंगी । २. काकड़ासिंगी । कर्कटश्टंगी ।

श्रजश्रंगी-[सं॰] मेड़ासिंगी। सेषश्रंगी। श्रजश्रंगीक-[सं॰] फेटकिरी। फटकारिका। फिट्करी। श्रजहा-[सं॰] कैंछ। किर्वाच। श्रकशिंबी।

श्रज्ञहिजी-[ता०] देरा। श्रंकाट। श्रजांत्री-[सं०] वस्रांत्री । विधारा भेद । फंजी । श्रजा-[सं०] बकरी। छागी। श्रजान्ती-[सं॰] कठूमर। काकोटुंबरिका। के।ठा डुंबर। त्रजात्तीर-[सं०] बकरी का दूध । श्रजादुग्ध । श्रजापय । श्रजागर-[सं०] १. भँगरा। भृंगराज। २. साँप। सर्व। श्रजगर। श्रजाजि-[सं०] १. जीरा । श्वेत जीरक । २. काला जीरा कृष्ण जीरक । ३. कटूमर । काकाेदु विरिका । काेठा दु बर । त्रजाजिक-[सं॰] जीरा । पीत जीरक । सफेद जीरा। श्रजाजिका-[सं०] शुक्छ जीरक। श्रजाजी-[सं०] श्रजातक - [सं०] बकरी का मठा। छ।गी-तक। श्रजाद दरकत-[भ०] नीम। निंव वृत्त । **श्रजादनी**-[सं०] धमासा छोटा । चृद दुरालभा । छोटा धमासा। त्राजादुग्ध-[सं०] बकरी का दूध । छागी-दुग्ध । छागी-चीर। श्रज(पय- सं० विकरी का दुध । श्रजाचीर । श्रजादुग्ध । श्रजाप्रिय-[सं०] सरवेर । भूबद्री । श्रजाप्रिया-[सं०] बेर । बदरी । बैर। श्रजामांस-[सं०] वकरी का मांस । छागमांस । श्रजाश्टंगी-[सं०] काकड़ासिंगी। कर्कटश्टंगी। श्रजास-[४०] श्रालू बुखारा । श्राहक । श्रजास येजाब-[श्र॰] सिवार। शैवाल। श्रजाह्वा-कैंछ । कि वाच । श्रात्मगुप्ता । अजिन-[सं०] हिरन का चमड़ा। मृगचम्मी। मृगञ्जाला। त्रजिनपत्रा-[सं॰] चमगादङ् । चम्मेचट्या । चिमगादर । बादुर। त्रजिनपत्रिका-[सं॰] १. चमगादड़। चर्मचट्या। २. उल्लू। उल्क। श्रजिनपत्री-[सं०] चमगादइ। चम्मेपची। वादुर। त्र्रजिनयोनि-[सं॰] हिरन। मृग। श्रजिर-[सं०] मेढ़क। दर्दुर। दादुर। बेंग। श्रजिह्न-[सं०] श्रजीगर्त-[सं०] साँप। सर्प। श्रजीरन-[हिं०] _। श्रपच । श्रनपच । [फा०] तुरदमा । [यू०] श्रजीर्ण-[हिं∘] ∫ बद्हजमी। किंक्जियत। [श्रं∘] Dys pepsia, Indigestion. जिस राग में किया हुआ भाजन अच्छी तरह नहीं पचता



अजवायन जंगली नं १

20 36]

भोजन श्रच्छी तरह नहीं पचता तथा राटी, पूरी, फल इत्यादि भोजन के पदार्थों की खूब चवाकर न खाने से आवश्यकता से अधिक खाने से, अधिक जल पीने से, विषम भाजन करने से, मल-मूत्रादि के वेग की रीकने से, दिन में सीने से, रात्रि में जागने से, प्रकृति के विपरीत शीतज पदार्थ सेवन करने से, विना चुधा के भे।जन करने से, किसी प्रकार का परिश्रम न करने से, भोजन करके तत्काल से। जाने से, जठराग्नि की दुर्वेजता से एवं पाचक रस के श्रच्छी तरह से उत्पन्न न होने से भाजन किया हुन्ना पदार्थ न पचकर सन में खानि. शरीर में भारीपन, पेट में श्रफरा श्रीर चित्त में अम उत्पन्न करता है तथा बार बार पतले दस्त आते हैं। यह "अजीर्ण राग" कहा जाता है। कफ, पित्त श्रीर वात इन तीनां दाेषों के प्रकाेप से तीन प्रकार का श्रजीर्ण होता है। जैसे कफ के प्रकाेप से 'आमाजीर्ण', पित्त के प्रकीप से 'विद्य्धाजीर्ण' श्रीर वाय के प्रकाप से 'विष्टब्धाजीर्थ' होता है। इनके सिवा "रसशेषाजीर्थ", ''दिन-पाकी श्रजीर्ण'' श्रीर ''प्राकृताजीर्ण'' ये तीन प्रकार के श्रजीर्ण भी श्रायुर्वेद-शास्त्र में कहे गए हैं।

इस राग की नाशक ग्रेषिधयाँ श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या—श्रावायन का तेल नं २ । श्रद्रक नं १ । श्रफीम नं १७, १८। एरंड नं १ ३१। कपास वागी नं १ । कटेली नं १०। कुचला नं १०, २१। केसर नं १६। गंघक नं १ २२। गुड़ नं ११। घीकुँवार नं १८। चनाखार नं १२, १। चिरायता नं १। चीता लाल नं १। चूना नं १८, १४। जो नं १। जामुन नं १३। दही नं १२। धनिया नं १६। पिस्ता नं १। पीपल नं १७, ३१। पुदीना नं ११। बड़ नं १। वेल नं १४। मँगरेला नं १। सौंग नं ११। रोहिस घास नं १। लता करं ज नं ११। लोंग नं ११। सत्यानाशी की जड़ नं १। समुद्रफल नं १५। सोझा के बीज नं १। हड़जोड़ी नं १। होंग नं १६।

श्रजीर्गाजरण्-[सं०] कच्रा । कच्रा । श्रजीसाडा-[सं०] श्रोंगा । श्रपामार्ग । श्रजुटा-[सं०] भुइँ श्रांवला । सूम्यामलकी । पाताल श्रांवला । श्रजेपाल-[सं०] श्रजुंन । ककुभ वृत्त । श्रजेपाल्यो-[सं०] श्रजंत । ककुभ वृत्त । श्रजेपाल्यो-[सं०] जमालगोटा । जैपाल । श्रजेपाल्यो-[सं०] श्रजवायन । यवानी । श्रट-[संथा०] श्रनंतमूल भेद । श्रटकार-[संथा०] केवाचीनी । द्वीपांतर वचा । तोपचीनी । श्रटकुरा-[संथा०] कुड़ा भेद । श्रटकुरा-[संथा०] कुड़ा भेद । श्रटकुरा-[संथा०] केवानार लाल । रक्त कांचनार वृत्त । लाल स्वनार ।

श्रदरष-[सं०] श्ररहष-[सं०] श्रद्भा। वासक। श्राटरूप। श्ररुस। वाकस। अट**रूपक**−[सं∘] श्रटवि-[क॰] बन, कानन, जंगछ । अश्रयी लता-[सं०] कुम्हार वृत्त । कुंभाडुया । श्रटसट-[पं०] पुनर्नवा । गदहपूरना । श्रदि-[सं०] शरारी । दिदिहरी पत्ती । त्र**टिका-**[सं॰] वंशपत्री । वेखुपत्री । श्य्यदिसार-[सं०] परिवारा पत्ती । पयरिया चिद्विया। अटुपलइ-[ता॰] वेद् । पानीजमा । लैला । श्रदोसंग-[संता०] बराहीकंद । गेंठी । श्रद्वंडक्स-[ता०] कि किणी भेद । उत्तरकाँटा । **श्रद्धकामन्नो-**[मला०] मुंडी । मुंडितिका । त्रप्टहास−[सं॰]} कुंद् । कुंदपुष्य-वृत्त । श्रदृहासक-[सं∘]∫ श्रद्धि-[ता०] गूबर । उद्वर वृत्त । श्रडंग-[सं॰] गेहुँ । गोधूम । त्र्राडं वोई-[मला॰] तिनिश नं ॰ १ । जरुला। श्रड-[७०] लिसोड़ा । बहुवारक । स्मेरा । श्रड्क विदाम-[ता०] वादाम जंगली। वनबादाम। जंगली बादाम। त्रड़ड-[पं॰] घरहर । घाढ़की। रहरी। श्राडद-[गु०] उढ्द । माप । उरद । त्रइद् वेल्य-[गु॰] १. सेम चमरिया। द्घिपुष्पी। २. मप-वन । मापपर्णी । श्रद्वोल-[गु॰] मपवन । मापपर्णी । श्रहर-[व •] थरहर । श्राढ़की । रहर। श्र**डघा उग्रड्दवेल-**[गु॰] मपवन । मापपर्वी । श्रडवा उवोर्डी-[गु॰] मावेर । भू-बदरी । श्रहवा उमगवेल्य-[गु॰] वनमूँ ग । मुद्गपर्णी । श्रडवाड-[गु॰] मषवन । माषपर्णी । श्रडवाड मगवेल्य-[गु॰] बनमूँग। मुद्गपर्णी। श्रडविश्रति-[खा॰] कठूमर । काकोदु बरिका । श्रडविश्रोल्ल-[को॰] भवरब्रुही। अमरब्रुही। त्रडविकोडि-[ते॰] वनमुरगा । वनकुक्कुट । श्रडविजिलकर्र-[ते०] काली जीरी। वनजीरक। श्रडविपसुथु-[ते॰]} वनहत्तदी । वनहरिद्रा। श्रडविपसुपु-[ते॰]} श्रहविपोटला-[ते॰] परवत्त । पटोल । श्रडविमल्ले तीगे-[ते॰] श्रस्काता। हापरमाली। श्रस्काटा श्रद्भवी श्रामुद्म-[ते०] दंती। दात्र्णी।

श्रडवी र्ष्पेचेट्टु-[ते॰] महुश्रा। मध्क। **श्रडवी ६ व्हि-**[क॰] १. के लकंद । चमार श्रालू । २. [खा॰] बनप्याज । वनपतांडु । जंगली प्याज । श्रहवी एजुलकुर-[ते॰] बकुची नं॰ २। सामराज। वापची। श्रडवीनाभी-[ते॰] कलिहारी। लांगली। **ग्रडवीपञ्चा**-[ते॰] १. इंदायन । विषठंभी । २. इंद्रायन जंगली । विषलोंबी । **श्रडवीपोटला-**[ते॰] परवल कडुवा। कटु पटेाल। कडुवा श्रडवी प्रहो-[ते॰]) वनकपास । श्रारण्य कार्पासी । श्रडवी प्रत्ती-[ते∘]∫ **श्रडवी मुलंगी**-[ते॰] कुकुरोंधा नं॰ १। कुकुरद्व । कुकरोंदा । श्रडवीयेलकाय-[ते॰] इलायची बड़ी। स्थूलैला। बड़ी इलायची । श्रडवी लघंगलता-[ते॰] दालचीनी जंगली। जंगली दालचीनी। **श्रहसर**-[ते॰] श्रहूसा। वासक। वाकस। श्रद्धर-[हिं०] थरहर। श्राहकी। रहरी। **श्रडहु**-[सं०] बड़हर । लकुच वृत्त । श्रडादे।डे-[द्रा॰] श्रह्सा । श्राटरूप । बाकस । श्रिडिश्राइ-[गारो०] श्रामडा। श्राम्रातक। श्रिडिकमामिडि-[ते॰] पुनर्नवा रक्त। रक्त पुनर्नवा। लाल गदहपूरना । श्रडिके-[क॰, खा॰] सुपारी। गुवाक। पूग। श्रिडिविश्रो मामिडि-[ते॰] श्रामडा। श्राम्रातक। श्रमता। **श्रडिविषका-**[म॰] बनहलदी । वनहरिदा । स्रडिवेकडेले-[क॰] रुद्रवंती। रुद्ंती। त्र**डुलसा-**[म॰] १. श्रड्सा । श्राटरूप । २. सोनापाठा भेद । श्ररलू। श्रहुलसा-[मु॰] श्रह्सा । वासक । श्रहुस-[हि॰]) श्रद्भा। श्राटरूप। श्रहुसरपु-[ते∘]∫ **श्रद्धसा**-[हिं०] १. श्रद्धसा । वासक । २. [म०] सेानापाठा भेद । श्ररलू।

श्रद्धला-[म॰, म॰] श्रद्धता। वासक, श्ररुस।
श्रद्धला-[६०] वासक। वाणिका। वासा। सिंहिका।
सिंहास्य। वाजिदंता। श्राटरूप। श्राटरूपक। वृपनामा।
सिंहपर्या। श्ररुक। रूज। सिंहमुखी। सिंहपर्यी श्रादि।
[६०] श्ररुश। वाकस। श्ररुस। श्ररुसा। विसेंदा। रूसा।
[बँ०] वाकस। वासक। [मु०] श्रद्धलसा। श्रद्धलसो। [मरा॰]
श्रद्धलसा। [मा॰] श्रद्धसे।। [द्रा॰] श्राइ। दे। है। [गु॰] श्ररुद्धसी। [क॰] श्राद्धसेगे। श्राद्धसेगे। ति॰] श्रद्धसर। श्राद्धाः सार। श्रद्धसरमा। श्रद्धसर। श्राद्धाः

[मद्रा॰] श्रतले। दकम् । [हिमा॰] भेक्कर । वसुती । तोरबुजा। वाशंग श्रहस । [फा॰] वंश । [श्र॰] हूकारिन् कृत । [लै॰] Adhatoda Vasica. Syn: Justicia Adhatoda.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में पंजाव श्रीर श्रालाम से छंका श्रीर सिंगापुर तक पाया जाता है। यह चुप जाति की वनापिघ है। इसका चुप ४ से म फुट तक ऊँचा होता है श्रीर कहीं कहीं इससे भी बड़ा देखने में श्राता है। कुछ लोग कहते हैं कि यह चुप १० फुट से श्रिषक ऊँचा नहीं होता। इसके पत्ते श्राम के पत्तों के समान ४ से म इंच तक छंवे, नुकीले श्रीर कोमल होते हैं। फूछ पीलापन लिए सफेद रंग के दो लाल रेखाश्रों से युक्त निलकाकार श्रीर श्रीष्टयुक्त होते हैं। बीजकोप पान से एक इंच तक लंबा, श्रागे से श्राधी दूर तक एक समान मोटा श्रीर पीछे से चूड़ी-उतार कुछ चिपटा होता है। इसमें ४ बीज होते हैं जो इंच के पंचमांश हिस्से के घेरे में श्राते हैं।

यह सफेद श्रीर काले फूलों के भेद से देा प्रकार का होता है, पर कोई कोई ग्रंथकार सफेद श्रीर लाल फूल का श्रद्धसा भी लिखते हैं। इनमें सफेद फूलवाला बहुत पाया जाता है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देख—तीता, कडुवा, कसैला, शीतल, छघुमाही, वातकारक, स्वर की उत्तम करने-वाला, हृदय की हितकारी एवं कफ, पित्त, तृष्णारीमा, श्वास, काश, ज्वर, वमन, प्रमेह, कीढ़ श्रीर चय रीम का नाश करनेवाला है।

इसका श्रक ज्वर, वमन, प्रमेह, कोढ़ श्रीर चयरीग की हरनेवाला है।

काले फूछ का श्रद्धसा बहुत उत्कृष्ट होता है, इसलिये १० वर्ष से कम उमरवाले बालक की नहीं देना चाहिए।

यूनानी मतानुसार गुण-देशि गरम श्रीर रूच है। इसका फूछ पहले दर्जे में ठंडा, राजयक्ष्मा श्रीर पित्त में हित-कारी, रुधिर की गर्मी श्रीर मूत्र की जलन की शांत करनेवाला है। इसकी जड़ श्वास, काश, कफ-ज्वर, शुक्रमेह, पांडु, मिचली, केाढ़ श्रीर प्रमेह में लाभकारी है।

मात्रा-४ माशे।

प्रयोग — १. इसकी जड़ श्रीर पत्ते श्रद्रक के साथ सेवन करने से सब प्रकार की खाँसी के। दूर करनेवाले श्रीर राजयक्ष्मा में गुणकारी हैं। इसके ताजे रस या काढ़े में मधु या पीपल का चूर्ण मिलाकर खाँसी में देते हैं। गले के पुराने रेगों श्रीर श्वास रेगा में लाभकारी है।

इसके फूळ श्रीर फळ कडुवे, मसालेदार श्रीर हिनम्ब होते हैं तथा प्रतिश्याय, खाँसी, श्वास, राजयक्ष्मा श्रीर गळ-रोग-नाशक हैं।]

q

्तें क द

क री

टा से

ता

श

0

ar Z,

में

छ Îi







अजवायन जंगहो नंः

Se 30

श्रीभव्यंद रेगा (श्रांख दुखना) पर इसके ताजे फूल श्रांख पर वांधे जाते हैं। सूखे पत्तों की बनी हुई वीड़ी श्रथवा सिगरेट का धूश्रपान करने से श्वास-रेगा में लाभ होता है। इसका रस श्रतिसार श्रीर श्राम-रक्तातिसार में गुणकारी है। मैसूर में मलेरिया ज्वर पर इसकी जड़ के चूर्य का प्रयोग किया जाता है।

वत्ते ग्रीर जड़ की सींठ के साथ ग्रीटाकर, स्वत्स में मधु डालकर तथा पत्ते थीर काली मिर्च के काढ़े में सधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। इसका श्रवलेह बनाकर व्यवहार में लाते हैं। स्वरस में मिस्री मिलाकर देना चाहिए। श्रद्भसा, मुनङ्का श्रीर मिस्री का काढ़ा दिया जाता है। २. व्वास रेगा में नवीन चुप के पंचांग के। छाया में सुखाकर चूर्ण करके एक तीले की मात्रा में देना चाहिए। इसके पत्तों श्रीर पहकर-मूल का काढ़ा भी हितकारी है। पत्ते की सुखाकर चिलम पर रखकर धूम्रपान करने से भी छाभ होता है। ३. नेत्रों की सूजन में ताजे फूलों की गरम कर श्रांख पर वाधने से फायदा होता है। ४. बाइँटे में फूल श्रीर सेांट का काढ़ा देना गुणकारी है। वात रोग में जड़, पत्तों श्रीर फूलों का काड़ा या श्रवलेह देना अच्छा है। ६. हाथ श्रीर पाँव की ऐंडन पर फूलों श्रीर फलें। के तेल में पकाकर मालिश करनी चाहिए। ७. प्रतिश्याय में पत्तों का काढ़ा लाभदायक है। इ. गठिया में पत्तों के काढ़े का बफारा देना चाहिए। १. रगेां (स्नायु) की पीड़ा में श्रद्धसे थीर एरंड के पत्तों की एरंड के तेल थीर पानी में श्रीटाकर बफारा देने से लाभ होता है। १०. सूजन में भी प्रयोग नं० ६ गुणकारी है। ११. मै।सिमी बुखार में जड़ के चूर्ण का सेवन लाभप्रद है। १२. पांडु राग पर इसके रस में कलमी शोरा मिलाकर पिलाने से लाभ होता है। १३. जलोदर में इसका स्वरस उपकारी है। १४. ज्वर की तृपा में पत्तों का फाँट अथवा पत्तों की मिस्नी के साथ औटाकर पिलाना चाहिए। १४. सूजाक में पत्तों के काढ़े में ३० वूँद चंदन का तेल मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १६. रक्तातिसार में इसके पत्तों का, धनिया श्रीर सैांफ के साथ बना हुश्रा काढ़ा देना चाहिए। १७. रक्तार्श में पत्तों, चंदन श्रीर हीरा-दक्खन के चुर्ण की फंकी देना श्रच्छा है। १८. रक्तपित श्रीर रक्तातिसार में पत्तों का स्वरस लाभकारी है। १६. नेत्र-पीड़ा में पत्तों की पीसकर टिकिया बनाकर श्रांख पर बांधने से फायदा होता है। २०, भगंदर की सूजन में पत्तों की पीस-कर नमक मिलाकर बाँधने से लाभ होता है। २१. शरीर की दुर्गंधि मिटाने के लिए पत्तों के स्वरस में शंख का चूर्ण मिला-कर लेप करना चाहिए। २२. पामा श्रीर खुजली के लिये कोमल पत्ते श्रीर इलदी की गीमूत्र में पीसकर लेप करना उत्तम है। २३. रक्तप्रदर में पत्तों के स्वरस में मधु मिलाकर

पिलाना हितकारी है। २४. श्वेत प्रदर में नीम की गिलोय थीर इसके पत्तों के स्वरस में मधु मिलाकर पिलाना चाहिए। २४. रक्तपित में इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करना हित-कारी है। २६. रुधिर के वमन में पत्तों के स्वरस में मिस्नी श्रीर मधु मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। २७. स्वर-भंग में इसके स्वरस में तालीशपत्र का चूर्ण श्रीर मधु मिला-कर सेवन करने से लाभ होता है। २८. सुगमता से वालक उत्पन्न होने के लिये गर्भवती स्त्री की नामि, नल श्रीर यानि पर पत्तों की पीसकर लेप करना चाहिए। २६. कामला रेग पर इसके पंचांग के रस में मिस्री और मधु मिलाकर पिलाना गुणकारी है। ३०. पित्तज काश और ज्वर में पत्तों का पुट-पाक कर रस निकालकर मधु मिलाकर पिलाने से फायदा होता है। ३१. मस्ड़ों की पीड़ा में पत्तों के काढ़े से कुछा करना चाहिए। ३२. राजयक्ष्मा में इसका यव कूटा हुन्ना पंचांग एक सेर ले उसके। श्रष्ट गुण जल में चतुर्थीश काड़ा तैयार कर उस काढ़े की मंद श्रानि पर पकावे। जब श्राध सेर शेष रह जाय तव उसमें श्राध सेर मिस्री मिला कर शहद के समान श्रवलेह तैयार कर सुरचित रख छोड़े। इसकी ३ माशे की मात्रा दिन में कई बार सेवन करने से व्वास, काश, चय श्रीर रक्तपित्त में लाभ होता है। ३३. रक्तपित्त पर इसकी शाखा, फूल श्रीर ढाक के काढ़े में घत सिद्ध करके सेवन करना चाहिए। ३४. राज-यक्ष्मा, खाँसी श्रीर पांडु रेगा में कृटे हुए फूछ, पत्तों श्रीर जद के काढ़े में इसके फूलों के कलक द्वारा यथाविधि चृत सिद्ध कर सेवन करना चाहिए। ३४. कफ-पित्तज्वर, श्रम्खपित्त, कामला श्रादि में पत्तों के स्वरस श्रीर फूल में मधु श्रीर मिस्री मिलाकर सेवन करना हितकारी है। ३६. जीए ज्वर में इसके द्वारा सिद्ध किया हुआ घृत गुणकारी है। ३७. श्वेत प्रदूर पर श्रद्धसे का स्वरस, गिलोय का स्वरस धीर मधु-प्रत्येक एक एक तोला-सबको एकत्र मिलाकर पान करना चाहिए। ३८. र्वांसी श्रीर श्वास पर श्रदृसे का रस श्राध सेर, कटेरी का रस त्राध सेर, मुनक्के का काढ़ा त्राध सेर त्रीर मिल्ली त्राध सेर, इन सबको एकत्र मिलाकर मंद्र श्रप्ति पर श्रवलेह के समान चाशनी बनावे श्रीर उतारकर उसमें मुलेठी, श्रसगंध, पीपल, भारंगी, वंसलीचन श्रीर सुखे श्रावले. प्रत्येक का चुर्ण एक एक तोला तथा मधु श्राध सेर मिलाकर एक तोले की मात्रा में दिन में २-३ बार चाटने से श्वास, खाँसी श्रीर चय की खाँसी का वेग शांत होता है। ३६. मुख से रुधिर गिरने पर इसके दे। तीले स्वरस में श्रांवले का दो तीले स्वरस मिला, कि चित् मधु डालकर सेवन करना हितकारी है। ४०. रक्त-पित्त पर पत्तों के दो तोखे रस में ६ माशे मध मिलाकर दिन में २-३ वार सेवन करने से लाभ होता है। जड़ की छाल ४ तोले, मुलेठी ३ माशे, अनंतमूल ३ माशे, दाख ३ माशे

भीर तेजपता ३ माशे, दाख के सिवा सबकें। कुचलकर, दाख मिळाकर ३२ तेाले जल में चतुर्थांश काढ़ा बनाकर २ तेाले मिस्रो मिलाकर पिळाने से बहुत फायदा होता है। इसके स्वरस में पेठे के बीज पीसकर मिस्रो मिलाकर पिलाने से ळाभ हे।ता है। ४१. मलेरिया पर एक सेर हरे श्रङ्कसे का तीन बेतळ श्रक निकाळकर ४ तेाले की मात्रा में प्रातः, दोपहर श्रीर सायंकाल सेवन करना चाहिए। इसमें दूध विक त श्रीर हळका श्राहार पथ्य है। राजयक्ष्मा में भी यह ळाभकारी है। इन्फ्लुएंजा में भी यह व्यवहत होता है। छाती से रुधिर जाने में इसकें। पिलाने से ळाभ होता है।

श्रद्भा काळा-[६०] काला श्रद्भा। पनधारा श्रद्धलसा। पनधारा श्रद्भा।[को०] काला श्रद्धलसा।[तै०] Graptophyllum Hortense. Syn: Justicia Picta.

यह भारत श्रीर मलाया की वाटिकाश्रों में लगाया जाता है। इसका माड़ बड़ा श्रीर सुहावना दिखलाई पड़ता है श्रीर बारहों मास फूलता रहता है। पत्ते समवर्ती श्रीर श्रनी दार होते हैं। फूल लाज रंग के, बड़े बड़े श्रीर सुहावने होते हैं। इसी को कोई काला श्रद्भा श्रीर कोई लाज श्रद्भा मानते हैं। इसका चित्र प्राप्त नहीं हो सका।

केंक्य में श्रद्धसे की भाँति यह श्रीपिध के रूप में व्यवहार में श्राता है। इसको नारियल के दूध में पीसकर सूजन पर लगाते हैं। पत्ते कीमलताकारक श्रीर प्रमादी हैं तथा दूध की रुकावट से उत्पन्न छाती की दाह में इसकी पुल्टिस लगाना लगभकारी है।

प्रयोग — 1. काला श्रद्धसा श्रेष्ठ गुणवाला कहा गया है। ज्वर श्रीर कफ की खूबी के साथ नष्ट करता है, पेशाव लाता है तथा पुरानी खांसी में इसका बहुत श्रच्छा उपयोग होता है। र. इसके ताजे पत्तों की खूब पेंछिकर उन पर थोड़ा नमक छिड़क- कर श्रीर उन्हें केले के पत्तें में गोलाकार लपेट श्रीर कुचलकर विना पानी डाले स्वरस निचोड़ ले। युवा मनुष्य के लिये एक तोले रस में २॥ रची छोटी पीपल का चूर्ण श्रीर कुछ मधु मिलाकर दिन में दो बार पिलाने से पुरानी खांसी दूर होती है। इसका गुण श्रारेजी की 'सिनेगा'' श्रीषधि के समान है। श्रद्धसी—[मा०] श्रद्धसा। वासक। बाकस।

श्रहोंड-[ते॰] १. किंकिणी। ज्यामघंटी। २. किंकिणी भेद। वळटकाँटा। हिंस।

श्रहुले-[ता॰] दंती वड़ी नं॰ १। बागबरेंडा।
श्रहुा-[ते॰] कचनार सफेद । श्वेत कांचन।
श्रह्डुतिनपिल्छि-[ता॰] कीटमारी। कीड़ामारी।
श्रह्डुतिनपिल्छि-[ता॰] कीटमारी। कीड़ामारी।
श्रह्डुतिनपिल्छि-[ता॰] केडिमारी। कीड़ामारी।
श्रह्केय सर्जु-[क॰] }
श्रह्केय सर्जु-[क॰] }
श्रह्केय देसरु-[क॰]

ग्रहहर-[हि॰] ग्ररहर । ग्राढ़की । त्रदहुल-[हि॰] श्रोदहुत । जपापुष्प । त्र्रागिले-[क॰] } हरीतकी। हर। हरें। श्रिणिलेय-[क॰]) त्र्राणु−[सं०] चीना। चीनक | त्र्रणुमुष्टी-[सं॰] बकायन । महानि व । त्र्रगुरेवती-[सं॰] दंती । दाःयूणी । त्र्रागुव्रीहि-[सं०] चीना । चीनक । त्रगुसों-[गु॰] श्रदूसा। वासक। श्रतंडे-[ता॰] कि किणीभेद। उलटकाँटा। त्रतंद्रा-[सं॰]) काफी। कहवा। त्रतंद्री-[सं॰] श्रत-[संथा०] श्रनंतमूल भेद । तरली । श्रतक पळी-[बँ०] पाइर नं० २। पाडर। त्रतकमह-[४०] श्रोंगा । श्रपामार्ग । त्रति इमत-[सिंह०] गंभारी। गम्हार। त्रतत मामिडि-[तेo] पुनर्नवा रक्त । रक्त पुनर्नवा । गदहपूरना। त्रतराफ त्रजुवुस् त्रलव-[अ०] मकीय सब्ज । काकमाची शाक। हरी मकीय। **त्रतरुणदार-**[सं०] श्चतरुण्दारक-[सं०] } विधारा । वृद्धदारक । विधायरा । **श्रतरुणदारु-**[सं०] **श्रतलसनीकली-[गु॰]** श्रतीस। श्रतिविषा। श्रतलस्पृक्-[सं०] जल । पानी । श्रतलोटकम-[मद्रा०] श्रहूसा। वासक। श्रतवस-[गु॰] श्रतीस । श्रतिविषा। त्रतस-[भ॰] चवथु। ब्रॉक। श्रतसी-[सं॰, ते॰] तीसी । श्रवसी । **श्रता**-[वँ ॰, श्रासा॰] शरीफ़ा । श्रातृप्य । श्रति-[क॰] गूलर। उदुंबर। त्रतिकंट-[सं॰] १. गोखरू छे।टा। चुद्र गोचुर। छे।टा गोखरू। २. धमासा । दुरालभा । हि गुत्रा । त्रतिकंटक-[सं०] १. गोखरू छोटा। चुद् गोच्चर। २. धमासा। दुरालभा। त्र्यतिकंद-[सं०]) हाथीकंद । पेड़ारु। हस्तिकंद नाम महाकंद त्र्रतिकंदक-[सं∘] रेशाक। त्रतिकरु-[सं॰] नि'वादि द्रव्य। त्र्यतिकम् मेदि-[ते॰] पुनर्नवा श्वेत । श्वेत पुनर्नवा । सर्फेर सांठ। श्रतिकामानूदी-[ते॰] पुनर्नवा रक्त । रक्त पुनर्नवा । छाछ सांह गदहपूरना । श्रतिकुसुमा-[सं∘] सौंफ । मिश्रेया ।

श्रतिकेशर-[सं॰] } कृजा। कुञ्जक वृत्त। सदागुलाव। श्रतिकेसर-[सं॰] } श्रतिखरटीपाला-[पं०] कंघी। ककही। श्रतिबला। त्र्यातिगंध-[सं०] १. सृत्रण । सूस्तृण । २. चंपा । चंपक पुष्प वृत्त । ३. मोतिया । मिछिका भेद । ४. गंधक । गंधपापाण । त्रातिगंधक-[सं०] हस्तिकर्ण पलाश । हाथीकान पलाश । ग्रतिगंधा-[सं०] पुत्रदात्री । पुत्रदायी छता । श्रतिगंधालु-[सं०]∫ श्चितिगंधिका-[सं०] पुत्रदात्री । पुत्रदायी । त्रतिगृहा-[सं०] १. पिठवन । पृक्षिपर्णी । २. सरिवन । शाल-पर्णी । ३. वर्षरी । वनतुल्ली । वबुई तुलसी । ग्रांतचर-[सं०] श्रातचरा-[सं०] } स्थलकमल। स्थलपद्म। बेटतामर। श्रतिचला-[सं०] त्र्रतिच्छुत्र-[सं०] १. सूतृण। सूस्तृण। २. ताल मखाना (लाल)। रक्त के किलाच। त्रतिच्छत्रक-[सं॰] १. भूतृण । भूस्तृण । २. सतिवन । सप्त-पर्ग । छ्रतिवन । श्रतिच्छत्रा-[सं॰]) १. सौंफ। मधुरिका। २. सोद्या। श्रातच्छित्रिका-[सं∘]∫सिश्रेया। श्रतिजागर-[सं०] कींछ। किर्वांच (नीले रंग का)। कपिकच्छु । श्रतितपस्थिनी-[सं०] मुंडी बड़ी । महामुंडी । गेारखमुंडी । श्रतितिष्पली-[ता॰] श्रतितिष्पिली-[मला॰]} गजपीपल । गजपिष्पली । स्रतिती इण्-[सं०] १. काली मिर्च। २. सहि जन। शोमां-जन । ३. श्रजमोदा । श्रजमोद । श्रतितीबा-[सं०] गाँडर दूव। गंडदूर्वा। त्रतितेजनी-[सं॰] सरिवन । शालपर्या । श्रतिदीप्ति-[सं॰] तुल्लसी सफेद । श्वेत सुरसा । सफेद तुल्लसी । त्रतिदीप्य-[सं॰] } चीता छाछ। रक्त चित्रक। छाल चीता। श्रतिदीप्यक-[सं०] श्रतिदुष्ट-[सं०] गोखरू। गोचुर। श्रातिनख नी कली-[ग्०] श्रतीस। श्रतिविपा। त्रतिपत्र-[सं०]) १. हाथीकंद । पेडारु । हस्तिकंद नामक अतिपत्रक-[सं∘]ं े महाकंद शाक । २. सागे।न । शाल वृत्त । सागवान । त्रतिपत्रा-[सं॰] बरियार । बळा । श्रतिपत्रिका-[सं०] बिलुआं घास । वृश्चिका । बिच्छू । त्रतिपरिचम-[जाम॰, न॰] मालकंगनी । ज्योतिष्मती। माल॰ श्रतिपिच्छ-[सं०] रतालू (श्वेत)। शकरकंद । श्रलुश्रा ।

श्रतिपिच्छ्छा-[सं०] घीकुँवार । घृतकुमारी । ग्वारपाठा । श्रतिवते-[क०] श्रतीस । श्रतिविषा । स्रतिवळचेट्टु-[ता०] वरियार सफेद नं० १। श्वेत वळा। श्रतिवला-[सं०] १. कंघी। ककही। कंकतिका। २. सहदेई। महाबला। श्रतिवल्लिका-[सं॰] } वरियार । वला । खिरेंटी । श्रतिवली-[सं०] त्रतिभारग-[सं॰] खबर। अश्वतर। श्रतिमंगल्य-[सं॰] वेछ । विलव वृत्त । श्रतिमंजुला-[सं॰] सेवती। शतपत्री। श्चितमंथ-[सं०] } श्चरनी । श्रग्निमंथ । गनियार । श्रतिमंथक-[सं०] श्रतिमधुरं-[द्रा॰] } मुलेडी। यष्टि मधु। श्रातिमधुरा-[क॰] श्रतिमुक्त-[सं०] १. तिनिश। तिरिच्छ। २. तेंदू। ति दुक। गाभ । ३. बेला । रायबेछ । श्रांतमुक्तक-[सं०] १. माधवी लता । माधवी । २. तिनिश । तिरिच्छ । ३. तेंदू । तिंदुक । गाभ । ४. वेला (पुष्प वृद्ध) । रायवेता। श्रतिमुक्तका-[सं∘] १. तिनिश। जारुछ। २. तेंदू। ति दुक। ३. वेला । रायवेल (पुष्प वृत्त)। श्रतिमुक्ता-[सं०] माधवी लता। श्रतिमुक्तक। श्रतिमोत्ता-[सं॰] नेवारी। नवमछिका। श्रतिमोदनी-[सं०] नेवारी । नवमल्लिका पुष्प वृत्त । श्रांतमोदा-[सं०] १. नेवारी । नवमिक्का । २. गणिकारी । मदनमादनी नामक पुष्प बृच । श्रतिमोदिनी-[सं॰] नेवारी । नवमिक गुष्प वृत्त । त्र्यतियव-[सं०] जो बिना सुई के। निःशूक यव। त्र्यतिरक्त-[सं॰] शि'गरफ। हि'गुल। श्रतिरका-[सं॰] श्रड्हुल । जवापुष्य वृत्त । गुड्हल । श्रांतरस-[सं०] पुंडेरी। प्रवींडीक। श्रतिरसा-[सं०] १. मूर्वा। चूरनहार। मरे।इफली। २. सुलेठी। यष्टि मधु । ३. रासन । रास्ना । रायसन । ४. मुसली। तालमूली। श्रतिरुत्त-[सं०] कँगनी, कोदों श्रादि धान्य। त्रांतरुहा-[सं॰] मांसरे।हिश्मी । रोहिश्मी । श्रातिरेचक-[सं०] काकोली। काउली। श्रतिराग-[सं०] राजयक्ष्मा । चय रेगा । श्रतिरामश-[सं०] १. बकरी जंगली। वनछाग। जंगली बकरी। २. भेंडा। मेष। त्र्रतिरोमशा-[सं॰] वस्तांत्रो । नीखवाना । नीखवुन्हा । श्रतिलंबी-[सं०] सैांफ। शताह्वा।

11

村

श्रतिलोमशा-[मं॰] वस्तांन्री । नीजबोना । नीजबुन्हा । श्रतिले। हित गंध-[सं०] दोना। दमनक। श्रतिचख-[गु॰] रेश्वतीस। श्रतिविषा। श्चतिवद्यम-[ता॰] श्रतिवत्तं ल-[सं॰] मटर। केराव। कलाय। श्रतिवल्लभ-[सं०] मानिक। चुन्नी। श्रतिवल्लभा-[सं॰] पाढ़र। पाटला। श्रतिवस-[ते॰] ्}े श्रतीस। श्रतिविषा। श्रतिवस चेष्ट-[ते॰] श्रतिवासा-[सं॰] **श्र**तिविश नी काली-[गु॰] | श्रतीस । श्रतिविषा । श्रितिविष-[सं०, म०, गु०] श्रतिविषा-[सं०] श्रतिवीज-[सं०] बबूल वृत्त । श्रतिवृहत्फल-[सं∘] कटइल । पनस। **श्रतिशारिवा-**[सं॰] श्रनंतमूल । शारिवा । सालसा । श्रतिश्रुपर्ण-[सं०] बनमूँग । मुद्गपर्णी । मुगवन । श्रतिशुक-[सं०] जो। यव। श्रतिश्कज-[सं०] गेहूँ। गोधूम। श्रतिशोष-[सं०] राजयक्ष्मा । चय रोग । तपेदिक । श्रतिषजे-[क॰] श्रतीस । श्रतिविषा । श्रतिसय्या-[सं०] जलमुलेठी । वल्लीयष्टि मधु । श्रतिसांद्र-[सं०] राजमाप । लोविया । वेारो । श्रतिसाम्या-[सं०] १. मुबेठी । यष्टिमधु । २. गुंजा लाल । रक्त गुजा। लाल गुजा। श्रतिसार-[सं०] १. पित्तपापड़ा । पर्पट । २. श्रतिसार रोग। दस्त। [फा॰] इसहाल। [फ्रं॰] Diarrhœa.

गरिष्ठ, अत्यंत चिकनी, अत्यंत रूखी, अत्यंत गरम, अत्यंत शीतल, अत्यंत किठन, विरुद्ध (संयोग-विरुद्ध, देश-विरुद्ध, समय-विरुद्ध, मात्रा-विरुद्ध) पदार्थ खाने से, भोजन कर चुकने पर फिर भोजन करने से, अजीर्थ से, विषम भोजन (कभी कम, कभी अधिक) करने से तथा स्नेह, स्वेद, वमन, विरेचनादि के अतियोग से, विष-भच्या करने से, भय या शोक करने से, दूषित जल पीने से, अतिशय मद्यपान या अतिशय जलकोड़ा करने से, मल, मृत्रादि का चेग रेकिने से एवं कृमिदोप आदि कारणों से शरीर में धातु (रस, जल, मृत्र, स्वेद, मेद, कफ, पित्त रक्तादि जलरूप धातु) अत्यंत बढ़कर अधि को मंद कर देती हैं। वहीं जल-रूप धातु जल में मिलकर वायु से प्रेरित होकर गुदा के मार्ग से बार बार नीचे को अधिकतर निकलती है। इसी को 'अतिसार रेग'' कहते हैं।

वातज, पित्तज, कफज, सम्निपातज, शोकज श्रीर श्रामज इन भेदों से यह छः प्रकार का होता है। इसके उत्पन्न होने के पहले हृदय, नाभि, गुदा, पेट श्रीर कीख में सूई चुभने की सी पीड़ा होती है, हिड़ियों श्रीर जोड़ें। में दर्द होता है, श्रधीवायु श्रीर मल का श्रवरीध होता है, पेट फूलता है श्रीर श्रम्न नहीं पचता।

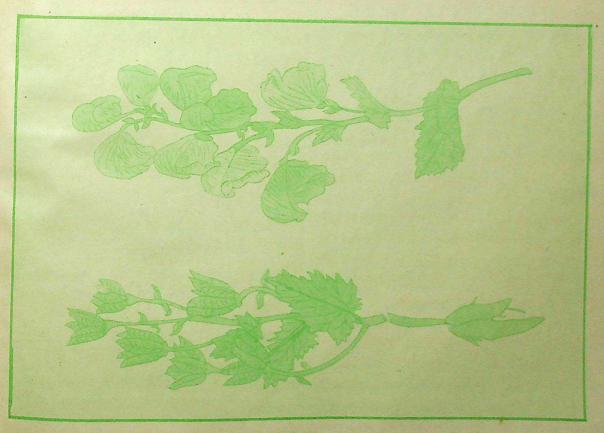
इस राग की नाशक श्रीषिधयाँ श्रीर उनकी प्रयोगः संख्या - श्रखरेाट नं० १६। श्रगर नं० २। श्रगस्त नं० २। श्रजवायन नं० १०। श्रतीस नं० ७। श्रत्यम्लपर्गी नं० ४। श्रनंतमूल सफेद नं० ११। श्रनार का छिलका नं० १। श्रफीम नं १६, १७, २१। श्रवरक नं १२। श्रमरूद नं २। श्रीबा हलदी नं० १। श्रारनी छे। टी नं० ४। श्राक लाज नं० ३४ । श्राच्छुक नं० ८ । श्राम नं० १२, १४, १६, २४, २६, ३०, ३४, ३६। श्रीवला नं० ४४। इंद्रजव नं० ७। इमली नं० २३। इलायची बड़ी नं० ६। ईशवगोल नं० ४, ३४। एकबीर नं० ३। कँगनी नं० ६। कंघी नं० ६। कच-नार लाल नं १३। कटभी नं २। कटहल नं ३। कपास नं ० २, १४, २१ । कपास के बीज नं ० ४ । कमरकस नं ० १। कमल के पत्ते नं० ३। करंज नं० २१। करींदा नं० ४। कलप-नाथ। कांडोल नं० २। काकड़ासिंगी नं० २। कायफल नं० ७, १६। कुकरोंधा नं० २३। कुचला नं० १३, १६। कुलाथी नं ० म । कुड़ानं ० २, ३, ४, ६ । केलानं ० ११, १३। कैथ नं १६, १८, २०। कीयला नं ६। खेरसार नं १६, ३१। चब्य नं० ४। गींजा नं० २। गुलाब का प्रकं नं ६। गूलर नं ३, १२, २६। गोरख पान नं १। गोरची नं० २, १२। गोराणी नं० २। चंपा नं० १४। चनसुर नं० ४, १०, १४। चनाखार नं० ३। चंदन नं० २३। चिरा-यता नं ० १। चेर नं ० १। चालमोगरा नं ० १३। जयंती नं० ३। जामुन नं० ६, २०, २२, २४, २८। जायफल नं० ४, ६, १०, १३, १६, २७। जायफल जंगली नं० २। जावित्री नं० २। जीरा सफेद नं० १८। माऊ नं० २। ढाक नं ६। डाक के पत्ते नं ४। डाक के बीज नं ६। डेरा नं० १६। तरवड नं० ४। ताल मखाना नं० ४। तालीशपत्र नं ० ४, १४। तिनिश नं ० १। तीसी नं ० ८। तुंबर नं ० ३। त्तिया नं १। तेंदू नं १ ४, ६। थृहर नं १४। दंती बड़ी नं० १०। दही नं० ३। दारु हलदी नं० ६। दालचीनी नं० १०। दुर्गंध खेर नं०२। दुद्धी नं०३। धनियाँ नं०३, २१। धतकी नं०३। धान नं०६,१६ । धौ नं०३। नागरमोधा नं॰ २। नारंगी नं॰ ६। नारियल नं॰ ८। नारियल का तेल नं० १। नाही नं० ७। निर्मली नं० १। नीम नं॰ ४२। पतंग नं॰ ४। पपीता नं॰ १०। परवल कडुवा नं॰ २०। पाठा नं० १२ । पाताल गारुड़ी नं० ११ । पानी र्श्रावळा नं॰ २। पारा नं॰ १३, २४। पि^{*}ड खजूर नं॰ ^{८।} पुदीनानं०३। पेऊ नं०४। पेास्त नं०४।



ल

ती

रा



Tara tara

10 0 PM

फिटकिरी नं० १३। बकायन नं० १। बढ़ नं० नं० ४७। २३. ३६। बबुल नं० ३, ११, २३, ४१, ४२। बबुल का गोंद नं ४, ६। बरियारा नं १ ४, १३। बरियारे के बीज नं ४। वर्वरी नं० ४, १३। वहेड़ा नं० १०। वींस नं० ३। विजै-सार नं० ७। विहीदाना नं० १। वेर नं० ७, ११, १६, २३. २६। बेल नं० १०, ११, १४, १४, १६, २०, ३३। बेलगिरी नं० ४, ४, ६, ७, १२। भाग नं० ४। भिंडी नं ० ७। भुइँकदंव नं ० ७। अखाना नं ० ३। मांसरोहि गी नं०२। मुंडी नं० ४२। सूँग नं०६। मैनफल नं० १२, १४। मोचरस नं० ४। मोथा नं० ११। मोरशिखा नं० २। रंगलता नं ०६। रीठा नं ०८। लिसोड़ा नं ०१७। लोगा बड़ी नं ० ८ । वत्सनाभ विष नं ० १४ । विषांबिल नं ० ३, ४ । शमी नं० ३, ४ । शाल बड़ा नं० ४ । शिंगरफ नं० ६। शीतलचीनी नं० १०। सतिवन नं० ३। सत्यानाशी की जड़ नं० १। समुद्रफल नं० १, १०। सरफोंका नं० १, १६। सरहटी नं० १। सातला नं० ६। सिंघाड़ा नं० १। सिरस के बीज नं ० ३। सुपारी नं ० ४। सेमल सफेद नं ० २, ४। सेव नं ० ४। सोनापाठा नं ० २, ३। सोनापाठा भेद नं ० ८। सोनामक्खी नं ०६। सैांफ नं ०२। हड्जोड़ी नं ०४। हरताल नं २२। हरीत की नं ७, ३४। हलहल नं ० ६।

श्रांतेसारकी-[सं०] अतिसार-रागिणी। श्रतिसारञ्ज-[सं०] पित्तपापड़ा । पर्पट । श्रतिसारझी-[सं०] श्रतीस । श्रतिविषा । त्रतिसारभेषज-[सं०] लोध। लोध। श्रतिसारभे-[सं०] श्राम । श्राम्र वृत्त । श्रतिसारस्या-[सं०] रासन । रास्ना । श्रतिसाम्या-[सं०] जलमुलेठी। विद्यिष्टिमधु। श्रतिसारभ-[सं०] श्राम। श्राम्र। त्रतिस्कंधा-[सं०] कुलथी । कुलत्थ । श्रतीस-[हिं०, सं०] श्रतिविषा। विषा। प्रतिविषा। श्रःगी। विथ्वा। श्ररुणा। शुक्तकंदा। उपविषा। भंगुरा। घुण-वस्त्रभा त्रादि । [वँ०] श्रातइच । [मरा०] श्रतिविष । [मा०] श्रतीस। पतीस। [पं०] श्रतीस। पतिस। सखीहरी। सुखीहरी | चितिजरी । पत्रिस । बेांगा । [ते०] श्रतिवस । [ता०] श्रतिवद्यम । [द्रा०] श्रतिविष । [क०] श्रतिखजे। [काश ॰] मोहंद-इ-गज सफेद । हेंग-इ-सफेद । [भा ॰] श्रइस । श्राइस । [गु॰] श्रतिविश नी काली । श्रतिविष । श्रतिवस । [লীo] Aconitum Heterophyllum. Syn: Aconitum bordatum.

श्रतीस चुप जाति की वनैाषधि है श्रीर सिंध से कुमाऊँ श्रीर हिसारा तक, शिमला श्रीर इसके श्रासपास में, चंबा प्रांत एवं हिमालय पहाड़ में ६००० फुट से १५००० फुट तक, नीची-ऊँची चोटियों पर श्रधिकता से पाई जाती है तथा केदारनाथ के पहाड़ पर श्रीर हिंदुस्तान के पहाड़ी पांतों में भी देखने में श्राती है।

इसका चुप ३ फुट तक ऊँचा होता है। ढंडी सीधी थ्रीर पत्तों से घिरी हुई होती है थ्रीर ढंडी की जड़ से शाखाएँ निकलती हैं। पत्ते २ से ४ इंच तक चैड़े, कुछ मोटे, चमकीले, ऊपर से हरे थ्रीर नीचे से पीले तथा नोकदार होते हैं। फूल १-१॥ इंच लंबे, चमकीले, हरापन लिए नीले, पीले, बैंगनी धारी-वाले थ्रीर सघन छगते हैं। बीज चिकने छिलकेवाले थ्रीर नेकदार होते हैं।

इस पै। घे की जड़ की श्रतीस कहते हैं। यह प्राय: छोटी जँगली के समान या श्राध इंच मेाटी, कि चित् गावदुम, हाथी की सुँड़ के श्राकारवाली, जपर की मोटी श्रीर नीचे की श्रोर पतली होती हुई जमीन के श्रंदर घुसी रहती है। यह १ से १॥ इंच तक या इससे भी श्रिष्ठिक २ इंच तक छंबी होती है। यह जड़ जपर से हलकी खाकी या कि चित् बादामी रंग की, श्रीर तोड़ने पर श्रंदर से दूषिया सफेद दिखाई पड़ती है। इसका स्वाद कड़वा श्रीर कसैला होता है।

यह काले और सफेद रंगों के भेद से दो प्रकार की होती है; किंतु, कोई कोई श्राचार्य्य लाल रंग की श्रतीस भी मानते हैं। सफेद श्रतीस को संस्कृत में श्रतिविधा, शुक्ल-कंद, विध और प्रतिविध तथा काली के स्यामकंद, सितर्द्यंगी, भंगुरा और उपविधानिका कहते हैं। इसकी जड़ ही श्रीषध-प्रयोग में श्राती है।

त्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष—गरम, चरपरी, कड़वी, पाचक, जठराग्नि-प्रदीपक तथा जीर्ण ज्वर, कफ, पित्त, श्रातिसार, श्रामदोष, विष, खाँसी, वमन श्रीर कृमिरोग की दूर करनेवाली एवं विषम ज्वर में गुणकारी है।

उपर्युक्त तीनें। प्रकार की श्रतीस रस, वीर्य्य श्रीर विपाक में बराबर हैं; परंतु गुणों में सफेद उत्तम है।

इसका स्त्रकी जठरामि का प्रदीपक तथा कफ, पित स्रौर स्रतिसार का नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — दूसरे दर्जे में गरम श्रीर रूच, पाचक, श्रतिसारवर्डक, कफ श्रीर वातनशक, श्रोज की बढ़ानेवाली तथा श्रश् श्रीर जलेदिर में गुणकारी है। मात्रा इ रत्ती से १॥ माशे तक।

प्रयोग—१. ज्वर, मंदाभि, श्रतिसार, खांसी श्रादि पर लाभकारी है। बालकों के ज्वर में दी जाती है। प्रत्येक जड़ तोड़कर देख लेनी चाहिए। यदि वह भीतर से सफेद न निकले या स्वाद में कुछ श्रंतर है। श्रथवा चंबाने से जीभ में सुद्धपन या खुजली मालूम है। तो उसे काम में नहीं लाना चाहिए। सामयिक ज्वर की रोकने के लिये यह श्रव्छी श्रोपधि है। जब ज्वर न चढ़ा हो तब श्रथवा ज्वर श्राने के पूर्व ही तीन तीन या चार चार घंटे पर २० से ३० ग्रेन की मान्ना में देनी चाहिए; श्रीर ज्वर के बाद की निवेलता श्रथवा श्रीर किसी राग के कारण उत्पन्न हुई निर्वे ता पर १ प्रेन से १० प्रेन की मात्रा में देने से बहुत लाभ होता है। २. ज्वर रोग में इसके चूर्ण की फंकी ३-४ बार २-४ घंटे के श्रंतर पर सेवन करने से पसीना आकर ज्वर उतर जाता है। १ रत्ती चूर्ण और १॥ रत्ती कसीस दोनों को मिलाकर देने से छाभ होता है। ३. विषम ज्वर, जूड़ी बुखार श्रीर पारी के बुखार श्रादि में इसके चूर्ण में छोटी इलायची थ्रौर वंशलोचन का चूर्य मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। एक माशे चूर्ण में आधी रत्ती कुनैन मिला-कर ज्वर के पूर्व २-३ मात्रा देने से फायदा होता है। एक तोले चूर्ण में १॥ रत्ती शुद्ध संखिया मिलाकर २ रत्ती की मात्रा से ज्वर के पूर्व २-३ बार सेवन करने से भी लाभ होता है। ४. मलेरिया ज्वर में इसका चूर्ण ४ रत्ती की मात्रा में देने से फायदा होता है। ४. ज्वर की निर्वलता पर इसकी सींठ श्रीर लै।ह-भस्म के साथ देना चाहिए। ६. निवंलता में शकर श्रीर दुध के साथ इसका सेवन करना श्रच्छा है। ७. श्रति-सार श्रीर श्रामातिसार में २ माशे चुर्ण की फंकी देकर श्राठ पहर भींगी हुई २ माशे सेांठ का पीसकर पिलाना चाहिए। र माशे चूण हरें के मुख्बे के साथ सेवन करने से उक्त रेाग का नाश होता है। इसका श्रीर कुड़े का चूर्ण मधु के साथ सेवन करने से भी फायदा होता है। चूर्ण की पानी में पीस-कर देने से लाभ होता है। द रक्तिपत्त में इसका श्रीर कुड़े का चूर्ण मधु के साथ सेवन करना हितकारी है। ६. इसके चूर्ण में बायबिडंग का चूर मिलाकर सेवन करने से कृमिराग का नाश होता है। १०. खाँसी में इसका मधु के साथ सेवन करना गुणकारी है। ११. श्वास में इसका थीर पुहकरमूल का चूर्ण मधु के साथ सेवन करना चाहिए। १२. श्रक्षिमांच में और पाचन शक्ति की वृद्धि के लिये इसकाे सेांठ या पीपल के साथ मधु में मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। १३. चर्मारोग श्रीर फेाड़े-फुंसियों पर चिरायते के श्रक के साथ इसका सेवन करना हितकारी है। १४. वमन में नागकेसर के साथ सेवन करना चाहिए।

श्रतीसार-[सं०] श्रतिसार रेाग।

श्रतुतिनाप्याल-[मला०] कीटमारी। कीड़ामारी।

श्रतुळ-[सं०] १. तिलकः। तिलपुष्पी। २. कफः। रलेष्मा। चलगमः।

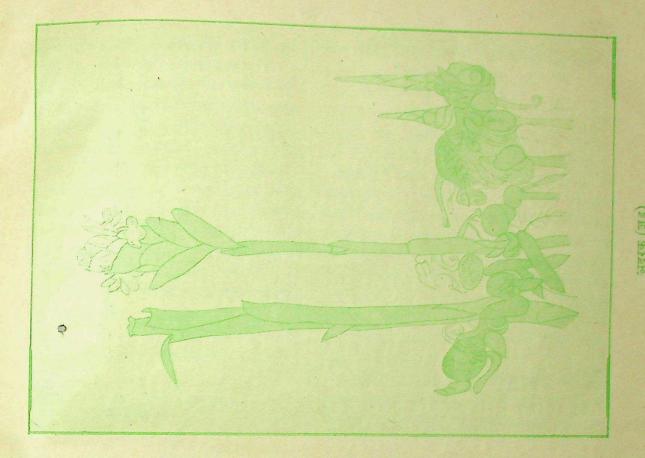
श्रतीश्रा-[हिं०] त्राक। श्रकं वृत्त।

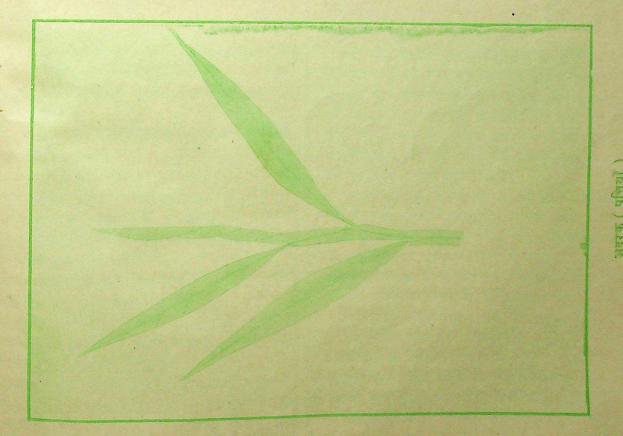
अत्कम-[भ॰] अत्कुमाह-[भ॰] } श्रोंगा । श्रपामार्गं । चिचड़ा । लटजीरा । श्चित्ति - [क॰, म॰] गूलर । उदुंबर । श्चित्ती - [ता॰, ते॰] गूलर । उदुंबर । श्चर्यंतपद्मा - [सं॰] कमितनी । पिक्षिनी । कमल का पंचांग । श्चर्यंत सुकुमार - [सं॰] कँगनी । कङ्गुधान्य । कैंग्नी । श्चर्यम्ल - [सं॰] १. विपांबित । वृत्ताम्त । गहादा । २. इमली । तिंतड़ी । ३. विजेशा नींबू । वीजपूर । ४. विजेशा नींबू जंगली । वन वीजपूर । जंगली विजेशा । ४. श्चर्यंत खट्टा रस । श्चर्यं-ताम्लरसयुक्त ।

अत्यम्लप्णीं-[सं०] १. श्रत्यम्लप्णी। तीक्ष्णा। कंड्रा। विल्लिस्या। करवड वल्ली। वनस्था। श्ररण्यवासिनी। [हिं०] रामचना। खटुश्रा। श्रमलवेल। श्रमलवेल। श्रमतीं। इमितीं। गिदादद्वाक। कस्सर। [वँ०] कडवड वेनि। वंद् ल। वुंद ल। श्रमलळता। सेानकेसुर। [मा०] श्रांवटवेल। कडमड विल्ला। श्रोधी। श्रंवट वेल। [मा०] रामचिणा। [ते०] मंडलमारी। कुरुदिन्ने। काडेय तिगे। कनपटिगे। मंडलमारी तिगे। मेकमेत्तनिचेटु। खाट खटूव वेल्य। [क०] हेग्गोलि। [पहा०] जारिललरा। [ल०] तकवृत्तिरिक। [श्रासा०] मेमटी। [प०] कारिक। श्रामलवेल। गिद्रदाक। दिकी। वल्लुर। [गु०] खाट खटंवो। तामान्य। [सिह०] वलरत्त दियनवा। [लै०] Vitis Trifolia. Syn: Vitis Carnosa. Vitis Pentaphylla.

यह छता जाति की वनै।पधि है जे। प्रायः सभी प्रांतें। में श्रीर विशेष कर उष्ण प्रदेशों में हिमालय पहाड़ तक तथा सीलान के जंगलां तथा माहियां के चूनों त्यादि पर श्रिधिकता से पाई जाती है। वर्षा ऋतु में इसकी हरी-भरी बेल जंगलों, साड़ियों तथा थृहर के वृत्तों पर खूव फेली हुई देखने में श्राती है। डाक्टरों ने इसकी गणना श्रंगूर वर्ग में की है। इसका डंडल पतला, श्रनेक शाखा-प्रशाखात्रों से युक्त श्रीर त्रिके। गाकार होता है। पत्ते की डंडी की दूसरी श्रोर श्रनियमित तागे के समान बाल होते हैं, जो काड़ी श्रादि से लिपट जाया करते हैं। प्रत्येक सींके पर तीन तीन पत्ते छगते हैं जिनमें से बीच का पत्ता बड़ा होता है। पत्ते डंडी की श्रोर से गीलाकार होकर बीच के भाग में अनीदार होते हैं। फूल कि चित् हरा पन लिए सफेद रंग के कुमकों में त्राते हैं त्रीर फल भी कुमकों ही में मटर के समान गोल होते हैं श्रीर कच्चे रहने की दशा में हरे, श्रीर पकने पर नीले रंग के तीन चार बीजवाले श्रीर रस से भरे हुए होते हैं। बीज त्रिकीयाकार श्रीर नुकी बे होते हैं।

इस छता के नीचे लगभग १ इंच का एक कंद बैठता है। इस कंद से तंतु निकलकर जमीन के श्रंदर श्रंदर फैलता है श्रीर एक दो हाथ की दूरी पर वैसे ही एक एक कंद बैठता है। इस प्रकार जगह जगह श्राठ दस कंद है।ते हैं।





ल ने

ŧ

या से गर

हों गा

ता

GO 38

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुगा-दोष-तीक्षण, खटी, श्रमि-प्रदीपक, रुचिकारी तथा वात, प्लीहा, गुलम, चय रेगा श्रीर कफ की हरनेवाली है।

प्रयोग—१. इसकी जड़ श्रीर वीज श्रीपध-प्रयोग में श्राते हैं। इसकी जड़ की कामराज कहते हैं, जिसका लेग्शन बनाया जाता है। हल की रगड़ से बैलों के कंधों पर जो घाव होते हैं, उन पर पत्तों की पुल्टिस लगाई जाती है। इसकी जड़ काली मिर्च के साथ पीसकर फोड़े पर लगाने से छाभ होता है। २. बिच्छू के काटे हुए स्थान पर इसका कंद घिसकर लगाने से छाभ होता है। ३. सूजन श्रीर फोड़े पर कंद की पुल्टिस वाधनी चाहिए। ४. छुंसियों पर पत्तों की काली मिर्च के साथ पीसकर लगाने से फायदा होता है। १. श्रविसार में फछों की तरकारी खाना लाभकारी है। ६. हछ की रगड़ से बैलों की गईन में घाव उत्पन्न होने पर पत्तों की पुल्टिस बाधनी चाहिए।

२. अमलोभी। चांगेरी। अम्छलोगा।

श्चरख्यस्का-[सं॰] १. विजारा नींबू। मातुलुंग वृत्त । २. बिजारा नींबू जंगली । वन-बीजपुर । जंगली विजारा । ३. इमली । तिंतड़ी वृत्त ।

श्रात्यर्क-[सं०] श्राक सफेद । रवेतार्क । मदार ।

ग्रत्यानंदा-[सं०] ये।निरेाग विशेष।

श्चरयारक्ता-[सं०] श्रड़हुता । जपापुष्प ।

श्रात्याल-[सं०] चीता लाल । रक्त चित्रक ।

श्रत्युत्र-[सं०] हींग । हिंगु ।

त्रात्युत्रगंथा-[सं०] १ सूर्वा काली। कृष्ण गोकर्णी। काली मरोड़फली। २. त्रपराजिता नीली। कृष्णापराजिता। नीले फूल की त्रपराजिता। ३. श्रजमोदा। श्रजमोद।

त्रात्यूह-[सं०] १. मोर। कालकंड पत्ती। २. तेाता। ३. दात्यूह पत्ती।

श्चारयूहा-[सं०] १. नील। नीलिका। २. निर्गुडी। शेफालिका। नीले फूल की सेवड़ी।

श्चारयः-[सं०] घोड़ा । श्रथ्व ।

श्रत्रपळ-[मला॰] बेद । लैला । पानीजमा ।

श्रित्रिलाल-[पं०] काकजंघा नं० १। मसी।

श्रत्रश्रुवुखुमरम-[जैन०] माज नं । भावुक। भाउत्रा।

श्रत्रेलाल-[पं॰] काकजंघा। मसी।

श्रदंश-[सं॰] सूली बड़ी। महामूछक।

अद-[पं॰] श्रदरक । श्रार्द्गक । श्रादी ।

श्चदक-[ते॰] कुंदुरु । गुंद बरोसा ।

अद्कर-[पं०] अदरक । आर्द्गक । आदी ।

<mark>श्रद्ज</mark>-[श्र०] सुर्गाबी । जलकुक्कुट ।

श्रदमरम-[मला॰] बादाम देशी । देशी बादाम । वाताद भेद । श्रद्रक-[हिं०] श्रद्रख । श्रादी । [सं०] श्राद्रक । श्रंगवेर । कडुभद्र । श्राद्रिका इत्यादि । [बँ०] श्राद्रा । [मरा॰] श्राबे। [गु॰] श्रादु । [क॰] श्रवल । इसि शॉठि । [खा॰] इसी सुं ठी । [मा॰] श्रादो । [पं॰] श्रदकर । श्रद । श्रदक । श्रादा। [ते॰] श्रवल । श्रवलम । [ता॰] इंजी । [दा॰] इंजि । [मला॰] इंची । [बर॰] ख्येनसेंग । गिनसिन । [संइ॰] श्रमु इंगुरू । [फा॰] जग विलतर । जंजबील रतव । जजबीले रतव। [लै॰] Zingiber Officinale. [र्श॰] Ginger.

भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में अदरक की खेती की जाती है। इसका गुलम प्रायः एक हाथ ऊँचा होता है। इसके पत्ते बीस के पत्तों के समान परंतु उनसे कुछ छोटे होते हैं। इसकी जह में जो कंद होता है, उसी को अदरक कहते हैं। यह रेतीली भूमि में, गोवर की खाद डाली हुई दुमट मिट्टी में अथवा परती जमीन में अधिक उत्पन्न होता है। वैसाख के महीने में अदरक से आंखवाले छोटे छोटे अंशों को तोड़कर भली भाँति जीते हुए खेत की क्यारियों में डेड़ डेड़ फुट के अंतर पर रेापकर, उनके ऊपर पत्ते आदि फेटाकर, उचित समय पर सींचा करते हैं और कातिक, अगहन में खोदकर निकालते हैं।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—भेदक, भारी, तेज, गरम, श्रक्ति-प्रदीपक, चरपरा, पाक में मधुर, रूखा तथा वात श्रोर कफ-नाशक, मंदाग्नि, गले, मस्तक, छाती के रेगग, श्रश्री, उदर्द, गठिया श्रीर जले।दर श्रादि श्रनेक रेगगों में हितकर है। जो गुण सींठ में हैं, वे ही श्रदरक में भी हैं। भोजन के पहले सेंघा नमक के साथ श्रदरक खाने से श्रग्नि तेज होती है, रुचि बढ़ती है तथा जीम श्रीर कंठ श्रुद्ध होते हैं।

कें। तथा गरमी श्रीर शरद् ऋतु में श्रदरक खाना वर्जित है।

कांजी श्रीर सेंघा नमक के साथ यह पाचक, श्रानिप्रदीपक, तथा मलबंध श्रीर श्रामवात का नाशक है। जँबीरी नींबृ श्रीर सेंघा नमक के साथ मुख के। श्रुद्ध करता है तथा ग्रीष्म-ऋतु में स्जाक, पांडु रेग, रक्तिपत्त, त्रण, मूत्ररेग, पथरी, ज्वर, दाह श्रीर पित्त के। शांत करता है।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष — तीसरे दर्जे में गरम श्रीर पहले में रूच, पाचक, श्राध्मान श्रीर वायु का नाशक, चुधा-वर्दक, पक्वाशय के कफ श्रीर स्निम्धता का नाश करनेवाला, पक्काशय श्रीर यकृत तथा पाचन-शक्ति की बलप्रद है। इसका मुख्बा कफ न होता है तथा शीत प्रकृतिवाले की श्रद्यंत गुण-कारी है। उच्चा प्रकृतिवालों, को यह हानिकारक है।

द्र्पनाशक—बादाम रागन, कपूर और मधु। प्रतिनिधि—सोंठ श्रीर काली मिर्च।

मात्रा-दो माशे से १ तीले तक।

प्रयोग-१. सूखे श्रद्रक की सींठ कहते हैं। श्रद्रक यूनानी, श्रायुर्वेदीय श्रीर डाक्टरी तीनां प्रकार की चिकित्सा में व्यवहृत होता है। इसका सेवन करने से मंदाग्नि, श्रक्ति.

कफ, खाँसी, श्वास, हृद्य रेाग, बवासीर, उदरशूल श्रीर वात-विबंधादि अनेक रोग दूर होते हैं। भोजन करने के पहले इसको सेंघा नमक के साथ खाना हितकारी है। यह ग्रहचि श्रीर मुख की विरसता का दूर करता है श्रीर जिह्ना तथा कंठ को शुद्ध करता है। इसका रस श्रनेक श्रीपधों के साथ विविध रोगों में श्रनुपान रूप से व्यवहार में श्राता है। इसका मुख्बा श्रीर हलुश्रा श्रादि बनता है श्रीर वह गुर्णों में श्रदरक के समान होता है। २. इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करने से कफ श्रीर खाँसी, व्वास, हृदय राग श्रादि नष्ट होते हैं। ३. इसके रस की कुछ गरम कर उसमें मिस्री मिला-कर सेवन करने से प्रतिश्याय दूर होता है। ४, अदरक की घी में भूनकर कि चित् नमक मिलाकर खाने से वायु का विबंध भ्रोर श्रफरा नष्ट होता है। ४. इसकी जँबीरी नींबू के रस में डाल-कर नमक मिलाकर खाने से श्रजीर्ण धौर श्रक्ति दूर होती है। ६. इसकी चाय के समान पानी में पकाकर पान करने से सरदी. र्खासी, प्रतिश्याय श्रादि का नाश होता है तथा हृदय में बल की वृद्धि होती है। ७. इसके रस में पुराना गुड़ मिळाकर सेवन करने से सर्वांग शोध का नाश होता है। द. इसके टुकड़े डाढ़ के नीचे दबाने से डाढ़ की पीड़ा शांत होती है। ६. कर्णशूल पर इसका रस गरम करके कान में डालना चाहिए। १०. वात श्रीर कफ-संबंधी नेत्र-पीड़ा पर इसके रस की २-३ बूँ दें श्रीखों में डालना हितकारी है। ११. कामला पर इसके रस में त्रिफला की भावना देकर सेवन करना गुणकारी है। १२. उदर की पीड़ा पर श्रजवायन में इसके रस की भावना देकर उसे सुखा-कर गरम जल के साथ सेवन करना चाहिए। १३. संधिवात की पीड़ा पर इसके रस के साथ तिल के तेल का सिद्ध कर मालिश करने से लाभ होता है। १४, श्रहचि में भोजन के पहले इसकी सेंघा नमक के साथ खाना हितकारी है। १४. शिरपीड़ा में इसका रस श्रीर दूध एक में मिलाकर सूँ घने से लाम होता है। १६. मंदामि, प्रतिश्याय श्रीर खाँसी में इसके रस में मधु मिलाकर सेवन करना चाहिए। सरदी श्रीर खाँसी में इसके रस में शकर मिलाकर गरम कर के पिलाना हितकारी है। १७. पित्तन मंदािश में इसके रस में नींबू का रस मिला-कर पान करने से फायदा होता है। १८. वमन में इसका रस, तुजसी का रस, मधु श्रीर मेारपंख की चंद्रिका की भस्म सबके। एक में मिलाकर सेवन करने से लाम होता है। १६. नेत्रपीड़ा में २-३ बूँद रस श्रांख में टपकाना चाहिए। ज्वर में होनेवाली मूर्ज्ज़ में इसके रस की नास देना गुणकारी है। २१. सिंदूर के उपद्रव में इसकी मुख में रखना, रोटी के साथ खाना अथवा नमक के साथ खाना चाहिए। २२. सर्दीं की दंत-पीड़ा में इसके दुकड़े की नमक में लपेटकर दाँतों के बीच में द्वाने से लाभ होता है। २३. वातज श्रंड-

वृद्धि में इसका रस मधु के साथ पीना चाहिए। २४. कामला रोग में श्रदरक, त्रिफला श्रीर गुड़ का सेवन करना लाभदायक है। २४. कास, व्वास, प्रतिश्याय श्रौर कफ में इसका रस मध् मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। २६. वातज पीड़ा में इसके रस में श्रजवायन पीसकर मलना चाहिए। २७. सर्वांग शोध पर इसके स्वरस में पुराना गुड़ मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। किंतु पथ्य केवल बकरी का दूध होना चाहिए। २८ कर्णशूल में इसके रस की गुनगुना करके कान में डालने से पीड़ा शांत होती है; अथवा इसका रस, मधु, संघा नमक श्रीर तेल गरम करके कान में डालना चाहिए। २६. जोड़ों की वातज पीड़ा में इसके एक सेर स्वरस में आध सेर तिल का तेल सिद्ध करके मालिश करने से फायदा होता है। **श्रदरख-**[हि॰] श्रदरक। श्रार्दक। श्रादी। **अदल**-[सं॰] १. समुद्रफल । हिज्जल । २. घृत । घी । श्रद्छा-[सं॰] घीकुँवार । घृतकुमारी । श्रद्स-[अ०] मसूर । मसुरी । श्रदसर-[ते०] श्रहसा। श्राटरुप। श्रदारिका-[सं०] ऋतुमती । उत्तरकंबल । श्रदित्यल्-[ते०] चनसुर। चंद्रशूर। श्रदित्यालु-[ते०] चनसुर। चंद्रशूर। श्रदिविमुल्ली-[ते॰] नेवारी। नवमिल्लका। श्रदीठ-[हिं०] श्रवुंद । रिसाली । **त्रद्मुट्ड-**[खा॰, क॰] श्रांतमूल । श्रांतामूल । श्रदेविमल्ली-[ते॰] श्रास्फाता । हापरमाली । श्रास्फाता लता । श्रदोमा-[गोश्रा०] खिरनी। खीरी। चीरिसी। श्रद्भ तसार-[सं०] खेरसार । खदिरसार । श्चद्रक-[सं०] १. वकायन। महानि व। २. श्चद्रक। श्चाद्रक। थादी। [पं०] अदरक। थ्रादी। **अद्रका**-[सं॰] अदरक। आद्रंक। आदी। श्रद्भिक्णीं-[सं०] श्रपराजिता। के।यल। स्रद्भिका-[सं०] १. बकायन । महानि ब । २. धनिया । धान्यक । श्रद्भित-[सं०] १. तुंबर । तुंबर । २. गेरू । गौरिक । गेरमाटी । ३. शिलाजीत। श्रद्भिजतु-[सं०] शिलाजीत । शिलाजतु । **श्रद्रिजा-**[सं॰] सिंहली पीपछ । सेंहल पिष्पली । **त्रद्रितरु-**[सं॰] शिलाजीत । शिलाजतु । श्रद्भिम्-[सं०] मृसाकानी । श्रालुकर्णी खता । मृसाकत्नी । श्रद्भिमाषा-[सं०] मपवन । माषपर्णी । **श्रद्भितानुजा-**[सं०] त्रायमान । त्रायमाणा लता । श्रद्भिसार-[सं०] १. लोहा। लीह। २. ताँबा। ताम्र धातु। श्रद्रेष्क-[सं०] } वकायन । महानिंब वृत्त ।





STREET, STREET,

10 20 1

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधकपारी-[हि॰] सूर्यावत्ते राग । श्राधाशीशी। श्रधावभेदक। त्रध**डोडे-**[ता॰] श्रहूसा । वासक । श्रधःपुट-[सं०] चिरोंजी । पयाल । त्राधःपुष्पी-[सं०] १. श्रंधाहुली। श्रंधपुष्पी। २. गोभी। गोजिहा। त्रधःशल्य-[सं॰] } त्रधःशाल्य-[सं॰] } श्रोंगा। श्रपामार्ग। चिचड़ा। लट-श्रधःशेखर-[सं०] जीरा। श्रोंगा सफेद। श्वेतापामार्ग। **अधम-**[सं०] श्रमलवेंत । श्रम्लवेतस । श्रधर-[सं०] १. होंठ। श्रोष्ट। २. स्त्रीयोनि। भग। **अधरकंटक-**[सं०] धमासा । दुरालभा । हिंगुन्ना । श्रधरकंटिका-[सं०] सतावर। शतावरी। श्रधविरनी-[वँ०] बाह्यी। त्रधिवर्णी-[वँ०] मंडुकपानी । मंडुकपर्णी । ब्रह्म-मंडूकी । त्रधसारित की जरी-[पं॰] हंसराज नं॰ ३। मयूरशिखा। परस्यांवशा । अधामार्ग-[सं०] } श्रोंगा। श्रपामार्ग। चिचड़ा। अधामार्गव-[सं०] श्रिकं-[सं०] रोहिस घास । कतृण । श्रिधिकंटक-[सं०] धमासा । दुरालभा । त्रिधिक्तिका-[सं॰] सीप। मुक्तागृह। अधिजिह्न-[सं०] मुखराग-विशेष। रक्त मिले हुए कफ से जीभ की नेक के समान जो शोध जीभ के ऊपर उत्पन्न होता है, उसकी श्रधिजिह्न कहते हैं। पकने पर यह श्रसाध्य कहा गया है। श्रिधिमंथ-[सं०] नेत्रराग-विशेष। इसमें श्रांख श्रीर श्राधा सिर बहुत ही फटा सा जाता है अथवा उसमें मथने की सी पीड़ा होती है। व्याधि के प्रभाव से इस रेगा में श्राधे सिर में पीड़ा होती है; इसलिये इसे अधिमंथ कहते हैं। इसके लच्च वातज श्रमिष्यंद के समान होते हैं। अधिमांसक-[सं० | दंतराग-विशेष। अधिमुक्तक-[सं०] माधवी लता । श्रतिमुक्त । अधोघंटा-[सं०] श्रोंगा । श्रवामार्ग । चिचड़ा । त्रधोमुख पाताल यन्त्र-[सं॰] यंत्र-विशेष । कपड़-मिट्टी की हुई त्रातशी शीशी में द्रव्य भरकर उसका मुख सींकें से बंद कर दे जिसमें उन सींकें के द्वारा पिवला हुआ तेल इत्यादि नीचे को गिरे श्रीर एक नाँद में छेद करके उसी छेद की राह से शीशी की नली को निकाले। फिर उस नाँद सहित शीशी की चूल्हे पर इस प्रकार रखे जिसमें शीशी की नली उस चूल्हे के भीतर लटकती रहे श्रीर नाँद सहित शीशी चूल्हे पर रहे। शीशी की नली के नीचे कोई पात्र रख दे श्रीर शीशी के जपर नांद में कंडों की श्रप्ति दे। इस प्रकार करने से तेल इत्यादि नजी की

राह से नीचे के पात्र में गिरता है। त्रघो मुखा-[सं०] १. गोभी । गोजिह्वा । गोजिया । २. श्रंघा-हुली । श्रधःपुष्पी । श्रघोवायु-[सं॰] श्रपान वायु । पाद । श्रधोरेचन-[सं०] श्रमततास । श्रारम्बध । त्रध्यंडा-[सं०] १. कैंछि । किंवाच । कपिकच्छु जता । २. मुहँ श्रांवला । भूम्यामलकी । ३. ताल मखाना । केकिलाच । श्रध्यत्त-[सं०] १. खिरनी । चीरिका वृत्त । २. श्राक सफेद । श्वेताकं। मदार। त्रध्वग-[सं०] ऊँट । उष्ट्र । श्र**ध्वगत्तमी-[**सं०] पत्ती । चिद्रिया । श्रध्वगभोग्य-[सं०] त्रध्वगभोज्य-[सं॰] श्रामद्गा श्राम्रातक वृत्त । श्रमद्गा। श्रध्वगवृद्ध-[सं०] श्रामडा । श्रात्रातक । श्रध्वजा-[सं०] से।नुली। स्वणुली। श्रद्धा-[सं०] मेदा । मेदोभवा । श्रध्वश्रत्य-[सं०] श्रोंगा । चिच**इा । श्र**पामार्ग । श्रध्वसिद्धक-[सं०] निर्गुंडी। सिंदुवार। श्रध्वांडशात्रव-[सं०] सोनापाठा । श्योगाक वृत्त । श्ररतु । श्चनंत-[सं०] १. निर्गुं डी । सि[•]दुवार । मेवड़ी । २. धमासा । दुराजभा। हिंगुग्रा। ३. श्रवरक। श्रभ्रक। श्चनंतक-[सं॰] १. मृत्ती । मूलक । २. नरसल । नलतृषा । **श्रनंतमूळ-**[हिं०] श्रनंतमूछ । सारिवा । साछसा । [सं०] सारिवा। शारिवा। श्रनंता। गोपा। भद्रवल्लो। नागजिह्ना इत्यादि । [मरा॰] उपलसरी । [कें।॰] उपटसुळी । [वँ०] श्यामा लता । [गु०] कपरी । कपुरी । खनेडी । [ते०] नील-गीत । [ड॰] गुपामान मूल । गुयामान मूल । [केल॰] शेव-वेल। [श्रं॰] Hemidesmus Root. अनंतमूळ लता जाति की वनाषि पथरीली और कंकरीली भूमि में श्रधिक उत्पन्न होती है श्रीर प्रायः सभी प्रांतों में पाई जाती है; विशेषकर उत्तर हिंदुस्तान में, वंगाल, बिहार, हिमा-लय पहाड़ के प्रदेशों में, बाँदा से श्रवध श्रीर शिक्म तक श्रीर द्विण में ट्रावनकार से सीलोन तक, वंबई श्रीर कारीमंडल के किनारे अधिक पाई जाती है। इसकी खता वृचों का सहारा पाकर उन पर लिपटती हुई चढ़ती है श्रधवा जमीन पर दूर तक फैन जाती है। इसकी जड़ को खोदकर निकाल नेते हैं; परंतु कुल श्रंश रहने देने से समय पाकर फिर उससे छता उत्पन्न होकर फैलती है। इसकी रापने श्रीर बढ़ाने में विशेष नियम की श्चावश्यकता नहीं होती। श्रनंतमूल की बेल मोटाई में कलम से लेकर दँगली के समान श्रीर लंबाई में श्रनेक प्रकार की होती है । इसकी जड़ श्रीपघ-

प्रयोग में श्राती है। यह जड़ कम या श्रिक बल खाई हुई, द इंच से १२ इंच तक लंबी होती है श्रीर सीधे बल में इस पर नालियां भी होती हैं। इसकी छाल पतली श्रीर पीलापन लिए भूरी होती है जिसकी नीचे की श्रोर से सहज में उतार सकते हैं। नीचे की छाल प्रायः छल्लों में फटी हुई श्रीर सुगंधित होती है श्रीर इसका स्वाद मिठास लिए हुए कुळ खराशदार होता है।

चिशेष — एक जंगल में घूमते हुए मैंने यह लता एक गूलर के वृच पर बहुत दूर तक फैली हुई देखी। भूमि के पास इसकी जड़ की मोटाई प्रायः देा इंच थी श्रीर ऊपर की श्रोर घटती हुई शाला-प्रशालाओं के रूप में खूब फैली हुई थी। वृच की शालाओं पर इसके पत्ते नहीं थे, इसलिये पहचानने में पहले कुछ कठिनाई हुई। किंतु ऊपर की श्रोर उस वृच की डालियें। पर इसके पत्ते देखने से सहज में पहचान हो। गई। यह लता वपीं की पुरानी होने के कारण बहुत मोटी हो। गई थी, इससे श्रनुमान कर सकते हैं कि इसकी जड़ कितनी मोटी श्रीर छंवी होगी।

एक बार इसको रोपण कर देने से एक ही लता से कुछ दिनों में श्रनेक लताएँ हो जाती हैं। श्रनुभव से सिद्ध हुश्रा है कि इसकी जड़ के खोदकर निकाल लेने से उसकी जो सोर भूमि में बच जाती है, उससे कुछ दिनों में नई छताएँ फिर उत्पन्न होती हैं।

काली श्रीर सफेद इन भेदों से यह छता दे। प्रकार की होती है; किंतु कहीं कहीं एक श्रीर ही जता की "श्रनंतमूल" कहते हैं। इसजिये इस तीसरी जता का नाम मैंने "श्रनंतम् का मेद" रखा है। पहले द्विविध श्रनंतमूलों के गुण-देाप जिसकर फिर यथाक्रम श्रनंतमूल काजी, श्रनंतमूल भेद श्रीर श्रनंतमूछ सफेद का सचित्र वर्णन किया जायगा।

गुण द्वा ष-रोनें श्रनंतमूल स्वादु, स्निग्ध, भारी, विषव्न, त्रिदोषनाशक, वीर्यवर्द्धक, बलकारी, वृष्य, रसायन, पसीना श्रीर मृत्र लानेवाळी तथा श्रिप्तमांच, श्रक्ति, श्र्वास, काश, श्रामजनित रोग, विषदोष, रक्तप्रदर, ज्वरातिसार, वपदंश-विकार, सब प्रकार के त्वचा-रोग, श्रामवात, वातरक श्रीर पारा खाने से उत्पन्न रोगों का नाश करनेवाली एवं श्रत्यंत रक्त-शोधक है।

इसका श्रक मंदाशि श्रीर खाँसी में गुणकारी होता है।

प्रयोग—१. निर्वलता, फिरंग रोग या श्रातशक के कारण उत्पन्न शरीर के पुराने चर्मरीग में या श्रीर किसी कारण से उत्पन्न चर्मरीग में, किठन गिठया श्रीर श्रातशक से उत्पन्न रोगों में इसका प्रयोग बहुत लाभकारी है। उशवा मगरवी की जगह इसके। व्यवहार में ला सकते हैं, बल्कि किसी किसी डाक्टर श्रीर हकीम की सम्मित में यह उशवे से भी श्रच्छी श्रीषध है। यह रुधिर की साफ करती हैं श्रीर पाचन-शक्ति की बढ़ा-कर मूख लगाती है। दो श्रीस श्रनंतमूल कुचलकर श्राध सेर

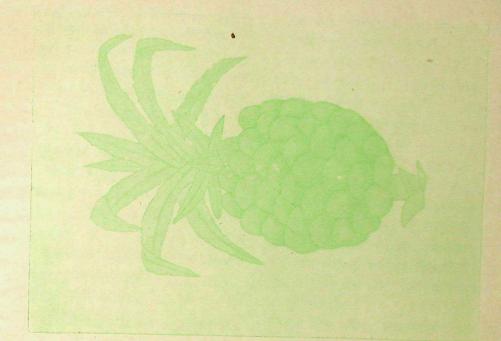
खीलते हुए पानी में दे। घंटे तक भिगी श्रीर निचाड़कर श्रींस से भ श्रींस की मात्रा में पिलाना चाहिए। २. वर्ण पा इसकी जड़ पीसकर वाँधने से लाभ होता है। ३. विस्फोटक गलित कुष्ट, खुजली श्रहचि, गर्मी श्रीर श्वेत प्रदर में इसकी जड़ों का काढ़ा माथे के चूर्ण के साथ सेवन करना चाहिए। ४. बालकों के मूत्र में रेत माने पर जड़ का चूर्ण दूध तथा मिल्ली के साथ देना हितकारी है। ४. श्रांख की फूली पर पत्तों का रस टपकाना गुणकारी है। ६. रुक रुककर जलन के साथ मुन श्राने पर जड़ों की पुटपाक कर जीरे श्रीर मिस्रो के साथ सेवन करना लाभदायक है। ७, वमन में इसकी जड़ पानी में पीस-वर हींग और घी मिलाकर सेवन करना चाहिए। द. शूल पर समभाग इसके बीज और जीरा पीसकर गुड़ के साथ सेवन करना जाभदायक है। ६. दंतरोग पर समभाग इसके पत्ते श्रीर बरियारे के पत्ते पीसकर दाँतों के बीच रखना हितकारी है। १०. पित्तज्वर में इसकी जड़ श्रीर भसींड के काढ़े में मिस्री मिलाकर पिलाना गुणकारी है। ११, विष पर इसकी जड़ पानी में पीसकर पिलाना चाहिए। १२. शिरपीडा में इसकी जड़ पानी में पीसकर लेप करने से लाभ होता है। १३. पेट के दर्द में इसकी जुड़ पानी में पीसकर गरम करके पिलाना चाहिए।

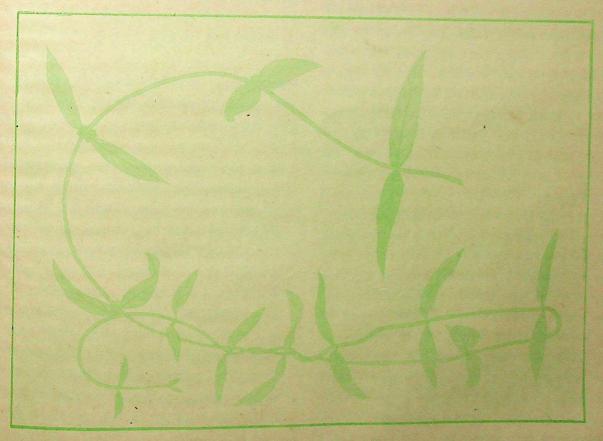
1. श्रनंतम् ल काली । कृष्ण शारिवा । करिश्रवा साउ । २. श्रनंतम् ल भेद । तरली । कुद्री । ३. श्रनंतम् ल सफेद । श्वेत शारिवा । सफेद श्रनंतम् ल ।

त्रनंतमूळ काली—[हिं०] काली श्रनंतमूळ । कालीसर । करि श्रवासा क । [सं०] कळघंटिका । स्यामा । गोपी । गोपवधू इत्यादि । [वँ०] स्यामा लता । स्याम ळता । [यू०] काळी-सुर । [को०] उपरसुली । [मरा०] काली उपरसरी । काली कावली । [मा०] कालीसर । कृष्णसखा । [गु०] काली उपलसरी । काडडियां कुठेर । [क०] नीळतिग । [पं०] करिय्यासाउ । [सहा०] कालीदुधी, वेलकमु । [गोरल०] वामर । [ते०] नलतिग [म०, प्र०] भोरी । [खा०] गौरवी वल्ली । [लै०] Ichnocarpus Frutescens.

पश्चिमी हिमालय, में सिरमीर से नेपाछ तक, पश्चिम की श्रोर गंगा नदी के श्रास पास, देहजी से बंगाज तक, श्रासाम, सिजहट, चटगाँव श्रीर दिन्छन में पाई जाती है।

यह भाड़दार लता जाति की वनीषधि श्रनेक शाखाश्रों के कारण सवन श्रीर वृजों पर दूर तक चढ़नेवाली होती हैं। इसकी शाखाएँ छंबी, पतली श्रीर सफेद रंग की होती हैं। यह वेल वारहें। मास हरी भरी दिखाई पड़ती है। पत्ते जामुन के पत्तों के समान र-३ इंच छंबे, पान से १॥ इंच तक बीड़े, श्रनीदार, कालापन लिए हरे रंग के, सफेद रेशेवाले श्रीर सम वर्ती होते हैं। फूब छोटे-छोटे हरापन लिए सफेद श्रथवा पीछापन





SERVICE DOS

98 29

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar जिए सफेद कि चित् सुगंधित श्रयवा गंधहीन होते हैं। फिलियाँ र से ४ इंच तक छंबी श्रीर बीज श्राध इंच तक लंबा होता है।

प्रयोग—१. प्रायः इसकी जड़ श्रीपध-प्रयोग में शाती है। यह रक्त-शोधक, वलवर्डक श्रीर सारसा परिला के समान गुण-कारी होती है। २. ज्वर में डंडी श्रीर पत्तों का काड़ा दिया जाता है। ३. यन्दाग्ति में ४ तोले जड़ के काढ़े में पीपल का चूर्ण मिला कर पिलाना हितकारी है। ४. रवचा-रेग पर इसके काढ़े में मधु डालकर पीना लामकारी है। ४. उपदंश में इसकी जड़ श्रीर चोवचीनी का काढ़ा हितकारी है। ६. नेत्र के शुक्र रोग में इसके काढ़े में मधु मिलाकर पिलाना चाहिए। अनंतमूल भेद – [हिं] श्रनंतमूल तरली। [वं] कुदरी। [संश] ग्रामेट। गे।मेटी। [ते] तिडडांटा। [संश] श्रत श्रट। [कोल] गुल कुकर। गलले। कुकरी। कुललाकी। [पं] चंवा। वनककरा। [ले] Zelmeria Umbellata. Syn: Momordica Umbellata.

यह आरतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में श्रिधिकता से पाई जाती है श्रीर रत्निगिरि की वाटिकाश्रों में श्राप ही श्राप जंगली उत्पन्न होती है। यह जता जाति की वनस्पति है। इसके पत्ते करेले के पत्तों के समान होते हैं श्रीर फल परवल के समान जगते हैं।

प्रयोग—केंकिया में शुक-प्रमेह पर इसकी जड़ का रस, सफेद जीरे थीर मिस्री के साथ टंढे दूध में मिजाकर पीते हैं। भिलाव के रस से उत्पन्न हुए छाजे पर इसके पत्तों का रस जगाया जाता है।

यह पुष्टिकर श्रीर स्थूलकारक श्रोषिध है। इसके लिये इसकी जड़, पकाए हुए प्याज, जीरे, मिस्री श्रीर घृत का सेवन किया जाता है श्रथवा इसकी जड़ की दूध श्रीर मिस्री के साथ सेवन करते हैं।

अनंतमूल सफेद — [६०] सफेद अनंतमूल। श्वेत सारिवा।
गोरीसर। गोरीसर। गोरिया साऊ। कपुरी। मगरवु। जंगली।
चानवेली। हिंदी सालसा। [सं०] नागजिह्वा। गोपी। गोपकन्या। गोपवल्ली। सारिवा। उत्पन्न शारिवा। मद्रवल्ली। अनंता।
सुगंधा। गोपीमूलम्। शारिवा आदि। [वँ०] शुक्त सारिवा।
अनंतमूल। [मरा०] उपलसरी। [ते०] पलाश गंधी।
मामेन। गदि सुगंधि। पाल चुक्ति ढेरु। सुगंधि पाल।
तेला सुगंधि पाल। पाल सुगंधि। मुत्ता पुलगम। [ता०]
नान्नरी। नन्नारि। [क०] करिवंट। [सा०] साग दहेर।
सुगंध पालद गिदा। [गो०] दुदवालो। [गु०] धोली उपलसरी। [द०] सुगंधि पाला। नन्नारि। नाटका श्रीपवह।
[सु०] उपलसार। [लै०] Hemidesmus Indicus
Syn: Asclepias Pseudo-sarsa. [अं०] Indian
Sarsaprilla.

यह उत्तर हिंदुस्तान में बाँदा से श्रवध तक, सिकम श्रीर दिच्य में ट्रावनकार तक पाई जाती है।

यह लता पतली शाखाश्रांवाले वृत्तां की डालियां से खूब लिपटी हुई चढ़ती हैं। इसके पत्ते रामयुक्त, प्रायः श्रनार के पत्तों के समान परंतु उनसे लंबे, नुकीले कनेर के पत्तों के समान समवर्ती लगते हैं। लंबाई चैाड़ाई में इसके श्राकार श्रनेक प्रकार के हाते हैं। छाटे पत्ते १-१॥ इंच छंबे तथा उतने ही चौड़े होते हैं श्रार दूसरे ४ इंच तक छंबे श्रीर चौथाई इंच चौड़े होते हैं। इनके रेशे सफेद से दिखाई देते हैं। प्रायः नई शाखा के पत्तों के बीच का हिस्सा जड़ से फुनगी तक सफेद सा होता है। फूल बारीक, बँगनी रंग के, छंबे श्रीर फलियाँ तिकोनी हरे रंग की ४-४ इंच छंबी होती हैं। इनमें छोटे छोटे बीज होते हैं श्रीर रूई निक्तती है। इसकी जद से कपूर कचरी के समान गंध श्राती है श्रीर लता से सफेद रंग का दूध निक्तता है।

गुण-देष मीठी, स्निग्धता-कारक, स्वेदक, संशोधक, स्वास्थ्यदायक, बलकारी तथा छुधा-मांच, भीजन में अनिच्छा या अरुचि, ज्वर, चर्म्मरेगि, गर्मा और मदर रेगि में हितकारी है।

प्रयोग-१. इसकी जद श्रीर रस श्रीपव-प्रयोग में श्राता है। जड़ सारसा परिछा के समान गुणकारी, रक्तग्रोधक श्रीर वलवर्द्धक है। २. पथरी श्रीर पीड़ा सहित मूत्र होने पर इसका चूर्या गाय के दूध के साथ सेवन करना चाहिए। मूत्र-नाली की दाह थीर गर्मी पर इसकी जड़ केले के पर्चों में खपेट कर, भुभछ में पकाकर जीरे और चीनी के साथ पीसकर उसमें वी मिलाकर सेवन करने से फायदा होता है। ३. रुधिर शुद करने के जिए श्रीर पित्त की श्रधिकता में इसकी जड़ श्रीर सफेद जीरे का काड़ा देना चाहिए। ४. फोड़े, फुंसी, गंडमाला श्रीर उपदंश संबंधी रीगों में ७॥ से १० तीले तक का कावा दिन में तीन बार सेवन करने से छाभ होता है। १. बाछकों के मुख के सफेद छाजे पर इसकी जड़ की मधु में पीसकर लगाना चाहिए श्रथवा सुखी झाल के बारीक चूर्ण की मक्खन में तलकर दिन रात में १ से ४ मारो तक सेवन करने से लाभ होता है। ६. श्रांख की फुंसियों पर इसका दूध या रस लगाना गुणकारी है। केंकिय प्रांत में श्रमिष्यंद राग पर इसका दुधिया रस श्रांबों में टपकाया जाता है। पहले यह कुछ तीक्ष्ण-सा छगता है, परंतु फिर शीतलता उत्पन्न करता है। ७, वीर्य और मूत्र रोग पर जड़ की केले के पत्ते में जपेट कर पुटपाक करके जीरे श्रीर मिस्नी के साथ पीसकर घी में मिलाकर सेवन करने से छाम होता है। ८. सूजन पर जह की पीसकर लेप करने से फायदा होता है। शोध रोग में जड़ का उपयोग किया जाता है। इसका शर्वत बनाकर काम में जाते हैं। 4. पुरानी खाँसी में इसका और कंटकारी

का काढ़ा देना चाहिए। १०, बालक का रुधिर शुद्ध करने और निर्वेजता मिटाने के लिए दूध थोर शक्कर के साथ श्रींटा कर पिलाने से लाभ होता है। ११, श्रितसार में इसके काढ़े के साथ श्रतीस का चूर्ण सेवन करना चाहिए। १२, वमन पर चूर्ण के साथ होंग का सेवन करना जाभदायक है। १३, दाँतों के कीड़े पर पत्तों को पीसकर दाँतों के नीचे दबाने से फायदा होता है।

श्चनंतमूळी-[सं०] धमासा । दुराजभा ।

अनंतवात—[सं॰] श्रासेब। श्रावेश रोग। वायु की बीमारी।

जिसमें वात, पित्त श्रीर कफ तीने दोप कुपित होकर गरदन की नसों को श्रत्यंत पीड़ित कर नेत्र, भें ह श्रीर कनपटी में श्रत्यंत पीड़ा उत्पन्न करते हैं तथा गंडस्थज श्रीर पसलियों में कंप उत्पन्न करते हैं, ठोड़ी की जकड़ देते हैं श्रीर नेत्रों में रोग उत्पन्न करते हैं, उस त्रिदोपोद्धव शिरोरोग की श्रनंत वात कहते हैं।

श्रीषध-प्रयोग-कासालु नं० १।

स्रनंता-[सं०] १. अनंतमूळ । सारिवा । २. कलिहारी । श्रिप्तिखा । ३. दूव । दूव्वा । ४. धमासा । दुरालमा । हिंगुआ । ४. पीपल । पिष्पली । ६. हरीतकी । हरें । ७. श्रीवळा । श्रामलकी । द. गिलोय । गुडूची । गुरुच । ३. सरती । श्रिप्तिया । गिनियारी । १०. सत्यानाशी । स्वर्णे-चीरी । घमोय ।

स्रनंदर-[पं॰] ध्र सरल। सरलकाष्ठ। ध्र्य का वृष्ठ। स्रनंशुमत्फला-[सं॰] केला। कदली। स्रनंद-[परा॰] सिताव। सर्पदंष्ट्रा। स्रनककालिक-[सं॰] वृश्चिकाली। वृश्चिकपत्री। स्रनकिश्त-[फा॰] कोयला। स्रंगार। स्रनकुव-[मला॰] वन इलदी। वन हरिद्रा। जंगली हलदी। स्रनक्कोतन-[सं॰] मुलेठी। यष्टिमधु।

श्रनघ-[सं॰] } सरसों सफेद । गौर सप्प । सफेद सरसों । अनझ-[सं॰]

अनजलक-[फा॰] जंगली अमरूद के बीज।

श्रनडुजिह्वा-[सं॰]} गोभी। गोजिह्वा। गोजिया। श्रनडुजिह्वा-[सं॰]

श्रनघ-[सं०] सरसेां सफेद । गौर सर्पप ।

श्रननस-[मरा०] श्रनश्चास । श्रद्धास ।

अनन्नास-[हिं॰] श्रज्ञास। [हं॰] बहुनेत्र फल। पारवती। आम। कैंातुक सशंक। बहुनेत्रफळ श्रादि। [बँ॰] श्रना-नश। [मरा॰] श्रनसन। श्रनानस। [मा॰] श्रनज्ञास। [गु॰] श्रननस। [ते॰] श्रनास पंडु। [क॰] श्रनान सृहन्नु। [ब्रा॰] श्रनाश पश्रम। [तै॰] Ananas Sativa. [शं॰] Pine Apple. यह एक विदेशीय फल है, जो अमेरिका से यहाँ पर लाया गया है। अब हिंदुस्तान के दिल्ला और पूरव के प्रांतों में तथा अनेक प्रदेशों में उत्पन्न होने लगा है। इसके पत्ते केवड़े के पत्तों के समान एक वालिश्त लंबे होते हैं। दोनों छोर किंचित् लंबा कटहल के छोटे फल के आकार का और लंबाई लिए पीले रंग का फल होता है। फल के अपर शरीफे के छिलके के समान बड़ी बड़ी आंखें सी होती हैं। इसकी जड़ घीऊँ वार की जड़ के समान होती है। कच्चे फल का स्वाद खड़ा और पत्के का खड़ाएन लिए मीठा होता है।

सिंगापुर, पिनांग, मलाया और चीन में अनेक अकार के बढ़िया श्रनन्नास हुश्रा करते हैं। चीन देश का अनन्नास जैसे खुब मीठा होता है, वैसे ही उसका पैाधा भी देखने में संदर बगता है। पुरानी जड़, डंठल श्रीर फल के जपर जा शाखा रूपी पेड़ियाँ निकलती हैं, उन्हें छुटिकर रोपने ही से इसके पाधे तैयार होते हैं। थोड़ी छायावाले स्थान में प्राने गोवर की खाद श्रथवा उद्भिज खाद मिलाकर भली भाँति जाते हुए खेत में क्यारी बनाकर रोपना चाहिए। इसकी जड़ जमीन में दूर तक नहीं जाती; इसिखये पाली मिट्टी में बोने से उत्तम फल देता है। बैसाख से भादों तक पौधे रोपते हैं। बैसाख जेठ में जा शाखाएँ फूटकर निकलती हैं, उन्हें उठाकर क्यारी में रोपते हैं। फिर श्रापाढ़ के श्रंत श्रथवा सावन के श्रारंभ में जलीरे से उठाकर १॥-२ हाथ के फासले पर लगाते हैं। वर्षा काल में निकली हुई घासों की निकाल देते हैं। कार्ति क श्रगहन में कुदाली से मिट्टी पोली करते हैं। माघ में फल लगना आरंभ होता है। उस समय इसकी जड़ से सींचना चाहिए। फल के ऊपर जो शाखाएँ निकलती हैं, उन्हें छ्टि देना श्रच्छा होता है।

गुण-देश्य-कञ्चा फल-भारी, देर में पचनेवाला, रुचिकारी, एवं श्रन्न में रुचि लानेवाला, हृदय के। हितकारी, तथा कफ पित्तकारक, तृष्तिकारी, श्रम श्रीर ग्लानि का नाश करनेवाला है। पका फल-स्वादिष्ट, पित्त-विकार-नाशक, श्रम, मूर्ज्जी श्रीर दाह हरण करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-देाष—दूसरे दर्जे में टंढा श्रीर तर, किसी के मत से पहले दर्जे में टंढा श्रीर दूसरे में तर, मन की प्रसन्न करनेवाला, हृदय, यकृत, मिस्तिष्क श्रीर पक्वाशय की बलकारी, हृदय की व्याकुलता श्रीर पित्त की गरमी शांत करनेवाला, कृश श्रीर शीत प्रकृतिवाले की बलकारी तथा कंड के नल श्रीर श्वासिक श्रवयव की हानिकारक है।

दर्पनाशक —खाँड श्रीर सैंकि का मुख्बा। प्रतिनिधि—सेव।

प्रयोग-१. फल का बहुत अधिक प्रयोग करने से गर्भाश्य

का बहुत संकोच होता है। इसकी भूनकर खाने से इसका जहरीळा श्रसर मिट जाता है। फब के टुकड़े पर नमक श्रथवा चीनी मिलाकर खाना चाहिए। इसका मुख्वा पाष्टिक श्रीर बलवद्धंक होता है। २. दस्त लाने के लिये और कृमि रेग पर पत्तों के सफेद भाग की मिस्री के ताजे रस के साथ देना चाहिए। ३. कुसमय में वंद हुए मासिक धर्म के। खोलने के बिये पत्तों का रस पिलाना श्रथवा पका फळ लगातार खिलाना चाहिए। ४. हिचकी में पत्तों के रस में मिस्री मिलाकर पीने से फायदा होता है। ४. पित्त वृद्धि के लिये फल का रस पीना हितकारी है। ज्वर में उत्पन्न पेट का दाह मिटाने के लिये पके फल का रस पिलाना चाहिए। इससे पसीना श्राता है। ६. कामला रोग में पके फल का रस पीना श्रच्छा है। ७. पित्तोनमाद पर एक भाग रस में दे। भाग मिस्ती का शर्वत सिलाकर सेवन करने से लाभ होता है।

श्रनपके-[ते०] कद्। श्रलावु। लोकी। श्रनवुस्साळव-[अ०] मकाय । काकमाची ।

श्रनमंगु-[खा॰]) श्चनमुंगु-[खा॰] हे सोनापाठा । स्योनाक वृत्त ।

अनरसा-[हिं०] श्रँदरसा नाम की मिठाई। श्रनरसा। धुले हुए चावलों के आटे में घी का मायन देकर और उसे सानकर गुड़ के पानी में उबालकर छोटी छोटी लोई बनाकर पूरी के समान बेलते श्रीर एक श्रीर पेस्त के दाने लगाकर बी में पका लेते हैं। इसी की श्रँदरसा कहते हैं।

गुण-रुचिकारी, वृष्य, स्निग्ध और शीतल तथा अतिसार-नाशक है।

दूसरी किया-धुले हुए चावलों के तीन सेर आटे में एक सेर मिस्री मिलाकर दही में भली भांति मिलाकर एक दिन रख छे। इं। दूसरे दिन उपर्युक्त प्रकार से लोई बनाकर बेल-कर एक ग्रोर सफेद तिल लगाकर घी में तले।

गुगा-यह बलकारी, कफ वात-नाशक, हृदय की बलकारी, श्रतिशीतल श्रीर पुष्टिदायक है।

क तीसरी क्रिया—धुले हुए चावलों के श्राटे में समभाग मिस्री मिलाकर पानी में सानकर उक्त विधि से श्रँदरसे बनावे।

गुरा - वृष्य, हृदय-शोधक, धातुवर्द्धक, पित्तनाशक, भारी, रुचिकारी, तृशिदायक तथा पुष्टि, कांति श्रीर बल देनेवाला है। श्रनल-[सं०] १. चीता । चित्रक । चितरर । २. भिजावाँ । भछातक। भेता। ३. पित्त। श्रप्ति। -

श्रनलनामा-[सं०] चीता । चित्रक । चितउर । अनलप्रभा-[सं॰] मालकंगनी । महाज्योतिष्मती । मलकौनी । श्रनलविवर्द्धिनी-[सं॰] ॽ ककड़ी। कर्कटिका।

अनलविवर्धिनी-[संव]

श्रनिल-[सं०]} श्रनली-[सं०]} श्रमस्त । वक वृत्त । श्चनव-[थ०] श्चनवह-[थ०]} थंगूर । थपक्व दाचा । श्रनशोवडी-[ता०] गोभी नं०१। गोजिह्वा। गोजिया। श्रनसंद्र-[ते०] बब्रु काला। कृष्ण बब्रुल। काला बब्रु। त्रनसा सुइला-[त्राप्ता॰] सन । राख । सनई । श्रंनसीगिड-[क॰] तीसी। श्रतसी। त्रनाकांता-[सं॰] कंटकारी । कटेरी । छोटी कटाई । त्रनादि्**छ**-[श्र०] बुछबुल पत्ती । **इ**ज़ारदास्ती । श्रनानस-[मरा०] } श्रनन्नास । बहुनेत्रफछ । श्रनानसूहराणु-[कo] **र्र** श्रनायक-[सं॰]} श्रगर। श्रगुरु काष्ट। श्रनायज-[सं०]

श्रनार-[हिं०] दाड़िम । घातिम । घारि ब वृत्त । फूल्र-श्रनार का फूछ । गुजनार । जुजनार । फज-ग्रनार। दाड़िम । दारम। दासु। [सं०] दाड़िम। करक। दंतवीज। खोहित पुष्पक। इत्यादि । फल-दादिम । फूल-दादिम पुष्प । [वँ०] दालिम गाञ्च। दाङ्मि। डाबिम। फूछ-गुब श्रनार। उन्नुम। फब-श्रनार । श्रानार । दाबिम । दाछिंब । दारिम । दारमी। [उ०] दालिम। दार्छिब। [आसा०] दालिम। [द०] श्रनार का माड़। फूल-गुलेनार। फल-श्रनार। [यु॰ प्रा॰] मदल । मादल । फल-श्रनार । दाहिम । [५०] अनार। फल-दारु। दारुनी। दारिकन। दनु। देाश्यन। जामन । दारन । श्रनार । फूछ-गुछ श्रनार । दाड़िम पश्क । [पश्तो०] अनार । फल्ज-अनार । अनार । नरगोश । घरनंगोई । [द०] अनार। फल्ज्ञनार। धालिम। धारिंव दारह। छाल दारु जो कुछ। [मरा०] दार्लिंब साइ। फल-दार्लिंब। डालिंब। डालिंबे। [गु०] दादम नु साद्। फूब-गुबधनार। फल-दारम । दाहुर । दाहम । दाहिम । [ता॰] मडलै । मड्ळई। मड्लम। मुगिलन। फल-मडलैप पज्हम। मद्-लैचे होड्डि। [ते०] दानिम्म। दाद्धिम। दाळिंव। दानिम्मा। दानिम्म चेट्ट । फल-दाड़िम पंडु । दालिंब पंडु । दानिम्म पंडु । फूल-पेडरी । दानिस्मा । [खा॰] दालिंबे गिड । फूल-पेशी दुछिंबे। फल-दाछिंबे कयी। [क०] दाछिंब। [मा०] दाइम। [द्रा॰] माद्रल (फा॰] रुम्मान । श्रनार । [लै॰] Punica Granatum. [খ়া] Pomegranate.

यह प्रायः सभी प्रांतों की वाटिकाश्चों में लगाया जाता है। इसका वृत्त ममोले कद का, माइदार श्रीर घनी शाखाश्रीवाला होता है। यह पुरुष श्रीर स्त्री स्नाति के भेद से दे। प्रकार का होता है। जिस पर सघन दुखवाले अव्यंत जाज रंग के फूज बाते हैं कि तु फल नहीं छगते, वह पुरुष जाति का युद्ध है; बौर जिस पर फूल और फल दोनों बगते हैं, वह स्त्री जाति का वृच्च है। इसकी खाल पतली और जकड़ी इलके पीले रंग की होती है। पत्ते समवत्ती १ से १ इंच तक लंबे, आध से पैान इंच तक चौड़े, दोनों और पतले, अनीदार और किंचित पीलापन तथा बाली लिये हरे रंग के होते हैं। फूल बहुत बाल और सुद्दावने दिखाई पड़ते हैं। फल गोल और उनका छिलका मे।टा होता है। इनमें सफेदी लिए लाल अथवा गुलाबी रंग के अगियात ने।कदार, रसयुक्त दाने होते हैं।

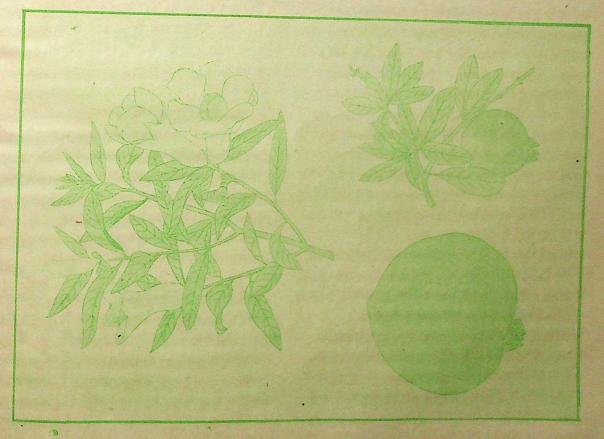
खहे, खटमीठे और मीठे इन स्वाद-भेदों से अनार तीन प्रकार के होते हैं। तीनों के वृच एक ही समान होते हैं। इसके पै।धे बीज और कलम से तैपार किये जाते हैं। साधारण वृचों की भीति इसका रेापण होता है। कावुल का अनार उत्तम होता है। सब ऋतुओं में फ़ूछ लगे रहते हैं, पर चैत-बैसाल में अधिक लगते हैं और असाढ़ से भादों तक फळ पकते हैं।

गुगा-देष-कसैला, खट्टा, मधुर, स्निग्ध, दीपन, गरम, हलका, श्रमि-प्रदीपक, मलरेधिक, हृदय की हितकारी, रुचि-कारक तथा कफ, खांसी, श्रम, मुखरोग, कंठरोग श्रीर पित्त का नाश करनेवाला है।

प्रयोग-१, प्रायः इसकी छाल श्रीर फल का छिलका श्रीपध-प्रयोग में त्राता है। सब प्रकार के श्रनार मजरोधक होते हैं। इसका फूल नकसीर में (नाक से रुधिर गिरने में) हित-कारी है। मीठे पके हुए अनार ज्वर के सिवा अन्य सब प्रकार के रोगों में गुयाकारी होते हैं। मस्तिष्क, हृदय श्रीर जिगर के बिये पै। ष्टिक है और शुद्ध रुधिर उत्पन्न करता है। अनार के दाने निकाल कर साफ पतलं कपड़े में उनका रस निचोड़ कर पिलाना चाहिए। यह रस शीतल श्रीर शांति-प्रद हे तथा श्रमिमांच की श्रीपधें में ढाला जाता है। इसका फल खाने में रुचिकर थीर शरीर की हितकारी है। इसके सेवन से बुद्धि की बुद्धि श्रीर तृपा शमन होती है। इसके रस का शरवत बनाया जाता है जिसका शरवत श्रनार कहते हैं। यह पित्त का शमन करनेवाला है। इसकी जकड़ी की छाल बाही एवं जड़ की छाल संकाचक तथा कृमि-नाशक है। २. बाउकों की खांसी पर फल के ख़िलके का चुर्ण श्रथवा फल के रस का सेवन हितकारी है। ३. बालक के श्रतिसार श्रीर संग्रह्णी पर फल के ब्रिलके का चुर्ण देना चाहिए। ४. क्रमिरे।ग में इसकी लकड़ी श्रीर जड़ की खाल का काड़ा पिला-कर कुछ रेचक श्रीपध खिलाने से कृमि का नाश होता है। फल के खिबाके के काढ़े में तिज का तेज मिलाकर तीन दिन पिलाने से छाभ होता है। ४. पित्त की उष्णता पर २ ते वो शरयत अनार में उतना ही जल मिलाकर पीने से फायदा होता है। ६. आंख की गर्मी पर अनारदाने का रस आंख

में टपकाना चाहिए। ७. संग्रहणी पर कच्चे श्रनार की पीस उसका रस निचाड़कर उसमें माजूफल, लैंग श्रीर सेंाठ का चुर्ग तथा मधु मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। श्रभाव में छाल का रस लेना चाहिए। द. गर्मी के कारण नाक से रुधिर गिरने पर श्रीर रक्तष्टीवी सन्निपात में इसके फूल श्रीर दब की जह का रस नाक में डालने और सिर पर मलने से लाभ होता है। 8. छाती के दर्द में अनारदाने के रस में एक माशा सनाय का चूर्ण मिलाकर सेवन करना हितकारी है। १०. दुखती हुई श्रांख पर पत्ते की पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ११. पित्त-विकार में पके श्रनार के रस में मिस्री मिलाकर पिलाना चाहिए। १२. रक्तातिसार में श्रनार की छाल श्रीर कुढ़ा की छाछ का काढ़ा गुग्कारी है। श्रतिसार में पेट की जलन पर शीतलता लाने के हेतु इसके फूलें। और फलें। का छिलका, मसाले यथा लेांग, इलायची, दालचीनी, धनियाँ, पीपल इसादि के साथ देते हैं। श्रामातिसार में श्रनार का बिलका, अफीम और लौंग का मिश्रण श्रच्क औषध है। १३. उपदंश के घाव पर इसका चूर्ण लगाना हितकारी है। १४. त्रिदोपज वमन में भूने हुए अनार का रस श्रीर मधु मसूर के श्राटे में मिछाकर संवन करने से छास होता है। कृमिरोग पर जड़ की छाल के काढ़े में लौंग का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से जाभ होता है। श्रयवा पांच तीले छाल की एक सेर पानी में श्रीटाना चाहिए। श्राध सेर शेप रहने पर मल श्रीर छानकर आध आध घंटे पर ३-४ तीले की मात्रा में सब काढ़ा पिताना चाहिए। इससे वमन होती है श्रीर कभी-कभी श्रांत में पीड़ा भी होती हैं; किंतु कीड़े श्रवश्य नष्ट हो जाते हैं; श्रीर फिर पीड़ा भी शीघ्र ही दूर हो जाती है। ११. शूल पर अनारदाने का रस गुणकारी है। १६. रक्तातिसार में अनार की पुटपाक की रीति से पकाकर रस निचाड़कर मधु मिलाकर सेवन करना लाभकारी है। १७, रक्त-स्नाव श्रीर घाव पर फूल श्रीर कली का प्रयोग करना तथा अनार खाना हितकारी है। १८, नक-सीर में पत्तों का रस नाक में टपकाना गुग्रकारी है। १६. गले में छ। जो होने या गाँठ के कारण गला फट जाने पर जड़ की छाल का लेप करना चाहिए। २०. गर्माशय में रोग होने पर उसे जढ़ की छाज के काढ़े से धोना हितकारी है। २१. र्खांसी में किलियों का चूर्ण र-र॥ रत्ती की मात्रा में संवन करना चाहिए। २२. सिर की पीड़ा में इसकी जड़ पानी में पीस-कर लेप करने से लाभ होता है। २३. नेत्र-पीड़ा पर पत्तों की पीसकर टिकिया बनाकर साते समय श्रांख पर बांधने से पीड़ा दूर होती है। २४. नाख्न टूटने की पीड़ा पर पत्तों का पीसकर लगाना चाहिए। २४. गभ में मरे हुए बालक की निकालने के लिये यानि के पास छिलके की धूनी देनी चाहिए। २६. मस् इं की पीड़ा पर श्रनार श्रीर गुलाब के फूलों के चर्म से





RR of

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

मंजन करने से लाभ होता है। २७. श्रर्श रोग में श्रनार का सेवन हितकारी है। २८. स्जन पर छिलके की छुहारे के साथ पीसकर लेप करने से लाभ होता है। २६. श्रांखों की खुजली मिटाने थोर उनकी ज्येति बढ़ाने के लिये खनार का रस निकाल कर वीतल में भरकर धूप में पकाना चाहिए श्रीर चाशनी तैयार होने पर श्रंजन करना चाहिए। ३०. वमन में इसके रस में सिसी मिलाकर सेवन करना चाहिए। ३१. श्राग से जलने पर पत्तों की पीसकर लगाने से लाभ होता है। ३२. श्ररुचि में इसके रस में जीरा थीर मिस्री मिलाकर श्रधवा मधु मिला-कर पिछाना चाहिए । ३३. उपदंश की टाँकी पर इसकी छाल का चूर्ण लगाने से लाभ होता है। ३४. कान की पीड़ा में खहे अनार के रस में मधु मिलाकर कान में डालने से फायदा होता है। ३४. सदिरा-पान की श्रधिकता से जिगर जल जाने पर श्रनार का पानी तीन तीन घंटे पर पिलाने से लाभ होता है। ३६. कामला पर ६-७ तोले भ्रनार का पानी श्रीर जरिश्क का सेवन गुणकारी है। ३७. छुदि में खटमीठे श्रनार का पानी लाभदायक है। ३८. विशूचिका में खट्टे श्रनार का पानी या शर्वत श्रीर रूव्व उत्तम श्रीपध है। ३६. रवेत प्रदर पर श्राध सेर जड़ की छाल कूटकर ३-४ सेर जल में भंद श्रक्षि पर पकावे। एक पाव शेष रहने पर उतारे श्रीर छानकर योनि की धोए श्रीर मलमल का दुकड़ा इसी पानी में भिगोकर योनि में रखे तो बहुत लाभ होता है।

श्रनार का छिलका-[हिं॰] छिलका श्रनार। [सं॰] दाड़िम फल त्वक्। [फा॰ यु॰ प्रा॰] पेस्त श्रनार। [पं॰] नस-पाल। नासपाल। नसपल। चाल श्रनार। छाल श्रनार। [द॰] दारु जोकुल। श्र॰] कशरुल् रुम्मान।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष — मलरोधक तथा रक्तातिसार श्रीर कृमिनाशक एवं खांसी में गुणकारी है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — स्वाद में कसैला, पहले दर्जे में मीठे का छिलका ठंडा, तर थीर खट्टे का टंडा थीर रूच है। उष्ण शोध में लाभकारी, मसूढ़े के लिये बलकारी थीर श्रतिसार, अर्थ तथा गुदभंश में लाभकारी है।

मात्रा-६ माशे से २ तोले तक।

प्रयोग—१. श्रितसार, श्रामातिसार श्रीर मरे। हे में फल का ख़िलका, लकड़ी की छाल श्रीर लैंग का काढ़ा देना चाहिए। चावल, जा श्रीर छिलके के हिम की वस्ति देने से लाम होता है। १ तोले छिलके की सवा सेर दूध में श्रींटाकर ११ छटाँक शेष रहने पर उतार श्रीर छानकर दिन में तीन बार पिजाने से फायदा होता है। २. संप्रहणी पर इसके काढ़े में सेंट श्रीर चंदन का बुरादा मिलाकर पिलाना चाहिए। ३. कृमिरोग पर खहे श्रनार का छिलका श्रीर शहतूत श्रींटा श्रीर झानकर

पिलाना चाहिए। छाल के काढ़े में तिलों का तेल मिलाकर पिलाना लाभदायक है।

त्रनार के बीज-[हिं०] श्रनारदाना । [सं०] दाहिम-बीज [द०] दाहबीज । [बं०] हबुल किखकिल । [फा०] तुल्म श्रनार । [अ०] हब्बुल हम्मान ।

यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में टंढा श्रीर रूच, वर्डक, वञ्चक (काबिज़) पाचक, च्रधाप्रद, पक्वाशय की बलकारी तथा पैत्तिक वमन, श्रतिसार श्रीर देनिं। प्रकार की खुजली में लाभकारी श्रीर टंढी प्रकृतिवाले की हानिकारक है।

द्र्पनाशक-जीरा।

प्रतिनिधि—समाक।

मात्रा—६ से ६ मारो तक।

श्रनार खटतुरुश-[हि॰]) खटतुर्शं श्रनार । [फा॰] श्रनार श्रनार खटतुर्स-[हि॰] रम्ज । [श्र॰] रम्मान मैखुश ।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देाष-श्रान-प्रदीपक, रुचिदायक, छघु श्रार कुछ कुछ पित्त की बढ़ानेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-देाष — पहले दर्जे में टंढा और तर है। यह गुणों में मीठे श्रनार के समान होता है, परंतु प्रभाव में उससे बळवान है। पक्वाशय की बलकारी तथा हिकानाशक है। पैत्तिक वमन, श्रतिसार, खाज श्रीर पांडु रोग पर छिळके सहित रस निचोड़कर खाँड़ मिलाकर सेवन करना चाहिए। यह टंढी प्रकृतिवाले की हानिकारक है।

दर्पनाशक-सोंठ का मुख्या।

प्रतिनिधि - कचा श्रंगृर।

अनार खट्टा-[हि॰] अनार तुर्श-[हि॰] अनार तुर्श-[हि॰] अनार तुर्स-[हि॰]

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुगा-देाप-वात-कफ नाशक तथा पित्तवर्द्धक है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष—टंडा श्रीर तर, वच्छा की दाह तथा पक्वाशय श्रीर यकृत की उच्छाता के श्रमन करने-वाला, रुधिर-प्रकेष, पित्तज वमन श्रीर श्रतिसार, पांडु श्रीर खुजजी में लाभकारी एवं मद श्रीर हृदय की व्याकुवता में गुण-कारी है। शीत प्रकृतिवाले के श्रीर यकृत तथा श्रीज की कर्षक-शक्ति के हाविकारक है।

द्र्पनाशक—मीठा श्रनार।

प्रतिनिधि-मीठा श्रनार ।

श्रनारदाना-[हिं०] श्रनार के बीज। श्रनारदाना दस्ती-[श्र०] कुलकुल। कार चिकना। श्रनार मीठा-[हिं०] मीठा श्रनार। [सं०] स्वादु दाहिम। [का०] श्रनार शीरीं। [श्र०] रुम्मान हत्त्व। श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष—त्रिदोषनाशक, तृप्ति-कारक, वीर्व्यवर्द्धक, हलका, कुछ कुछ कसैला, धारक, स्निग्ध, स्मरणशक्ति-वृद्धक, मेधाजनक, बलकारक तथा प्यास, दाह, ज्वर, हृदय रोग, कंठ श्रीर मुख रोग का नाश करनेवाला है।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — दूसरे दर्जे में टंढा श्रीर रूच (पर कुछ लोग मातदिल भी कहते हैं), रुधिर उत्पन्न-कारक, श्राध्मान श्रीर श्रफरा करनेवाला, स्वच्छताप्रद, उदर के। मृदु करनेवाला, मूत्रप्रवर्तक, तृपानाशक, श्रोजकारक, संपूर्ण उत्तमांग की बलकारी तथा श्रामाशय श्रीर ज्वर के रोगी के। हानिकारक है।

द्र्पनाशक—खटा श्रनार; श्रीर टंडे मिजाजवाले के लिये सोंठ का मुरव्वा।

प्रतिनिधि—खद्दा अनार। श्रनार रम्ज्ञ—[का०] श्रनार खटतुरुश। श्रनारशीरों—[का०] श्रनार मीठा। स्वादु दाड़िम। श्रनारस-[डि०] श्रनद्वास। बहुनेत्र कछ।

श्रन(र्यक-[सं॰] १. श्रगर । श्रगुरु । २. काष्टागर । काष्टागुरु ।

श्चनार्य्यं ज-[सं॰] श्चगर । श्रगुरु । श्चनार्य्यतिक्त-[सं॰] विरायता । भूनि ब । किरात । श्चनार्य्यतिक्का-[सं॰] विरायता ।

श्रनाचर्त जल-[सं०] कु-ऋतु का जल (पाष महीने से चैत तक की वर्षां का पानी)।

गुण-वात, पित्त और कफ का नाश करनेवाला है।

श्रनाशप्पराम-[द्रा॰] श्रनासपंडु-[ते॰] अनन्नास। बहुनेत्र फल।

श्रनाह-[हिं०] श्रानाह राग।

अनिजु-[सं०] उल्प। उल्क तृरा। खगदा। (चटाई की घास।)

श्रनिगंदुमिन-[ता॰] रक्तचंदन नं॰ २ । कुचंदन । कंभोजी । श्रनिद्रा-[सं॰] निद्रानाश । श्रस्तम ।

श्रनिर्मल्या-[सं०] } स्प्रका। श्रसवरग। पि'डी शाक। श्रनिर्माल्या-[सं०] रेपुरी।

अनिर्वाश-[सं०] कफ । रलेब्मा ।

श्रनिछ-[सं॰] १. सागीन । शाल वृत्त । सागवान । २. वायु । हवा । पवन ।

श्रनिलग्न-[सं०] } बहेड़ा। विभीतक वृत्ता

अनिछनिर्यास-[सं॰] चिरैांजी । पयाल वृत्त ।

अनिलभुक्-[सं०] साँप। सर्प।

अनिछरिपु-[सं०] एरंड । श्रंडी । रेंड ।

श्रनिलहर-[सं०] काली श्रगर । कृष्णागुरु । स्वादु श्रगर । श्रगरसार ।

श्रनिलांतक—[सं॰] हिंगोट। इंगुदी। श्रनिला—[सं॰] श्रपराजिता। विष्णुकांता। केायल जता। श्रनिलाटिका—[सं॰] पुनर्नवारक। रक्त पुनर्नवा। साँठ।

गदपूरना ।

श्रनिलापहा-[सं॰] कुलथी । रक्तकुलस्थ । कुर्थी । श्रनिलामय-[सं॰] वातरोग । वायु रेगा । श्रनिलाम्बत-[सं॰] उदद । नीलमाप ।

श्रनिष्ठा-[सं॰] } गॅगेरन । नागवला । गुलसकरी ।

श्रानिःसारा-[सं०] केला। कदली।

श्रनिस्न-[४०] हिंदी जंदनी । वादियान रूमी ।

अनीरा-[अ॰] एक प्रकार की यूनानी द्वा जिसकी फारसी

में संदज कहते हैं। यह एक वृत्त का फल है जो उन्नाव के

बराबर होता है। इसका वृत्त दो प्रकार का होता है, एक नर

और दूसरा मादा। नर में फल नहीं होता। सादा की

दो जातियाँ हैं, एक का फल उन्नाव के समान, सफेद रंग का

श्रीर मीठा होता है और दूसरे का उन्नाव से बड़ा, जाल रंग

का और मींगी से श्रलग होता है।

श्रनीली-[सं०] काँस। काशतृर्य। श्रनीस रुलिमरा-[खा०] हेरा। श्रंकोट वृत्त । श्रंकोल।

त्रनीस्त-[अ॰] हिंदी जंदनी । बादियान रूसी ।

श्रनीसे-[ते०] श्रगस्त । वक वृत्त ।

अनुइटंड वेटिचल-[ता०] श्रमलपर्गी । हरवल ।

त्रनुक्**ठका**-[सं०]

अनुकुला-[सं॰] व्यास्त्रिक्ती [सं॰]

त्रनुकृतिनी-[सं०]

त्रानुग-[सं०] सेवक । परिचारक ।

त्रानुज-[सं०] पुंडेरी । प्रपैं। डिरक ।

श्रनुजा-[सं०] हायमान । त्रायमाणा ।

त्रानुपान-[सं०] वह वस्तु जिसके साथ श्रीपध सेवन की जाती है।

त्र**नुपालु-**[सं॰] पानीत्रालु । पानीयालु । खोखड़ी ।

श्रनुपुष्प-[सं॰] भद्रमुंज । सरपत ।

त्र्रजुवंथी-[सं०] १. हिका रेगा। हिचकी। २. तृब्णा रेगा।

त्रनुभास-[सं∘] कीश्रा। काक पची।

त्रमुति-[सं॰] निसोध । त्रिवृत्त ।

श्रनुमुलु-[ते॰] बेारो । श्रंगुलीफला ।

अनुरुहा-[सं॰] नागरमोधा । नागरमुखा । नगरवथा ।

श्रज्ञरेवती-[सं०] दंती । बघुदंती ।

श्रनुलास—[स॰] श्रनुलास्य—[सं॰] श्रनुलोमन-[सं०] वह थौषध जो अपक मल की पकावे श्रीर वॅथे हुए मल की फोड़कर गुदा द्वारा नीचे की गिरावे श्रथवा मल-सूत्र की रुकावट की नष्ट करके श्रधीमार्ग से केटि को शुद्ध कर दे। जैसे-हरीतकी। श्रन्यास-[सं०] स्नेह वस्तु । श्रनुवासन वस्तु । श्चनुष्ठासन-[सं०] विस्तिकिया। गुदा के ग्रंदर पिचकारी द्वारा ग्रीषध पहुँचाना। श्रनुवासन घस्तु-[सं०] त्रानुशयी-[सं०] चुद्रशेग । फुंसी रेगा । पाद रेगा । **ग्रानुब्स** -[सं०] उत्पत्त । निशाफूछ । श्रन् ब्राचित्तिका-[सं०] १. उत्पछ । निशाफुल । २. दूव नीली । नीली दूव। श्रनुष्ण्वल्ली-[सं०] दूब नीली। नीली दूबी। हरी दूव। त्रानुब्ल्वीज-[सं॰] ईशवगोल । इशद्रोल । यशवगोल । त्रानुसार्यक-[सं०] छरीला। शैलेय। पत्थर का फूल। त्रानूप-[सं०] १. श्रनूप देश । सजल देश । २. भेंस । महिप । अन्पज-[सं॰] श्रद्रक । श्रार्द्रक । श्राद्री । स्रन्प देश-[सं॰] श्रन्प । सजज देश । वह देश जहाँ बहुत जल श्रीर श्रधिक वृत्त हों श्रीर जहाँ के प्राणियों की वात कफ के राग अधिक होते हों। जैसे-काश्मीर, तिवृत, काबुल इत्यादि। श्रनूपर्मांस-[सं॰] । श्रनूप देश के जीवों का मांस । जैसे-श्रनूपमांस वर्ग-[सं∘] रिकलेचर, घ्रव, कोशस्थ, पादिन, मत्स्य, महिष श्रादि पशु, हंसादि पत्ती, शंखादि, मगर, घड़ियाल, मञ्जली श्रादि जल-जीवों का मांस। श्रनृष्ण-[सं०] उत्पल । कमलभेद । श्रनृजु-[सं॰] १. कचूर। शठी। २. तगर (फूछ)। तगर-पुष्प । ३. तगर । कालानुसार्य । त्रनेकप-[सं०] हाथी । हस्तो । श्रनेजजंकु-[तु॰] कसोंजा । कसेंादी । काशमई । श्रनेसू-[सं॰] सैांफ। मिश्रेया। श्रनैककटरजहै-[ता॰] रामवीस । वीस केवड़ा । रामवान । श्रनैत तिप्पिली–[मला∘] गजपीपल । गजपिप्पळी । श्रनोकह-[सं०] वृच। पेड़। श्रनाना-[सिंह०] कंघी। ककही। श्रतिवला। श्रने।र-[पश्तो०] श्रनार । दादिम । श्रन्न-[सं०] १. सात । भक्त । २. धान । धान्य । श्रन्नगंधि-[सं॰] श्रतिसार राग । दस्त की बीमारी । अन्नद्रव शूल-[सं॰]) परिणामशूल रोग। श्रनद्रवाख्य-[सं॰]

श्रन्नभेदि-[द्रा॰] कसीस । कासीस । त्रन्नमल-[सं०] १. विष्ठा । मैला । २. मदिरा । मद्य । दारू । शराव। श्रन्नाश्य-[सं०] उदर । पेट । श्रन्नास-[हिं०] श्रनन्नास । बहु-नेत्रफता। श्रन्नेगलुगिड-[खा॰]गोखरू भेद । खसके कवीर । फरीदबूटी । अन्यताबात-[सं०] नेत्रराग भेद । जब घाँटी, कान, सिर, ठेाड़ी श्रीर गरदन की नसों में श्रयवा श्रन्य स्थानें। में स्थित वात भीहें। श्रथवा नेत्रों में पीड़ा उत्पन्न करता है, तब वह राग श्रन्यतीवात कहा जाता है। अन्यपुष्ट-[सं॰] केापल । केाकिल पनी I त्र्रन्यभृत-[सं∘] १. कै। था। काक पद्मी। २. के।यता। कोकिल पची। श्रन्यले ह-[सं॰] कीसा। कीस्यधातु। त्र्या-[सं∘] हरीतकी । **ह**रड । हरे[°] । श्चन्येघुष-[सं०] } एकतरा ज्वर । विषम ज्वर रोग भेद । श्रन्येघुष्क-[सं०] त्र्यन्वत-[सं॰] १. मानिक । माणिक्य । चुन्नो । **जा**ळ । २. [अ०] ग्रंगूर । अपक्व द्राचा । त्र्रापंग-[कोल॰, सन्ता॰] श्रकेपुष्पी नं॰ २। बनवेरी । श्रमखेल । त्रपंगक-[सं॰] श्रोंगा। श्रपामार्ग । चिव**दा**। श्रप-[सं०] जला । पानी। श्रपक्वद्राज्ञा-[सं॰] श्रंगूर । श्रपच-[हिं॰] } श्रजीर्ण रोग । वदहजमी । श्रपचर-[सं॰] **ग्रपची**-[सं॰] गंडमाला भेद । यदि गंडमाला की गाँठ न पके या पकने पर उसमें से मनाद बहे, कोई कोई दब जाय थीर दूसरी नवीन उत्पन्न हो जाय तथा ऐसी पीड़ा श्रधिक दिनें। तक रहे ते। उसके। श्रपची रोग कहते हैं। यह रोग साध्य है; किंतु यदि इसमें पीनस, पारमें शूल, खाँसी, ज्वर श्रीर छदि श्रादि उपदव हों तो श्रसाध्य सममना चाहिए। इस रोग की नाशक श्रीषियाँ तथा उनकी प्रयोग-संख्या — श्रसगंध नं० ७। कलिहारी नं० ४। बनकपास नं० १। मधु नं० ६। मुसब्बर नं० २०। खजालू नं० १०। सरसेां नं० ७। सहिं जन नं० ४१। ग्रपतंत्र-[सं॰] एक प्रकार की वात-व्याधि। अ**प**तंत्रक-[सं॰] श्रपतान-[सं॰] वातराग भेद । श्र**पतानक-**[सं०] त्रपत्यजीव-[सं०] पितोंजिया । पुत्रजीव वृत्त । जियापाता । त्रपत्यदा-[सं॰] १. बङ्मण। बङ्मना बूटी। २. पुत्रदा बता।

용드

श्रपत्यशत्रु-[सं०] केकड़ा। कर्कट। श्रपत्य सिद्धिकृत-[सं॰] पितौंजिया । पुत्रजीव वृच । जियापेता ।

श्रपत्र-[सं०] करील । करीर । **अपत्रवह्मिका-**[सं॰] पाताल गारुड़ी । महिषवल्ली । छिरेटा । श्रपदरुहा-[सं॰] श्रवद्रोहिणी-[सं॰]} बीदा। वंदा। वंदाक।

श्चपबाइक-[सं॰] वातराग भेद।

जिस राग में स्कंध-स्थित वायु स्कंध देश की शिराम्त्रों का संकुचित कर दे, उसकी अपवाहक रेगा कहते हैं।

इस राग की नाशक श्रीषधियाँ श्रीर उनकी प्रयोग संख्या-उड्द नं० १। कैं छ नं० २०।

श्रवमारगम्-[ते०] श्रोंगा। श्रवामागं। चिचदा। लटजीरा। श्रवरस-[हिं०] चुद्रराग भेद।

इस रोग की नाशक श्रीषधियाँ श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या-गधा नं० २। चना नं० १७।

अपराजिता-१. विष्णुकांता। कायल लता। २. जयंती। जैती। निगुँ ही। शेका जिका। सिंधुत्रार। ३. शयापुर्वे। सनहुती। ४. शमी । बिकुर । ४. शंखिनी । यवेची । ६. हाऊ बैर । हपुषा भेद । ७. सरिवन । शालपर्णी ।

[सं०] भ्रपराजिता। श्रास्फोता। गिरिकर्णो। विष्णुक्रांता । भूमि-ल्यना । गवाची । श्रादि । [हिं ०] कायता । काली जेर । विष्णु क्रांती । कावाठेठी । कैश्या ठाँठी । [वँ०] श्रपराजिता । [मु०] काजली। गोकरया। [ता॰] कक्कनम। के। ही। [पं०] धनत्तर । धनंतर । [गु॰] गरनी । गरानी । [ते॰] गंदुना । दिनतान । तेला । मेला । तेल दिनतान । निज दिनतान । [खा॰] विष्युकांती सोप्पु । किरगुन्न । गोकर्या मूछ। [मरा०] गोकर्णी। [क०] गिरिकर्णिके। [ले०] Clitoria Ternetea [अं ॰] Megerin.

बता जाति की यह घनै।पिध नी ले छीर सफेद फूलों के भेद से दो प्रकार की होती है। परंतु दोनों के छतापत्र एक समान होते हैं।

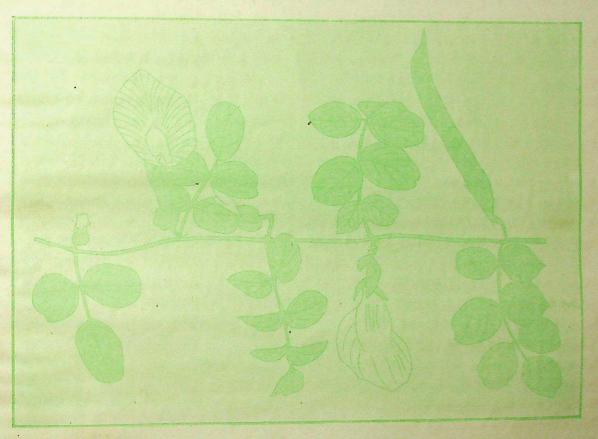
श्रपराजिता नीली-[हिं०] नीली श्रपराजिता। केायल। [सं०] नीलपुष्पी। महानीला। गिरिकर्णिका। विष्णुकांता इत्यादि । [बँ०] नीज श्रपराजिता । [मरा०] गोकर्णी काली । [गु॰] गरणी। [पं॰] कोयला। [ते॰] छिंटैन वित्त। नीछ गंदुना। [मा०] कोयली। [क०] कटने विछ। नील-गिरि कर्णिके। [द्रा०] करप्पुका कट्टान विरे । [भ०] माज-रियुन। [फा॰] श्रशसीस।

अपराजिता नीखी, फूबों के भेद से देा प्रकार की होती है। एक के फूछ इकहरे थीर दूसरी के दोहरे होते हैं। पत्ते वन-मूँग के पत्तों के समान पर रनसे कुछ बड़े और एक एक सींके पर पाँच प्रथवा सात रहते हैं। फूछ सीप के समान श्रागे को गोलाकार, फैले हुए थीर डंठी की श्रोर सिकुड़े हुए नीले होते हैं। फूलें। के बीच में डंठी की ग्रीर खी-यानि पुष्पाकार फूल होते हैं: इस कारण कहीं कहीं इसकी "अगपुष्पी" श्रथवा ''योनिपुष्पी'' भी कहते हैं। इस पर मटर की फिलयों के समान चिपटी फिलयाँ लगती हैं जिनमें से उड़द के समान काले बीज निकलते हैं। इसकी लता प्रायः सभी प्रांतें। में (फूलों और फलों सहित) वाटिकाओं की सुशोक्षित करती है। बरसात में इसकी बेल हरे भरे पत्र-पुष्पादि से युक्त दिखाई पड़ती है।

गुग्-देष-कड्वी, स्निग्ध, शीतवीर्थ्य तथा वात, पित्त, कफ, ज्वर, दाह, अम, भूतबाधा, रक्तातिसार, उन्माद, सद, र्वांसी, श्वास, कफ, कोढ़ श्रीर चय रीग का नाश करनेवाली है। इसके शेष गुण अपराजिता सफेद के समान हैं।

इसका श्रर्क-कर्णशूल, स्जन, घाव श्रीर विपनाशक है। प्रयोग-१. इसकी जड़, पत्ते, रस और बीज औषधि के प्रयोग में भाते हैं। जड़ रेचक भ्रीर वमनकारक है; बीज टंढे ग्रीर विपन्न होते हैं श्रीर सत्व पेट में काट तथा दस्त की शंका उत्पन्न करनेवाला है। २. प्लीहा श्रीर जलंघर पर किसी दूसरी रेचक श्रीर मूत्रजनक श्रीषिध के साथ देना चाहिए। ३. २॥ से ४ रत्ती तक इसके सत्व का सेवन करने से दस्त होते हैं। ४. मूत्रकुच्छ श्रीर मृत्राशय के दाह में इसकी जड़ का प्रयोग किया जाता है। ४. श्राधा शीशी में बीजों का रस नाक में टपकाने से लाभ होता है। बीज थ्रीर जड़ की नस्य लाभकारी है। जड़ को कान में बाँधने से भी फायदा होता है। ६. फफोले पर पत्तों का काढ़ा हितकारी है। ७. संधिवात पर जड़ का प्रयोग किया जाता है। प्र. फोड़े-फुंसियों श्रीर पसीनेवाले ज्वर में पत्तों के रस में श्रद्रक का रस मिलाकर देना चाहिए। १. फेफड़े के रोग में ताजी जड़ या छाल के प्रयोग से लाभ होता है। इसका काढ़ा देना चाहिए। १०. कान की पीड़ा श्रीर श्रास पास की गाँठें मिटाने के लिये पत्तों के रस में नमक मिलाकर कान के चारों श्रीर लेप करने से लाभ होता है। ११. बीजों की श्रधिक मात्रा से कृमि रेाग का नाश होता है। १२. गठिया में इसकी जह का काढ़ा देना चाहिए; इससे दस्त श्राते हैं। १३. सर्प-विष पर इसकी जड़ का प्रयोग किया जाता है। १४. परिणामशूल में जड़ के करक में मधु, घी श्रीर मिस्री मिलाकर सेवन करने से लाम होता है। ११. हिचकी में बीजों का चूर्ण चिल्रम में भरकर वसका धूम्र-पान करने से लाभ होता है। १६. श्रंडवृद्धि पर बीजों को महीन पीसकर गरम करके लोप करना चाहिए।

श्रपराजिता सफेद-[हिं∘] सफेद श्रपराजिता। सफेद कीयछ। [सं०] श्वेतापराजिता। [मरा०] गोकर्या सफेद्र। [पं०]



अपराधिता समेह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar सफेद कीयल । [क॰] विलिय गिरि कर्णिके। [मरा॰] पांढरी सुपली । [बँ॰] श्वेत श्रपराजिता।

श्रपराजिता सफेद की लता श्रीर पत्ते श्रपराजिता नीछी के समान होते हैं। फिलियां भी प्रायः वैसी ही होती हैं। बीज भूरे श्रीर घटवेदार तथा स्वाद में कड़वे होते हैं। इसका फूल सफेद होता है। पुरानी लता में फूछ कि चित् नीलापन लिए सफेद श्राते हैं।

गिरे हुए बीजों पर वरसात का पानी पड़ने से वे श्रंकुरित होकर बता रूप में बढ़ते हैं। इसके रेापण श्रोर रचा के बिये विशेष यहा की श्रावश्यकता नहीं है, केवब बता के फैलने के बिये टही बना देना उचित है।

गुण-देशक—शीतल, कड़वी, बुद्धि-वर्द्धक, नेत्रों की हित-कारी, कसेली, दस्तावर, विषनाशक तथा त्रिदेश, शिरशूल, दाह, कोड़, शूल, आम, पित्तरेश, स्जन, कृमि, घाव, कफ अहपीड़ा और साँप के विष का हरण करनेवाली है।

अयोग — १. इसकी जह, पत्ते और रस का प्रयोग होता है। जड़ संस्नन, संशोधक तथा ज्वरादि में लाभकारी है। केंकिए में गले के रेग पर दी तोले जड़ का रस शीतल दूध में मिलाकर देते हैं। इससे वमन होता है। पीनस इत्यादि नासिका-रोगों में इसका रस नाक में फूँका जाता है।

जड़ की छाल का हिम या फाँट स्निग्धकारक, संस्नन, संशोधक तथा वस्ति श्रीर मूत्रनाळी के दाह में लाभकारी है।

बीज सृदु रेचक होते हैं।

पत्तों का रस फेाड़े सी पर लगाया जाता है। ज्वर में श्रधिक प्रतीना श्राने पर पत्तों के रस में श्रदरक का रस मिला-कर दिया जाता है। कर्ण पीड़ा में, विशेषकर जब कर्णमुळ हो तव, इसके पत्ते के रस में नमक मिलाकर गरम करके कान के चारों थ्रीर लेप करने से लाभ होता है। गिरता हुआ गर्भ रोकने के लिये इसकी बकरी के दूध में पीस-छानकर श्रीर मधु में मिलाकर पान करने से लाभ होता है। २. स्नायु-पीड़ा पर जड़ की तेल या छाछ में पीसकर लेप करना चाहिए। ३. फोड़े पर इसकी काँजी में पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ४. गलगंड रोग में जड़ की पीसकर घी के साथ सेवन करना हितकारी है। १. कामळा या कमल रोग पर जड़ का चूर्ण मठे के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ६. विषम-ज्वर (एकतरा) में पत्तों के रस का नस्य देना हितकारी है। ७. तिजारी में बाल सूत के ७ धागों से कमर में बांधने से लाम होता है। ८. मुख की माई पर जड़ की भस्म के मक्खन में मिलाकर लेप करना चाहिए।

श्रपरिम्वान-[सं॰] कटसरैया लाल । कुरवक । लाल फूल की पियावासा ।

श्रपर्वदंड-[सं०] भद्रमुंज। सरपत।

त्रपविषा-[सं०] निविषी। निविष्प तृषा। त्रपशोक-[सं०] त्रशोक वृष्ण। त्रपस्तंभिनी-[सं०] शिविलंगी। बिंगिनी बता। पँचगुरिया। त्रपस्मार-[सं०] सृगी। मिरगी। [त्र०] सरशा। [शं०] Epilepsy.

जिस रोग में दुष्ट देापों के द्वारा ज्ञान श्रीर स्मरण शक्ति का नाश हो जाता है, उसके। श्रपस्मार कहते हैं। चिंता, शोकादि से कुपित वात, पित्त, कफ, हृद्य की नसों में पहुँच कर स्मरण शक्ति का नाश कर देते हैं। हृद्य कांपता, शरीर शूच्य हो जाता, पसीना निकलता, ध्यान लग जाता, मूर्च्छा श्राती, निद्रा का श्रभाव श्रीर ज्ञान का नाश हो जाता है, चारों श्रोर शंघकार सा जान पड़ता है, हाथ, पैर तथा सब श्रंग कांपने लगते हैं श्रीर रोगी मृष्टि त होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है श्रीर उसके मुख से माग श्राता है।

यह भयंकर रोग वातज, पित्तज, कफज ग्रीर सान्निपातिक इन भेदों से चार प्रकार का होता है।

इस रोग की नाशक श्रीषधियाँ श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या- श्रकरकरा नं० ४, ४, ३४। श्राक लाल नं० ७, ८। इनारू नं० २१। कंटकारी नं० १३, २२, २६। कछुत्रा नं० २, ४। कळपनाथ । कस्तूरी नं० १। कांद्र नं० १। कायफल नं० २३। केवड़ा नं० १। गावजबां नं० ३। घीकुवार नं० ३७। जमालगोटा नं० ३। जल-नीम नं० १२। जायफल नं० २२। सिंगनी नं० १४। ढाक नं० १२। ढाक के बीज नं० ४। तेल नं ० । धतुरा काला नं २३। धतुरा सफेद नं ३ १०। नकछिकनी नं० ६। नगदी सफेद नं० १। नागरमोथा नं ० १। नील नं ० २। प्याज नं ० ५३। प्याज के बीज नं ० १। पीपल (वृत्त) नं० ३। पीपल (स्रोपिध) नं० ७, १६। पेक नं० ६। पेठा नं० १४, २३। बच नं० ३, ३३। बनफशा नं० १। ब्रह्मी नं० १०, ११। बाँम खेखसा नं० ६। सहुष्या नं० १४। मुंडी नं १०। मुलेठी नं १८। मूँगफली नं १। मूंत नं० २। मूसाकानी नं० ११। मोमियाई नं० ३। रतनजात नं० २ । रींगा नं० ३० । राई नं० १० । रीठा नं० १६, १८, १६, २३। रीठा करंज नं० ४। शंख नं० ७। शिलाजीत नं० ४३। संखाहुजी नं॰ १२। सतावर नं॰ १४। ससुद्रफल नं॰ ४०, ६१, ६२। शरीफा नं० १। सहदेई नं० ११। सहि जन नं १४। इरताल नं १०, १४। हाथी शुंडी नं ६।

हींग नं॰ ७ । श्रपांग-[र्वें॰] [श्राह्मा॰] श्रोंगा । श्रपामार्ग । विवद्दा । [सं॰] नेत्रांत । श्रांख का कोना ।

त्रपांगक-[सं॰] श्रोंगा। श्रपामार्गं। विवद्रा।

श्रपांपित्त-[सं०] चीता। चित्रक। श्रपाक-[सं०] १. श्रजीर्थ। श्रद्धकान पचना। श्रपच। २.

patana.

थपक। विनापका हुआ। श्रपाक शाक-[सं॰] श्रदरक । श्राद्रक । श्रादी । श्रपान-[सं०] १. मलद्वार । गुदा । २. गुद्ध वायु । मलद्वार की हवा। पाद। श्रपामां-[ने॰]} श्रांगा । चिचड़ा । लटजीरा । श्रपामार्ग-[सं॰] श्रपामार्ग जटा-[सं॰] श्रोंगे की जड़। चिचड़े की जड़। श्रपामार्ग तंडुल-[सं॰] श्रपामार्ग बीज-[सं॰]} श्रांगे के बीज। चिचड़े के बीज। श्रपावे-[ते०] केसर । कुंकुम । जाफरान । श्रपीनस-[सं०] पीनस रोग । श्रपुच्छा-[सं॰] शीशम । शिंशपा वृत्त । अपुठ कंडा-[पं॰] } श्रोंगा। श्रपामार्ग। चिचड़ा। श्रपुर्ज-[बेलु॰] हाऊबैर । हपुषा । श्चपुष्प-[सं०] गूलर । बहुंबर । **अपुष्पफळद्-**[सं०] १. कटहल । पनस । २. परवल कड्वा । कटु पटाल । अपू-[भरा ॰] अफीम । अहिफोन । श्चपूप-[सं०] पूत्रा। पिष्टक। अपूप्य-[सं०] गेहूँ । गोधूम चूर्ण । श्राटा । मैदा । अपूर्णी-[एं॰] १. कपास । कार्पास वृत्त । २. सेमल । शालमली वृद्ध। श्रपेक-[सं॰] धमासा । दुरालमा । हिंगुत्रा । श्रपेत-[सं०] तुबसी। सुरसा। श्रपेत राज्ञसी-[सं०] तुबसी। सुरसा। श्रपोक-[सं०] श्रफीम । श्रहिफेन । श्रम-[सं०]। **श्रमस**-[सं॰] बिल । पानी । अप्पित-[सं०] चीता । चित्रक । श्रप्पु-[ता०] पाइर नं० २। पाटला । श्रप्ट-[मला०] श्ररनी । श्रप्तिमंथ । अप्रक्रष्ट-[सं॰] कीया। काक पत्ती। श्रिप्रिय-[मरा०] बेंत । वेतस । अप्रिया-[सं०] सिंगी मञ्जूबी। श्रंगी मस्य । सिंघी मञ्जूबी। श्रमेत राज्ञसी-[सं॰] तुज्जसी । सुरसा । श्रप्रोट-[सं०] छवा। भरद्वाज पत्ती। अफकुर-[सिं०] नकछिकनी नं० १। छिकनी। श्रफतिमून-[भ०] श्रमखेल । श्राकाशवल्ली । अफतीमून-[५०] अमरवेळ नं ० १ । आकाशबेळ । अफयून-[फा॰] अफयून तिर्याक-[फा॰]} अफीम । अहिफेन ।

श्रफल-[सं०] भाक । मानुक ।
श्रफलककोड़ा-[हिं०] विक खेलसा । वंध्या ककेंटकी ।
श्रफलककोड़ा-[हिं०] विक खेलसा । वंध्या ककेंटकी ।
श्रफला-[सं०] १. भुईं श्रीवला । भूस्पामलकी । २.
श्रीवला । श्रामलकी । ३. करेली । कारवेली । ४. घीकुवार ।
श्रकुमारी ।
श्रफसंतीन-[फा०] [श्र०] १. दौना नं० ३ । दौना । २.
[श्र०] श्रफसंतीन । [फा०] वरंजासिफकोही । [हिं०] मस्तर ।
मुस्तर । [बँ०] नामुटी । [ता०] मशी पित्तरी । [खा०] दौना।
[मला०] नेलम्पल । [ते०] सवी । [लै०] Grangea

कुछ विद्वानों की सम्मति है कि 'दौना' श्रीर 'श्रफसंतीन' एक ही श्रीपिध है। दौने की 'श्रफसंतीन दौना' कहा जा सकता है, कि 'तु दोनों एक ही वस्तु नहीं हैं। दौने की श्रनेक जातियाँ हैं। इनमें से तीन प्रकार का दौना इस श्रंथ में दिखलाया गया है। 'श्रफसंतीन' दौने का एक भेद है।

Maderaspatana. Syn: Arternisia Maderas-

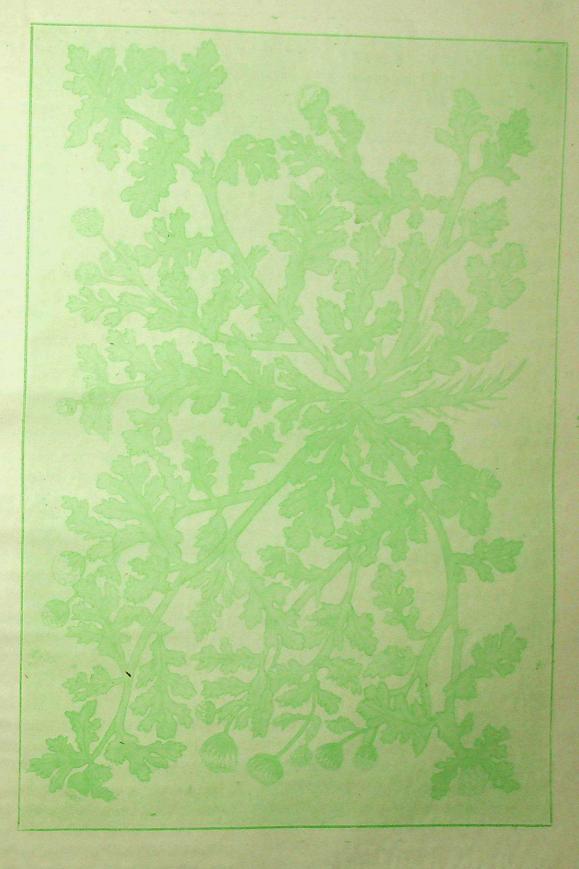
'श्रफसंतीन' भारतवर्ष के प्रायः सब प्रांतों में, पंजाब से पूर्वीय भारत तक, पाया जाता है। इसका चुप प्रायः वर्ष-जीवी होता है। यह शाखा-प्रशाखात्रों से सघन होता है। इसकी शाखाएँ बीच से फैलनेवाली एवं पसरनेवाली, ६ से १२ इंच तक छंबी रेएँदार होती हैं। किवार्य कनी सफेद रंग की होती हैं। पत्ते सघन, श्रनेक १॥ से २॥ इंच लंबे, बीच-बीच में कटे हुए, जड़ की श्रोर छोटे दळवाले श्रीर फुनगी की श्रोर बड़े दलवाले होते हैं। फूलों में घुंडी रहती हैं जो चिपटी गोलाकार पीले रंग की होती हैं।

गुण-देष-पत्ते का हिम या फाँट स्निग्ध श्रीर श्रमि-प्रदीपक है। इसका चूर्ण मधु या चीनी के साथ रुके हुए ऋतु-स्नाव श्रीर योपापस्मार (हिस्टीरिया) में गुणकारी है। कभी कभी पीड़ा में इससे के किया जाता है। कर्ण-पीड़ा पर पत्ते का रस कान में टपकाते हैं।

श्रफसंतीन-उळ्-बहर-[अ॰, फा॰] १. खुरासानी श्रजमोदा। पारसीक श्रजमोदा। २. सीह। सरिक्ट्रँ। [गु॰] परदेशी दवना।[मरा॰] दवना।[लै॰] Artemesia Persica.

यह भी एक प्रकार का दौना है जो अफगानिस्तान और पश्चिमी तिब्बत में पाया जाता है।

यह चुप जाति की वनै।पिध है। इसका चुप छंबा श्रीर सीधा होता है तथा वर्षों जीवित रहता है। डंठल ३-४ फुट ऊँचा श्रीर किंचित् टेढ़ा सा होता है। यह सूक्ष्म रेाएँदार एवं सफेद मखमली रूई से भरा रहता है। शाखें छंबी श्रीर तिरछी होती हैं। पत्ते छोटे छोटे, किंचित् श्रंडाकार श्रीर



TEN MIN

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar कटे हुए रहते हैं। पीले फूजों की श्रनेक घुंडियाँ जगती हैं जो इंच के पष्टांश के घेरे में गोलाकार होती हैं।

गुगा—यह वलकारी, कृमिन तथा ज्वरनाशक है। श्रफसंतीन विलायती-[हि॰][द॰] विलायती श्रफसंतीन। [लै॰] Artemesia Absinthium. Syn: Absinthium Vulgare. Absinthium Officinale. [श्रं॰] The Absinthe Worm wood.

यह विलायती दौना काश्मीर में पाया जाता है। इसका ज्ञुप दीर्घजीवी, रेशमी रेाएँदार श्रीर मसालेदार होता है। शाखें एक से तीन फुट तक लंबी श्रीर सीधी होती हैं। पत्ते गुलदावदी के समान कटे हुए १-२ इंच के घेरे में कई भागों में विभक्त रहते हैं। सब भाग कटे हुए श्रनीदार होते हैं श्रीर उन पर सूक्ष्म के।मल रेाएँ होते हैं। फूलों की श्रनेक शुंडियाँ चै।थाई से तिहाई इंच तक गोल होती हैं श्रीर फूल पीले रंग के होते हैं।

इसका पंचांग श्रीपधि-प्रयोग में श्राता है। काढ़ा, हिम, फाट श्रीर पुल्टिस बनाया जाता है।

गुरा — इसका समस्त जुप बलकारी होता है श्रीर जठ-राग्नि की निर्वेलता के दूर करनेवाला है। यह कृमिन्न है श्रीर विषम ज्वर में ज्यवहत होता है।

इसका ग्रसर स्नायु-जाल पर तीव्रता से पड़ता है। काश्मीर श्रीर लहाख में इसका सवन जंगल होता है। इन जंगलें से जानेवाले पथिकें की प्रायः शिर-पीड़ा श्रीर स्नायु-पीड़ा उत्पन्न हो जाया करती है।

भभके के द्वारा इससे तेल निकाला जाता है जो हरे या पीले रंग का होता है। छुप की गंध के समान इसमें तीन गंध आती है श्रीर इसका स्वाद चरपरा होता है। श्रिधक मात्रा में यह विष का काम करता है।

श्रफस-[श्र०] माजूफल। मायाफल।

अफसुर्देह नैशकर-[फा॰] ईख का रस। इन्न रस।

श्रफसुर्देह मुकव्विमनेशर-[श्र०] राव। फाणित। श्रद्धी-वर्त्तितेस्ररस।

श्रफिनि-[द्रा॰]

श्रफिमा-[बँ०] श्रिकीम । श्रहिफेन । श्रक्यून ।

श्रफियून-[भ॰] श्रफीग्ग-[गु॰]

श्रफीण ना डोडवा-[गु॰] पेस्त। खसखस। पेस्तदाने का वृत्त।

श्रफीम-[हि॰] श्रफयून । श्रमता । [सं॰] श्रहिफेन । श्रफेन । खसखस रस । निफेन । श्राफूक । श्रहिफेनक इत्यादि । [वँ॰] श्राफू । श्राफिन । श्राफिम । [मरा॰] श्रपू । श्रफु । श्रफू । [मला॰] श्राफन । [मा॰] श्रफीम । श्राफु श्रमता । [गु॰] श्रफीय । श्रफीन । [६०] इफीम । [ते०] नळमंदु । नज-मंडु । [क०] श्रफिनि । [द्रा०] श्रफिनि । [फा०] श्रफ्यून । [श्र०] लवनुज खसखास । [श्रं०] White Poppy Opium. [ले०] Papaver Somniferum.

जिस युच से श्राम उत्पन्न की जाती है, उसका विवरण ''पोस्तदाना'' के श्रंतर्गत लिखा गया है। उंठी के जपर जो फल लगता है, उसको पोस्त तथा पोस्त का डोडा कहते हैं। इसी से श्राम निकाली जाती है। प्राय: माय के महीने में फूल लगते हैं और फूलने के दो हफ्ते बाद पोस्त के डोडे श्राम निकालने के लायक बड़े हो जाते हैं। फूल जमीन पर गिर जाते हैं। उन्हें इकट्टा कर मिट्टी के खपड़े गरम कर उनमें इन फूलों की रोटी बनाकर श्राम बाँधने के लिये रख छोड़ते हैं। शाम के या प्रात:काल डोडों के चीतरफा छंबी श्राकृति का चीरा करते हैं। चीरने के बाद उन डोडों से सफेद दूध के समान एक प्रकार का गोंद निकलकर जम जाता है। पर धूप में चीरा देने से दूध बाहर नहीं निकलता। चीरा देने के दूसरे दिन प्रात:काल लोहे के चमचे से उस गोंद के। उटा लेते हैं। इसी प्रकार तीन-चार दिन के श्रंतर पर चीरा करते हैं श्रीर गोंद खुरचकर निकाला करते हैं।

इस प्रकार अफीम इकट्टी करके कीसे की थाली में रख देते हैं। कुछ देर के बाद उससे जल निकलता है। उस जल को न निकालने से अफीम खराब हो जाती है। जब एक महीने में यह गाड़ी हो जाती है, तब मिट्टी के पात्र में रख देते हैं। अफीम गवर्नमेंट का ''एकाधिकारी व्यवसाय'' है, इसलिये यह सरकारी गोदाम में जमा की जाती है। वहाँ इसे ''वारके।स" में जाल, गरम कर, उली बाँध उसके ऊपर फूलों की रोटी लपेट निकृष्ट अफीम से तैयार की हुई लेई लगा देते हैं।

सरकारी श्रफीम, जिस पर मेाहर जगी होती है, तीन प्रकार की होती है। पहली वह जो बंगाज श्रोर बिहार प्रांत में होती है। उसे "पटना श्रफीम" कहते हैं। दूसरी युक्त-श्रांतवाली को "वनारसी श्रफीम" श्रोर तीसरी मध्य प्रदेश श्रोर राजपूताने में उत्पन्न होनेवाली श्रफीम को "माजवा श्रफीम" कहते हैं। उपर्युक्त श्रफीम चीन देश में मेजी जाती है; क्योंकि वहाँ के नर, नारी, बाजक, बृद्ध सभी इसके व्यसन में फँसे हुए हैं। परंतु श्रव वहाँ की गवर्नमेंट इस व्यसन को दूर करने की श्रिधक चेष्टा कर रही है; हसी से यहाँ इसकी खेती कम होने जगी है श्रीर कई सरकारी गोदाम भी तोइ दिए गए हैं।

श्रकीम बहुधा मिलावटी होती है। इसका वजन बढ़ाने के लिये धूर्त लोग पोस्तदाने के पत्ते तथा श्रनेक वस्तुएँ मिछा देते हैं जिससे श्रीषधि के काम के लिए यह श्रनुपयोगी हो जाती है,

इसिलिये वैद्यों के परीचा करके व्यवहार करना चाहिए। स्वच्छ प्रफ़ीम की गंध बहुत तीय होती है। इसका स्वाद बहुत कडुवा होता है। इसका दुकड़ा चीरने से भीतर का भाग चमकदार श्रीर मुलायम होता है, पानी में डालने से जल्दी पिघलकर पानी में मिल जाता है, धूप में रखने से जल्दी पिघलने लगता है, श्रप्ति पर डालने से जल्दी पिघलने लगता है, श्रप्ति पर डालने से जलने लगता है पर कोयला नहीं बनता। जलते समय उसकी ज्वाला स्वच्छ निकलती है, मल या भूशा विशेष नहीं होता श्रीर बुम्माने से श्रर्थंत तीव श्रीर मादक गंध निकलती है। स्वच्छ श्रफीम की ४-१० मिनट सूँ घने से नींद श्रा जाती है।

कहते हैं कि अफीम भारतवर्ष की चीज नहीं है, यूनान या रूस से अरब में आई; अरब से ईरान में, ईरान से अफगानि-स्तान में और वहाँ से हिंदुस्तान में आई; और अब इसकी खेती चीन में भी होने लगी है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष—शोषणकारी, धारक, मदकारक, मिलाक का उत्तेजक, पीड़ा-निवारक, निद्राकारक, स्वेदजनक, कफनाशक, वातवर्द्धक, पित्तकारक, श्राचेपनाशक, वीर्यवर्द्धक, स्वम्भनकारी, श्रानन्ददात्री तथा मूत्रातिसार, श्रातिसार, खाँसी, श्रास, रुधिर-स्नाव, कृमि, पांडु, चय, प्रमेह श्रीर प्रीहा का नाश करनेवाली है।

यूनानी मतानुसार गुणा-देषि—चैाथे दर्जे में ठंढी श्रीर स्च, बद्धक, रुद्धक, श्रिथिजताकारक, निद्रा उरपन्न करनेवाली, शोधनाशक, संपूर्ण पीडाश्रों में शांति-कारक, शीघ्र पतन की हितकारी तथा नजला, कफ, काश, कर्णापीड़ा श्रीर नेत्ररोग में खाने श्रथवा खगाने से गुणकारी हैं। बाह्य श्रीर श्रान्तरिक जायुओं की हानिकारक है।

द्र्पनाशक - केसर श्रीर दालचीनी।
प्रतिनिधि - खुरासानी श्रजवायन।
मात्रा - चौथाई से एक रत्ती।

प्रयोग—1. सफेद रंग की अफीम के "जारण" कहते हैं, क्योंकि यह श्रंत के जीर्ण करती हैं। काले रंग की "मारण" कहलाती हैं, क्योंकि यह मृत्यु लानेवाली हैं। पीले रंग की "धारण" कहलाती हैं, क्योंकि यह जरा का नाश करती हैं; श्रोर चित्र रंगवाली अफीम के "सारण" कहते हैं, क्योंकि वह मल का सारण करती हैं।

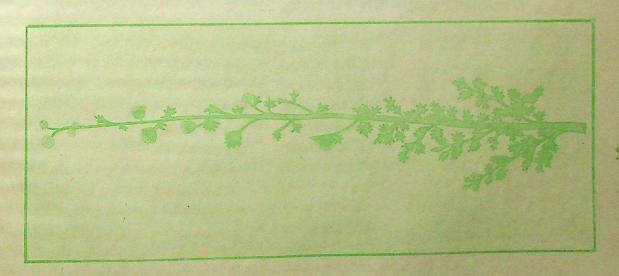
इसको शुद्ध करके खाने के काम में जाना चाहिए। श्रद्रक के रस में २१ बार भावना देने पर यह शुद्ध श्रीषधियों के योग में खाने जायक हो जाती है। जेप में शुद्ध करने की श्रा-वश्यकता नहीं रहती। बाजकों श्रीर खियों के श्रफीम मिली हुई श्रीषधि देना श्रनुचित है। यदि श्रावश्यक ही हो तो जियों को बहुत सावधानी से दी जा सकती है; परन्तु वाजकों की किसी हाजत में न देना ही उचित है।

श्रफीम की मात्रा बहुत कम होनी चाहिए, श्रधिक मात्रा से मरण होता है। कम से कम २ रत्ती से मृत्यु हो सकती है। श्रधिक मात्रा से पहले नींद सी मालूम होती है, फिर चक्कर श्राता है, जी घवराता है, शिथिजता उत्पन्न होती है, मुच्छी होकर बालचाल बंद हो जाती है, नाड़ी भारी होकर धीमी. मन्द श्रीर श्रनियमित चलती श्रथवा जल्दी जल्दी चलती है, श्वास तेजी से चलने लगता, दम घुटता, शरीर कि चित् गरम हो जाता. पसीना श्राने लगता, श्रांखें बंद होतीं, पुतलियां सिकडने लगतीं श्रीर चेहरा फीका पड़ जाता है। इस श्रवस्था तक रोगी की चिकित्सा हो सकती है। किन्तु इसके आगे कष्ट-साध्य श्रीर श्रसाध्य है। होंठ, जिह्ना, नाखून श्रीर हाथ काले पढ जाते, मलावराध होकर पेट फूलता, शरीर ठंढा होने लगता, सिकड़ी हुई श्रांख की पुतली फैलने लगती, नाड़ी सन्द श्रीर निर्वत है। जाती है। हाथ-पैरों की स्नायु शिथित होने लगती हैं श्रीर श्रंत में श्वास की नली सिकुड़कर श्वास की गति के राक देती है। खराँटे से ध्वास खेता हुआ रोगी प्राण त्याग देता है। इसके विष का प्रभाव एक घंटे के श्रंदर जान पड़ने लगता है श्रीर प्राय: २४ घंटे के श्रंदर यह मार डालती है।

श्रफीम की बहुत श्रधिक मान्ना श्रात्मद्यात के लिये खाने से वमन द्वेंकर प्रायः निकल जाती है श्रीर कभी कभी वातरेगा, खींचतान, प्रजाप, वमन, दस्त, धनुस्तम्भ इत्यादि श्रनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

२. कोमळ श्रंग के शोथ में इसकी रसकपूर श्रीर सुरमे के साथ पीसकर लेप करने से फायदा होता है। ३. हाथों की वातज पीड़ा में इसका गरम कर लेप करना चाहिए। धनुस्तंभ, गठिया, प्रलाप श्रादि में इसका सेवन करना लाभकारी है। ४. स्नायु-संबंधी श्रीर वातज पीड़ा पर लेप करना उचित है। ४. दंत पीड़ा में इसका नौसादर के साथ पीसकर दाँतों के छेद में रखने से जाभ होता है। ६. शिरपीड़ा (सर्दी) में ४ रत्ती श्रफीम, २ छौंग के साथ पीसकर लेप करने से पीड़ा दूर होती है। ७. नाड़ीवर्ण पर अफ़ीम और हुक्के की कीट की बत्ती बना-कर देना चाहिए। इ. सर्दी में थे। दी मात्रा में देने से लाम होता है। ६. कर्णीपीड़ा में इसकी ४ चावल भस्म गुलरोगन में मिलाकर कान में डाजने से पीड़ा का नाश होता है। १०. नकसीर में श्रफीम श्रीर कुंदुरु सम भाग पानी में पीसकर नास लोने से लाभ होता है। ११. स्तंभनकारी श्रीषधियों में इसकी डालने से शीव्रपतन नहीं होता । १२. हीलदिल (गर्मी से उत्पन्न होने पर) में इसकी बहुत थोड़ी मात्रा से लाभ होता है। १३. खुजली पर इसके। तिल के तेल श्रीर मीम में मिलाकर मर्दन करने से छाम होता है। १४. जीर्थ ज्वर में इसका सुरमे श्रीर कपूर के साथ पीसकर देना चाहिए। बाह्ँटे में इसका उपयोग जाभकारी होता है। ११, निद्रा लाने के लिये इसका





Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रयोग किया जाता है। १६. पकातिसार में इसकी सेंक-कर खिलाने से लाभ होता है। १७. श्रतिसार श्रीर श्रजीर्थ में सम भाग श्रकीम श्रीर केंसर की गुंजा प्रमाण बनी हुई गोली मधु के साथ सेवन करने से श्रथवा वकरी के दूध में घोलकर पीने से फायदा होता है। १८. प्रवल श्रजीर्थ में नारियल के दुकड़े में छेद कर दो गु^{*}जा श्रफीम भर श्राग पर पकाकर खिलाने से लाभ होता है। ११. सर्दी-जुकाम पर इसका वाल, कागज पर लेपकर बीड़ी बनाकर धूम्रपान करने से फायदा होता है। २०. श्रियक पसीना श्राने पर इसकी थोड़ी मात्रा गुणकारी है। २१. श्रतिसार में इसकी प्याज के रस में मिलाकर सेवन करना चाहिए। २२. नहरुए पर सांप की केंचली श्रीर श्रफीम की टिकिया बनाकर चिपकाने से लाभ होता है। २३. नासूर पर मनुष्य के नाखून की राख में दो-ढाई रत्ती श्रफीम मिला-कर गोलियाँ वनाकर सेवन करना हितकारी है। २४. बहसूत्र पर श्रफीम श्रीर जावित्री सम भाग, कपूर श्रीर कस्तूरी श्रफीम से श्राधा श्राधा भाग खरल कर गुंजा प्रमाण पान के रस में सेवन करने से फायदा होता है। २४. श्रामातिसार श्रीर रक्तातिसार पर नींबू के रस में मिलाकर दूध में डालकर पीना चाहिए। अफीम, शुद्ध कुचले का चूर्ण और सफेद मिर्च सम भाग, श्रद्रक के रस में घोंटकर एक एक रत्ती की गोली वनाकर सींठ के चूर्ण श्रीर गुड़ के साथ देने से लाभ होता है। २६. श्रामातिसार श्रीर विशूचिका में सम भाग श्रफीम, जाय-फल, केसर श्रीर कपूर की खरलकर दी दी रत्ती की गीलियाँ बनाकर जल के लाथ सेवन करना गुणकारी है। २७. संग्रहणी, श्रामातिसार श्रीर रक्तातिसार पर श्रफीम दे। भाग, जायफल, आग पर फुलाया हुआ सुहागा, अभ्रक भस्म और शुद्ध धतूरे के बीज प्रत्येक एक भाग, सबका गंधप्रसारिणी के पत्तों के रस में खरल कर, गुंजा समान गोलियाँ बनाकर मधु के साथ देने से फायदा होता है। २८. संग्रहणी, विषम-डवर, सूजन, श्रम्मांद्य श्रीर पांडु रेगा पर श्रफीम श्रीर वस्स-नाभ विष प्रत्येक तीन तीन माशे, लोहे का भस्म दश रत्ती श्रीर श्रवरक भस्म १२ रत्ती, तूध में घींट एक एक रत्ती की गोलियाँ बनाकर दूध के साथ सेवन करना चाहिए। किंतु इसको सेवन करने तक जब का त्याग करके खाने पीने के जिये दूध ही का व्यवहार करना चाहिए। २६. श्रीव्रवतन निवा-रण और वीर्थ्य-स्तंभन के लिये जायफल में बड़ा छेद कर, श्रफीम भर, मुख मूँद कर, गृत्तर, बड़ श्रथवा बबूत के वृत्त में छेद करके उसमें उक्त जायफळ को रखकर बाहर से मुख बंद कर दे। फिर कुछ दिनों के बाद श्रफीम निकाल, गोिबयी बना चीनी में मिलाकर दूध के साथ सेवन करने से छाभ होता है। ३०. केश न उगने के बिये इसको ईशवगील के लुग्राब में मिलाकर लगाना चाहिए। ३१. श्रफीम के विष

के निवारण का उपाय-इसका रात्र हींग है। यदि इसकी डिविया में हींग का दुकड़ा रख दे तो यह नि-सत्त्व हो जाती है। हींग की पानी अथवा छाछ में घोलकर पिजाने से विष उतर जाता है। मैनफल, सेंघा नमक धीर पीपल, नीम का काढ़ा, तमाख़् का काढ़ा, घी श्रीर नमक, राई की पानी में पीस, इनमें किसी एक के व्यवहार से वमन कराना उचित है। वी में सुहागा श्रीर नीला थाया श्रयवा केवल सुहागा घी में मिलाकर खिलाने से वमन होकर प्रायः श्रफीम निकळ जाती है। फिटकिरी थ्रोर विनाले का चर्ण खिलाना हितकारी है। मालकंगनी के पत्तों का रस श्रफीम के विष का नाश करने-वाला है। बच श्रीर सेंधा नमक खिलाने से लाम होता है। नींवू के बीच में भूना हुआ नीला थाया डालकर चसना चाहिए। चैालाई की जड़ की बारीक पीसकर पानी में बोल-कर पिलाने से लाभ होता है। मकीय के पत्तों का रस पिलाना हितकारी है। इसली के पत्तों का रस पिलाना भी गुणकारी है। शरीफे के बीजों की गिरी पानी में पीसकर पान करने से लाभ होता है। किसी प्रकार वमन करा बी श्रीर बकरी श्रथवा गाय के दूध में कि चित् पानी मिलाकर पिलाना आरंभ करे । जहर रहने तक यह पेट में नहीं ठहरता. वमन हो जाया करता है। जब तक यह पेट में न उहर जाय, तब तक थोड़ा थोड़ा पिजाते जायँ, सोने न दें श्रीर टहलाते रहें।

श्रकीम का दूसरा शत्रु रीठा है। पाव भर श्रकीम में ४.७ वूँद रीठे का जल छोड़ देने से श्रकीम सत्त्वहीन हो जाती है, श्रतएव रीठे का जल बनाकर पिलाना चाहिए। श्रथवा करेमू के शाक का रस निचेड़कर पिलाने से श्रकीम द्वारा श्राणत्याग करता हुश्रा मनुष्य भी मरने से बच जाता है।

श्रापिम-विषनाशक श्रीषियाँ श्रीर उनकी प्रयोग-संख्या—श्रवराट नं० ११। श्ररहर नं० ६। श्रांवला नं० ४८। एरंड नं० ३, १४, ३६। कपास के बीज नं० ६। कपास बागी नं० ६। कलंबी (करेमू) नं० २। कागज नं० २। केले का पानी नं० ४। गूमा नं० ६। छत नं० २। जिंगनी नं० ८। तमालू नं० ६। तृतिया नं० ७। तेजपत्ता नं० ३। धामिन नं० २। नीम नं० २०। पातालगारुड़ी नं० ८। मकोय सब्ज नं० १६। सुगंधवाळा नं० ८। सेव नं० ३। होंग नं० २।

श्रफु-[मरा॰] श्रफुकडरो-[मरा॰] श्रफीम। श्रहिफेन। श्रफूचे बोड-[मरा॰] पोस्तदाने का वृच। श्रफू-[मरा॰] श्रफूक-[मरा॰] श्रफूकडरो-[मरा॰] श्रफून-[मरा०] रे श्रकीम । श्रहिकेन । श्रफेन-[सं०] श्रफ्तेनफल-[सं०] पेस्त । खसफल । श्रफेल-[सं०] श्रफीम । श्रहिफेन । श्रफोत रक्तार्क-[सं०] श्राक लाल। रक्तार्क। लाल मदार। श्रक्तीमून-[फा॰] श्रमरबेल । श्राकाशवल्ली । श्रमरबता । अप्युन-[यू॰] अफीम। अहिफेन। अफ्लातान-[अ॰] गूगल। गुग्गुलु। श्रव-उल-श्रास-[अ०] इब्बुलास । मोरद । श्रब-उल-नील-[ति॰] काला दाना। कृष्णबीज। मिरचाई बेल। त्रवकर-[भ०] } शोरा। सूर्यवार। श्रवकर-[भ०] } **अवनुसु भाड़-**[क॰, ते॰] तेंदू। ति दुक। **श्रवरक-[हि॰] श्रवरख । [सं॰] श्रश्र । श्रश्रक । गिरिजाबीज।** निर्मता। घन इत्यादि। [वँ०] श्रम्र। श्राव। [गु०] श्रभरख। [मरा॰, क॰] श्रअक । [ते॰] श्रअकं । [ते॰] श्रअकमु । [मा॰] भोड़ल । [फा॰] सिताराजमीं । सिताराजमीन । सितारये जमीन। [अ0] तलक । तल्का । [लै0] Tale, Mica. [अं0] Tale Glimmer.

जाति के भेद से श्रवरक चार प्रकार का होता है-बाह्मण, चत्रिय, वैश्य श्रीर शूद्ध । इनमें से बाह्मण श्रवरक सफेद रंग का, चत्रिय लाल रंग का, वैश्य पीले रंग का श्रीर शूद श्रवरक काले रंग का होता है। चींदी के बनाने में सफेद श्रब-रक, रसायन-कार्य में लाल, सोने के घनाने में पीला श्रीर रोगों में तथा ऐश्वर्य के लिये काला श्रवरक लेना चाहिए। पिनाक, दुर्द, नाग श्रीर वज्र इन भेदों से श्रवरक चार प्रकार का होता है। इनमें से बज्र के सिवा शेष तीन प्रकार के श्रवरक श्रीषधि-प्रयोग में लेना श्रनुचित है। पिनाक श्रवरक श्रक्ति में डाळने से परत परत हो जाता है श्रीर इसके खाने से महाकुछ रोग उत्पन्न होता है। दर्दुर नाम का श्रवरक श्राग में पड़ने पर मेंडक के समान शब्द करता है तथा गोलाकार हो जाता है। इसके खाने से मृत्यु होती है। नाग नाम का अवरक अग्नि में पहने से फुंकार करता है। इसके खाने से भगंदर राग उत्पन्न होता है। चौथा वज्र नामवाला अवरक श्रम्भि में डालने से वज्र के समान ज्यों का त्यों रहता है थौर विकार की प्राप्त नहीं होता। यह बच्च नाम का श्रवरक सब प्रकार के श्रवरकों में उत्तम होने के कारण सब प्रकार के रागाँ, बृद्धावस्था थ्रीर मृत्यु का इरने-बाला है। उत्तर देश के पर्वतों में उत्पन्न हुआ अवरक अत्यंत सत्त्ववान् ग्रीर गुणकारक होता है तथा दिवण देश के पर्वतों से ब्रुवित अवरक अरूप सत्त्वयुक्त श्रीर न्यून गुणवाला होता है।

कहते हैं कि जब इंद्रदेव ने वृत्रासुर के मारने का वज्र उठाया था, तब वज्र में से चिनगारियाँ निकलकर श्राकाशमंडल में फैल गईं श्रीर गरजते हुए बादबों से निकलकर जिन जिन पर्धतों के श्रांगों पर गिरों, उन्हों पर्वतों में श्रवरक उत्पन्न हुआ। वज्र से उत्पन्न होने के कारण इसके। वज्र कहते हैं, बादबों के शब्द से उत्पन्न होने के कारण श्रश्नक कहते हैं श्रीर श्राकाश से गिरने के कारण गगन कहते हैं।

श्राजकल पिनाक नामवाला श्रवरक बहुत मिलता है। इसी
में से वैद्य लोग चुनकर भस्म करते श्रीर व्यवहार में लाते हैं।
इससे किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होते हुए देखा भी नहीं
गया। भस्म श्रव्हा होना चाहिए, किंतु गुणों में बहुत हीन
गुणवाला होता है। वन्न नामवाला काला श्रवरक भी कहीं
कहीं मिलने लगा है। इसको मैंने घंटों धधकती हुई श्रक्षि में
रखा, किंतु किसी प्रकार का विकार उत्पन्न होते हुए नहीं
पाया। इसके पत्रों का चूणे भी सहज में नहीं होता। यह कजल
के समान काला होता है तथा इसका भस्म रक्त वर्ण का होता
है। एक श्रवरक श्याम वर्ण या भूरापन लिए काले रंग का श्रीर
सफेद श्रवरक के समान पत्रवाला होता है। इसका भस्म गुलाबी
रंग का होता है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देशन मधुर, कसैना, शीतन, धातुवर्द्धक, श्रायु को बढ़ानेवाला तथा त्रिदेश, घाव, प्रमेह, कोड़, श्रीहा, उदर रेग, ग्रंथि, विष-विकार श्रीर कृमि रेग का नाश करनेवाला है।

यथाविधि पूर्ण रूप से मरा हुआ श्रवरक सकल रेगिनाशक, शरीर के दृढ़ करनेवाला, वीर्यवर्द्धक, श्रायुवर्द्धक, केमिलता-जनक, स्त्री संभेग-शक्तिवर्द्धक, पराक्रमी पुत्र उत्पन्न करनेवाला श्रीर श्रकालमृत्यु-नाशक है।

यूनानी मतानुसार गुग्ग-देष-दूसरे दज में टंढा श्रीर तीसरे में रूज है। रक्तातिसार, यकृत्-संबंधी श्रतिसार तथा मुख के रुधिर-स्नाव में यथानुपान सेवन करना गुग्गकारी है। वृक्क (गुर्दा) श्रीर वस्ति की पथरी की तोड़नेवाला है। पर केवल इसी का सेवन करना यथेष्ट नहीं है। तिल्ली श्रीर गुरदे की हानि-कारक है।

द्र्पनाशक-कतीरा, मधु श्रीर घत । प्रतिनिधि-श्रंजीर श्रीर कैम्बिया। मात्रा-१-२ रत्ती।

प्रयोग-१. श्रशुद्ध श्रवरक भस्म नाना प्रकार के रोग उत्पक्त करनेवाला है तथा केंद्र, चय, पांडु रोग श्रीर हृद्रोदि श्रनेक रोग उत्पन्न करनेवाला है। इस कारण इसको विधिपूर्धक शुद्ध करके व्यवहार में लाना चाहिए। इसके शोधने श्रीर भस्म करने की रीति श्रनेक पुस्तकों में लिखी है, इसलिये यह प्रसंग छोड़ दिया जाता है। श्रवरक के सेवन-काल में खारी श्रीर खट्टा पदार्थ, उद्दर, मूँग श्रादि द्विदल श्रन्न, ककड़ी, करेला, बेंगन, करील श्रीर तेल सर्मथा स्थाल्य हैं। श्रनुपान के योग से यह सब रोगों

का नाश करनेवाला है। २. वीर्य-पुष्टि के लिये श्रवरक भस्म थ्रीर लींग के चूर्ण की मधु के साथ सेवन करना चाहिए। ३. प्रमेह पर इसको गिलोय के सत्त्व श्रीर मधु के साथ अथवा शिलाजीत, पीपल श्रीर मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ४. पित्त-विकार में इसकी मिस्ती सहित कच्चे दूध के साथ सेवन करना चाहिए। १. मंदाक्षि में पीपल थीर मधु के साथ सेवन करने से लाभ होता है। ६. सूत्राघात थीर सूत्रकृच्छ्र पर सिस्ती थीर जवासार मिले हुए पानी में श्रवरक सस्म मिलाकर सेवन करने से फायदा होता है। ७. सूत्रकृच्छ पर ६ मारो से तोले भर तक समीर संदल में १ से ४ रत्ती तक भस्म मिलाकर पान करना हितकारी है। अवरक अस्म ग्रीर मिस्री के चूर्ण में ३० वूँद चंदन का तेल प्रथवा २० वूँद गंवाविरोजे का तेल या १०-१० वूँद दोनों मिलाकर सेवन करने से लाभ होता है। द. श्वास, काश पर छदरक का रस गरम कर टंढा होने पर उसमें भसा श्रीर मधु मिलाकर सेवन करना गुणकारी है। १. पित्तज काश पर इसको श्रड्से के रस श्रीर मधु के साथ पान करने से फायदा होता है। १०. कफज काश पर इसकी कंटकारी के काढ़े के साथ सेवन करना उचित है। ११. वातज काश पर लोंग श्रीर मधु के साथ सेवन करना दितकारी है। १२. वातातिसार में सेांठ के साथ, पित्तातिसार में लेाध श्रीर मिस्री के चूर्ण के साथ अथवा वेलिगरी और मिस्ती के साथ, कफा-तिसार में अतीस के साथ अथवा सेांठ, मिर्च और पीपल के साथ सेवन करना चाहिए। १३. रक्तातिसार में राज श्रीर मिस्री के साथ अथवा नागरमोथे के चूर्ण के साथ सेवन करना हितकारी है। १४. श्रामातिसार में इसकी हरें के मुख्बे के साथ अथवा सैंफि और गुलकंद के साथ सेवन करने से फायदा होता है। १४. रक्तपित्त में छोटी इलायची श्रीर मिस्री के साथ सेवन करना गुणकारी है। अडुसे के रस या काढ़े के साथ श्रथवा गिलाय के रस या काढ़े के साथ सेवन करने से भी लाभ होता है। १६. वातरक्त में श्रवरक भसा श्रीर हरें की छाल की गुढ़ में गोली बनाकर शतावर श्रीर मिस्री के साथ सेवन करना चाहिए। १७. नेत्र-विकार पर मधु, घृत श्रीर त्रिफला के साथ इसका सेवन करना गुणकारी है। १८. रक्तार्श में काले तिल श्रीर मक्खन के साथ सेवन करना जाभदायक है। १६. वातज ऋर्श में भूभल में पकाए हुए जमींकंद की पीसकर सुखावे। फिर उसमें श्रवरक भस श्रीर गुड़ मिलाकर गीलियाँ बनाकर सेवन करना चाहिए। २०. कफजार्श में अदरक के रस के साथ, पित्तजार्श में शुद भिजावी एक भाग, काला तिल एक भाग, एक साल से अधिक समय का प्रशाना गुड़ २ भाग, श्रवरक भसा सोलहवी भाग, इन सब को है एकत्र कर एक एक माशे की गोलियाँ बनाकर

१ से ४ गोली तक सेवन करने से लाभ होता हैं। २१. राजयक्ष्मा श्रीर शेष रोग पर-इसमें सोने का भसा मिलाकर मधु के साथ देना चाहिए। २२. विश्रूचिका में मधु के साथ व्यवहार में लाना उत्तम है। मृत्रावरोध पर पुदीने के अर्क के साथ एक एक घंटे पर देना चाहिए। २३. च्लेग में इसको लोहे के भसा में मिलाकर पान के साथ सेवन करना गुणकारी है। शतपुटित श्रवरक भस्म १ रत्ती, केसर १ रत्ती, छोटी पीपछ ४ रत्ती, श्रवरक का रस ४ माशे श्रीर मधु ६ माशे, सब को एक में मिलाकर सुबह, दोपहर श्रीर शाम की सेवन करना चाहिए। इसी प्रकार श्रनुपान के योग से यह भसा सब प्रकार के रोगों को दूर करनेवाला है।

त्रयरख-[गु॰] श्रवरक । श्रभ्रक । श्रयरुन-[श्र॰] हमेशह वहार । ह्य्युल श्रालम । श्रयरेशम-[का॰] । श्रवरेशम । इवरेशम । रेशम । कज । एक श्रवरेसम-[श्र॰] रिप्रकार का कीड़ा जो श्रपनी लार से श्रपने जपर घर बनाता है । इसका रंग पीला श्रीर सफेद तथा स्वाद फीका होता है ।

यूनानी मतानुसार गुण-देष — पहले दर्जे में गरम श्रीर रूच, किसी किसी के मत से मातदिल, उत्तमांग की बलकारी, शरीर के लिये वृंहणकर्त्तां, श्रीज की बलकारक, रेाध-उद्घाटक, मन-प्रसन्नकारक, मुँह के रूप का शोधक, प्रकृति में मृदुता का वर्धक, स्निग्धता का आकर्षक तथा नेत्र-रोग, हृदय की व्याकुलता श्रीर श्रामाशय की कटेारता का नाश करनेवाला है।

द्र्पनाश्चक—मोती का भसा।
मात्रा—३ से ६ मारो तक।
श्रवल-[सं०] बरुन। वरुण वृत्त।
श्रवलगुद्र-[मरा०] कुंदर। विरोजा।
श्रवलगुज-[फा०] वकुची। सोमराजी।

श्रवला-[सं∘] १ स्त्रो । नारी । श्रीरत । २. रत्न । जवा-हिर । ३. प्रियंगु । फूल प्रियंगु । दहिंगना । ४. [कच्छ०] तरवड़ । श्राहुल्य ।

श्रव**त्गुज्ञ-[फा॰] वकुची । सोमराजी ।**

श्चवहळ-[द॰, पं॰]

श्रवहाळ-[१४०] हाऊवर । इपुषा ।

श्रवहुल-[पं॰]

स्रवाबील-[हिं॰] श्रवाबील नामक पत्ती । मयानी पट । टोरी । इसको फारसी में "परस्तूक" श्रीर श्ररबी में "ख़ताक" कहते हैं । यह उजाड़ में रहनेवाली गौरैया के बराबर एक चिड़िया ह ।

यूनानी मतानुसार गुण-देष-इसका मांस देखने में किंचित कालापन लिए लाल रंग का श्रीर स्वाद में नमकीन होता है। यह तीसरे दर्जे में गरम श्रीर रूप, वृक्क श्रीर विस्त की

पंथरी का नाश करनेवाला, पांडु रोग श्रीर प्लीहा की लाभ-कारी, कांतिदायक, रूप का स्वच्छकर्त्ता श्रीर वृषणों में पानी उतरने की जामकारी, इसके स्वरस का श्रंजन दृष्टि की बल-वान् करनेवाला तथा फेफड़े की हानिकारक है। द्रपेनाशक-सिकंजवीन। प्रतिनिधि-खंजन (खँड्रिच) का मांस । **अवालुक-[** सं॰] पानीश्रालु । पानीयालुक । **अवीर**-[हि॰] अबीर [सं॰] रागचूर्णं। फल्गुचूर्णं। धूलि-गुच्छ । पिष्टात इत्यादि । [वँ०] स्राबीर । श्रवीर जाल रंग की एक प्रसिद्ध बुकनी है। प्रायः इसके। होली में सूखा श्रथवा पानी में घोलकर व्यवहार में लाते हैं। **त्रवुनास**-[अ॰] पे।स्तदाना । खसखस । श्रबुकर-[यू॰] शोरा । सूर्यवार । श्रबृखिलसाय-[श्र०] रतनजात। **श्र॰ज-**[सं॰] १. कमला । पद्म । २. शंख । संख । ३. इज्जल । हिज्जल । ४. समुद्रफल । समुंद्र फल । श्रब्जकार्णिका-[सं॰] कमल के बीज-कोष। कमलगटे का घर। किया का। **श्रन्जकेशर-**[सं०] कमजकेसर । पद्मकेसर । **श्रव्जभोग**—[सं॰] भसींड । कमलकंद । **श्रब्जवीजभृत्-[** सं०] कनेर सफेद । श्वेत करवीर वृत्त । सफेद कनेर। **अञ्जाह्न-**[सं॰] सुगंधवाला । नेत्रवाला । श्रिक्जिनी-[सं०] कमलिनी । पद्मिनी । **श्रब्द-**[सं०] १. मोथा । मुस्तक । मुस्ता । २. नागरमोथा । नागरमुखक। ३. भद्रमोथा। भद्रमुखक। ४. श्रवरक। श्रभ्रक। **श्रब्दनाद**-[सं॰] १. चैलाई। तंडुलीय शाक। २. शंखिनी। यवतिक्ता। यवेची। श्रब्दसार-[सं०] कपूर। कपूरभेद। श्रब्धि-[सं०] समुद्र । सागर । समुंदर । श्रव्धिकफ-[सं०] श्रव्धिज-[सं॰]} समुद्रफेन । समुंदरफेन । कफेद्रिया। श्रिब्धिजा-[सं०] मदिरा । शराव । दारू । त्र्रा**ब्धिंडिर-**[सं०] समुद्रफेन। समुंदरफेन। **श्रब्धिनारिकेल-**[सं०] नारियल दरियाई। दरियाई नारियल। श्रन्धिफल-[सं०] समुद्रफल । समुद्र फल । श्रव्धिफोन-[सं॰] समुद्रफोन । धव्धिकफ । श्रिब्धिमंड्रकी-[सं०] सीप । श्रुक्ति । मेाती की सीप । श्रन्धिवृत्त-[सं०] शास्त्रिमूल । मलयसु । **श्रान्ध**हिंडीर-[सं०] समुद्रफेन । श्रव्धिकफ। श्रन्वासी-[यु॰] गुलवास । कृष्णकेलि ।

श्रव्यासी का फूल-[यू॰] गुलर्वास का फूल। गुल श्रब्वासी। श्रव्यासी की जड़-[यू॰] गुलवांस की जड़ । वेखश्रव्यासी । श्रब्वासी के पत्ते-[यू॰] गुलर्बास के पत्ते । वर्गश्रब्वासी। श्रन्यासी के बीज-[यू॰] गुजवांस के बीज। तुष्मश्रन्यासी। त्रब्सु-[सं०] १. श्रवरक। श्रअक। २. सोथा। सुस्तक। मुस्ता। **त्रव्रकाकिया-[** फा॰] मकड़ी का जाला। त्रव्रमुर्देह-[फा॰] १. मुंडी बड़ी । महामुंडी । गोरखमुंडी । २. इस्पंज । मुश्रा बादल । त्रभय-[सं०] खस । उशीर । वीरणमूळ । ग्रभयदा-[सं॰] सुइँग्रांवला । भूस्यामलकी । हरीतकी श्रभया। पाँच रेखावाली श्रभया-[सं०] श्रभया हरीतकी-[६०] र हरें। त्रभरक-[गु॰] } त्रभरख-[गु॰] } त्रिभिघार-[सं०] घृत। घी। ग्रिभिनंद्न-[सं०] श्राम । श्राम्र । स्त्रिपात ज्वर विशेष। त्रिमि**श**—[सं०] नेत्ररेग । चच्चरेग । **त्रभिलकपित्थ-**[सं०] ग्रमड़ा । श्राम्रातक। श्रमिषव-[सं॰] काँजी। कंजिक। शंडाकी। श्रभिषुत-[सं०]∫ त्र्राभिष्यंद्-[सं०] नेत्ररोग विशेष । नेत्रशूल रोग । श्रांख से पानी श्रादि गिरना। [फा०] रमद। [श्र०] दमश्रा। [श्रं०] Ophthalmia. इस नेत्ररेगा में अत्यंत भयंकर पीड़ा होती है। प्रायः यह सर्व नेत्र रोगों का कारण होता है। इसकी देशभाषा में "श्रांख दुखना" या "श्रांख श्राना" कहते हैं। वात, पित्त, कफ श्रीर रुधिर के देापों से यह रोग चार प्रकार का होता है। ग्रिभिष्यंदी-[सं०] वह श्रीषिध जो चिकनी, खट्टी, कोमल, फूली हुई, कफकारी इत्यादि गुण-संयुक्त होने से रसवाहिनी नाड़ियां को रोककर शरीर की जकड़ दे। जैसे "दही"। **त्र्रभिसार-**[सं॰] सकुची मछली । शब्कुली मस्स्य । ग्रमिहिता-[सं०] जलपीपन । जलपिप्पली । ग्रभीरु-[सं॰] शतावर । शतावरी । त्रभीरपत्रिका-[सं॰]) त्रभीरुपत्री-[सं॰]) शातवर। शतमूली। श्रभीष्ट-[सं०] तिलक। तिलपुष्पी। श्रभीष्टगंधक-[सं॰] माधवी खता । श्रतिमुक्तक ।

श्रभीष्टा-[सं०] रेखुका । रेखुक ।

अभुल-[५०] हाजबेर । हबुषा ।

श्रभेद्य-[सं०] हीरा । हीरक ।

श्रभ्यंग-[सं॰] } तैलमईन । शरीर में तेल लगाना । अभ्यत्त-[सं०] तिलों का कल्क। तिबक्कि । श्रभ्युष-[सं०]) पूरी । पालिका । लुचुई । श्रभ्यूष-[सं०]∫ अभ्र-[सं] १. थवरक। अभ्रक। २. सोना। सुवर्ष। ३. स्रोथा । सुस्तक । ४. नागरसाथा । नागरसुस्तक । ४. मेव । वादल । घटा । अञ्चक-[सं०] १. अवरक। अञ्च। २. सोना। स्वर्ण। ३. सोथा। सुस्तक। अञ्चक्तु-[ते०] अवरक। अञ्च। अभुज-[सं०] कीत्रा। काक पत्ती। श्रभ्रनामक-[सं०] मोथा। मुस्तक। अभुपरल-[सं०] अवरक। अभ्रक। श्रभुपुष्प-[सं०] वेत । वेतस । अश्रमांसी-[सं०] त्राकाशमांसी । सूक्ष्म जटामासी । त्रभ्ररोह-[सं०] वैदूर्य (मिए)। लहसुनिया। अभ्रवटिक-[सं०]) श्रभ्रवाटक-[सं०] रेश्रमडा। श्राम्रातक। श्रभ्रवाटिक-[सं०] श्रभ्रसार-[सं०] भीमसेनी कपूर । भीमसेनी कपूर । श्रभ्राह्व-[सं०] केसर । कुंकुम । जाफरान । श्रमंगल-[सं०]) रेड। प्रंड वृच। श्रमंड-[सं०] श्रमश्रायुल श्रज्ञे-[श्र०] केनुश्रा । महिलता । चेरा । चीरा । श्चमउल सिवियाँ-[फा॰] वाँयटे । करैरे । श्रासेव । श्रमिकटिपिवेट-[क॰] श्रसगंध । श्रश्वगंध । श्रमकुडुवित्तम-[ते०] कुदा। कुटन वृच। अमकुद्-[ते॰] कुडा काला। कृष्ण कुटन वृच। ग्रमकालमचेट्टु-[ते०] हेरा। श्रंकीट वृत्त । श्रमचूर-[डि॰] श्राम की खटाई। श्राम्रपेशी। श्रमटेगिड-[क॰]) **श्रमटेपुं**डी-[खा॰] } श्रमडा। श्राम्रातक। **श्रमडा**-[हि॰] श्रामडा । श्रमरा । श्रमडा । श्रमता । श्रं<mark>वाड़ा</mark> । श्रामरा । श्रंबोधा । [सं०] श्राम्रातक । पीतन । मर्कटाम्र । कपितन इत्यादि । [व ँ०] श्रामड़ा । श्रमरा । श्रंबरा । [गारी०] टंग रे।ग । श्रिडिश्राई । [ता०] काठमा । काटमा । ठानंब । मॅरिमन । चेडी । कटमोरा । श्रंपत्ते । [ते०] श्रतीममडी । श्रंबात्र मु । श्रंमाट । [मु॰] जंगली श्राम । श्रंबाडा । [केाल | अंबुरी । [आसा | अमरा । टोंग्रोंग । [ने ०] थमरा । [लि॰] कौचिछिंग । [माल॰, द॰] काट । श्रंबोहम ।

[ड॰] श्रंबुड । [कुर॰] श्रंबेरा । [केड॰] हमरा । [कु॰] श्रमरा । श्रम्परस । वेहमले । श्रमहा । श्रंबरा । श्रमवरा । [द॰] रान श्रांब । जंगली श्राम । [मु॰] श्रमरा । श्रमराह । [मा॰] रोशंबा । श्रंबाड़ा । श्रंबाड़ो । श्रांवंचार । [तै॰] श्रमाट । श्रंबाटमु । पुई हो । केड से श्रंबला चेट्टु पिटे । श्रमनिवह । मामिडि । श्रमाटम । श्रंडिविश्रो मामिडि । टैारा-मामिडि । [खा॰, को॰] श्रमते । श्रंबटे मर । श्रमटे पुंडी । [वरमा॰] केर । क्योरे रोई । [सिह॰] श्रप्सव केहा । [गु॰] श्रंमरा । श्रंमेड़ा । [क॰] श्रांबेडिय कायि । श्रमटेगिड । [दा॰] काइमा । [पं॰] श्रमरा । श्रंवड़ा । [फा॰] दरवते मेरियम । [लै॰] Spondias Mangifera. [ग्रं॰] Hog plum.

भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में सिंध से पूरव की थ्रोर तथा दिचल की थ्रोर मलाका थ्रीर लंका तक पाया जाता है।

इसका वृच बहुत बड़ा होता है। छाल चिकनी, सुगंधित मसालेदार खाकी ंग की होती है। जकड़ी केमल, हलकी, खाकी होती है। १-१॥ फुट छंबे सींकें पर जियाल (जिंगनी वृच) के पत्तों के समान ३ से ४ जोड़े पत्ते जगते हैं और जियाछ के पत्तों से मोटे होते हैं। ये २ से ६ इंच तक जंबे तथा १ से ४ इंच तक चेंड़े अनीदार होते हैं। फूज मंजरी में सफेद आते हैं। फज १॥-२ इंच छंबे, अंडाकार, चिकने, खटे, गुजाब के समान गंधवाले मुनकों में छगते हैं और पकने पर पीले पढ़ जाते हैं। इनका अचार बनाया जाता है। देशी और विजायती के भेद से यह दो प्रकार का होता है। एक विजायती अमड़े का स्वाद खटमिट्टा होता है और देशी अधिक खटा होता है; इसलिये लोग विजायती को ही पसंद करते हैं।

साधारण वृत्तों के समान इसके वृत्त से पैाधे उत्पन्न किए जाते हैं। शाखाओं के काटकर रेापण कर देने से भी वृत्त तैयार हो जाते हैं। जली हुई मिटी, बालू और उद्धिज खाद मिटी में मिलाकर इसकी जड़ में देना अच्छा होता है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष —कचा फल लहा, वातनाशक, भारी, उच्चावीय्यं, रुविकारी श्रीर दस्तावर है। पका फल कषाय, मधुर रसयुक्त, पाक में कसेला, मधुर, शीत-वीर्थ्य, तृष्तिकारी, कफवर्द्दक, स्निग्ध, वीर्य्यवर्दक, विष्टंमी, पृष्टिकारक, भारी श्रीर बलकारी है तथा वात, पित्त, वाव, दाह, चय रोग श्रीर रुधिर-विकार का नाश करनेवाला है।

इसके कोमल पत्ते हाचकारी, ब्राही तथा श्रमि-प्रदीपक हैं।
यूनानी मतानुसार गृगा-देश — दूसरे दर्जे में शीतल श्रीर पहले में रूच। पैतिक रोग श्रीर पित्तातिसारनाशक एवं उच्या प्रकृतिवाले की जामकारी है। नाक के रोग में इसके वृष्ठ की छाला पीसकर षकरी के तुरंत दुहे हुए दूध के साथ

पीना गुग्रकारी है तथा श्रार्तव रोकने में गुठली का प्रयोग हितकारी है।

प्रयोग—१. श्रमडे के वृच की छाल, गोंद, पत्ते श्रीर फल श्रीपध-प्रयोग में श्राते हैं। इसके फल की गृदी श्रम्ब-संकोचक तथा पित्तज मंदाग्नि को जामकारी है। इसकी छाल शीतज तथा श्रामातिसार को गुणकारी है। पत्तों का रस कान की पीड़ा में व्यवहत होता है श्रीर इसका फल रक्तज रेगा में जाभदायक होता है। २. पित्त की मंदाग्नि में फल की गिरी खिलाने से जाभ होता है। ३. श्रामातिसार में पत्तों का चूर्ण, वृच की छाल के काढ़े के साथ, देना चाहिए। ४. कर्ण-शूल में पत्तों का रस कान में डालने से श्रीर कान के बाहर जगाने से जाभ होता है। १. विप में बुमाए हुए शस्त्र के घाव पर इसके फल को खाने श्रीर पीसकर जगाने से लाभ होता है।

स्रमता-[हिं॰] चांगेरी। श्रमलोनी। श्रंविलोना।
स्रमती-[मु॰] वायविडंग भेद। विडंग भेद।
स्रमते-[खा॰] श्रमडा। श्राम्रातक।
स्रमदुर-[हिं॰] । श्रमरूद। पेरुक। सफरी।
स्रमपुर-[हं॰] । श्रंगुर जंगली। बन श्रंगूर।
स्रमन-[ता॰] १. श्रजवायन। यमानिका। जवाइन। २. [हं॰]

बिजैसार । पीतशास्त्र । श्रसन । श्रमनिवरु-[ते॰] । श्रमवरा-[को॰] । श्राम्रातक ।

श्रममुघिलन-[१०] बबूत । बबूर ।

त्रमर-[सं॰] १. हड्जोड़ी । श्रस्थिसंहारी । २. पारा । पारद ।

३. रुद्राच । शिवाच । ४. सोना । स्वर्ण ।

श्रमरकंटिका-[सं॰] सतावर । शतावरी ।

श्रमरकण्-[सं०] गजपीपल । गजपिप्पली ।

श्रमरकालिक-[सं॰] वृश्चिकाली । बिछाती ।

श्रमरकाष्ठ-[सं०] देवदारु । देवदार ।

श्रमरकुसुम-[सं०] बाँग। बवङ्ग।

त्रमरज-[सं०] १. दुर्गंघ खेर। विट खदिर। २. देवदारु।

देवदार । ३, बड़ नदी का । नदीवट । नदी का बड़ ।

श्रमरतरु-[सं०] देवदारः। देवदारः।

श्रमरथवळ-[प॰] पाषाणमेद । पासानमेद ।

श्रमरद्वल्लि-[सं॰]} श्रमरद्वल्ली-[सं॰]} गिलाय । गुह्ची । गुरुच ।

श्रमरदारु-[सं०] देवदारु। देवदार।

श्रमरहु-[सं०] दुर्गंध खेर। विट खदिर।

अमरपुष्प-[सं॰] १. सुपारी। प्राफछ। २. काँस। काश तृण।

३. श्राम । श्राम्र । ४. केवड़ा । केतकी ।

श्रमरपुष्पक-[सं०] काँस। काश तृषा। श्रमरपुष्पिका-[सं०] १. श्रंघाहुली। चोरपुष्पी। २. काँस। काश तृषा।

श्रमरपुष्पी-[सं०] १. श्रंघाहुली। श्रधःपुष्पी। २. काँस। काश तृर्ण।

श्रमरविद-[सं०] कमल । पद्म ।

अमरवेळ-[हिं०] १. श्रमरवेल नं० १। श्राकाश वेल। २. श्रमरवेल नं० २। श्राकाशवछी। ३. [ं०] श्रकेपुष्पी नं० २। ४. श्रमरवेल। श्रमरवछी। श्रमरवली। श्रमरवला। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। श्रमरवली। स्ववछी। श्रमरवछी। स्ववछी। श्रमरवछी श्रादि। [वँ०] श्रावेशक लता। श्राठक लता। [मरा०] सोनवेल। [क०] नेद्मुदवछी। वलुवछी। श्रमरविछ। [ते०] इंद्रजाल। [को०] श्रंतरवेल। श्रंतवेल। [ते०] पैंचिफेगा। [द्रा०] कोइन। [पं०] निराधार। [फा०] वरिश। श्रमतीमून। [श्र०] कसूस। श्रफतीमून। [तै०] १. Cuscuta Reflexa. २. Cassytha Filiformis. [श्रं०] The Dodder.

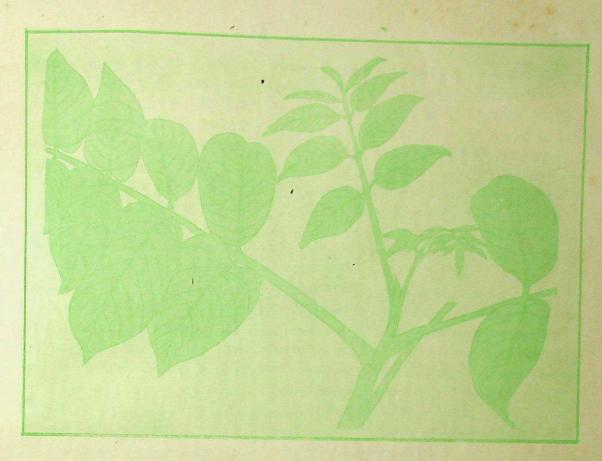
यह बता वृत्तों के ऊपर पीले रंग के डेारे के समान फैली हुई रहती है। इसकी जड़ नहीं होती। जिस वृत्त पर यह रहती है, बढ़ते बढ़ते उस वृत्त को अपनी बताओं से डॉककर सुखा देती है। यह कई प्रकार की होती है। किसी पर फूळ-पत्ते नहीं होते और किसी पर केवल फूल ही देखने में आते हैं। फूळ गुच्छेदार फुमकों में होते और पीलापन बिए सफेद सुहावने दिखाई पड़ते हैं।

यह बड़ी श्रीर छे।टी के भेद से दे। प्रकार की होती है। बड़ी श्रमरबेठ की बेज बड़ी भारी, सबन, पीजे रंग की होती है। जिस बृच पर यह फैल जाती है, उसकी प्रा ढक लेती है। भूमि में उगती श्रीर बृच पर चढ़कर पृथ्वी से ध्रपना संबंध तोड़ उसी पर फैलती रहती है। इसके फूलों से मीठी सुगंधि श्राती है। बीज कड़वे होते हैं। इससे एक प्रकार का रंग निकाठा जाता है।

अमरबेल नं० १—[ई॰] श्रमरवेल । श्राकाश वेल । [वँ॰] इल्डी श्रलगुसी बता । श्रलगुसी । [संता॰] श्रलगजरी । [पं॰] निलाधारी । विराधर । श्रामिल । जरबूटी । कसुस । श्रफीमून । [द॰] श्राकाश पवन । श्रमरवेल । [गु॰] श्रकसवेल । [म॰] निर्मूली । [म॰] श्राकाशवेल । [तै॰] सीतामा पुरगो नलु । सीतामा पेगु नुलु । [लै॰] Cuscuta Reflexa.

यह भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में, विशेषकर बंगाल में श्रिधिक पाई जाती है।

यह लता पत्र-विहीन, पतली, गूदेदार, डोरे के समान, पीले रंग की, छोटे-बड़े वृचों पर श्रथवा भादियों पर शाखा-



अमङ्ग



अमड़ां (फल)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रशाखाओं द्वारा अत्यंत सवन होकर इस प्रकार फैलती है कि वे इसके विस्तार से ढक जाते हैं। यह लता कहीं मोम के समान पीलापन लिए सफेद, कहीं हरापन लिए पीले अथवा कहीं कहीं पीले रंग की देख पड़ती है। फूल छे।टे-छे।टे, पीलापन लिए सफेद, कहीं हरापन लिए पीले अथवा कहीं कहीं पीले रंग के देख पड़ते हैं।

वैज्ञानिक विद्वानों का कथन है कि इसके बीज भूमि पर
गिरकर शंकुरित होते हैं; परंतु वे भूमि से श्राहार पाते हुए
नहीं माल्म पड़ते। श्रपनी श्रद्धुत शक्ति से वे शंकुर निकटवर्ती पै।धे या बृच के पास श्राप ही श्राप खिसककर उससे
खिपट जाते हैं श्रीर बारीक रेशों में ही श्राच के भीतर श्रसकर
उससे श्रपना श्राहार पाने जगते हैं। उसी समय वे भूमि से
श्रवलंब होाड़ पृथक् हो जाते हैं श्रीर शेष भाग स्वकर श्रजा
हो जाते हैं। इस मकार यह लता बृच से ही श्राहार पाकर
समय श्राने पर उसी को सुखा देती है।

इस जता के दुकड़े के। किसी वृत्त पर डाल देने से भी यह उस पर खूब फैजती है।

आयुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष—श्रमस्वेछ एक दिव्य श्रोषधि है। यह धारक, तिक्त, कषाय रसयुक्त, पिच्छिछ, श्रिम-प्रदीपक, हृदय की हितकारी, रसायन, बळकारक, वीर्य-वर्द्धक तथा कफ, पित्त श्रीर नेत्ररोग-नाशक है।

इसका अर्क शीतल तथा कफ, पित्त श्रीर श्राम का नाशक है।
यूनानी मतानुसार गुण-देाष-तीसरे दर्जे में गरम श्रीर
रूच, शोधनाशक, रोध की खोलनेवाली, वातज श्रीर कफज
मल की दस्त द्वारा निकालनेवाली, रक्तशोधक तथा उन्माद,
हृद्य के परदे की सूजन, प्रायः मस्तिष्क-संबंधी रोगों श्रीर
स्वचा के रोगों की लाभकारी है। व्याकुलता की बढ़ानेवाली,
मूच्छी श्रीर तृषोत्पादक तथा फुफ्फुस की हानिकारक है।

द्पेनाशक-सेब, कतीरा, केसर, बबूछ का गोंद श्रीर बादाम रागन ।

प्रतिनिधि-विसफायज (एक यूनानी दवा), निसीय, बाजवर्द श्रीर पित्त पापड़ा।

मात्रा-६ माशे से १ तोले तक।

प्रयोग-१. बीज शूलनाशक है, इस कारण इसको उवालकर पाकस्थली (मेदा) पर लगाते हैं। इसका हिम स्वच्छताकारक होता है। यह दस्तावर है। पंजाब श्रीर सिंध के चिकित्सक इसको स्वास्थ्य-सुधारक मानते हैं श्रीर रुधिर की शुद्ध करने के लिये सारसा पैरिला के साथ व्यवहार में लाते हैं। इसको लगाने से खुजली का नाश होता है। यह ज्वरनाशक तथा तृषा उत्पन्नकारक है। २. यकृत की कठोरता मिटाने के लिये इसका लेप करना तथा यकृत का बल बढ़ाने के लिये इसका रस पिलाना चाहिए। ३. खुजली श्रीर पामा में इसको पीस-

कर लेप करना चाहिए। १. रुधिर शुद्ध करने के लिये इसको उशवे के साथ थाँटकर छान थार उसमें मथु मिलाकर पिलाना होता है। १. कोष्ट शुद्ध करने के लिये इसका हिम पिलाना उत्तम है। १. पिताज रोग में इसके काढ़े से लाम होता है। १. जीया उवर थार अफरे में इसके चूर्ण की फंकी देनी चाहिए। ५. उपदंश में इसका रस पिलाना लाभकारी है। १. पचावात, गठिया, ककहारी खादि में इसकी थाँटाकर बफारा देना चाहिए। १० पुष्य नचत्र में इसकी विधिप्वंक लाकर यदि खो की लिलावे तो जैसा वालक उत्पन्न हो चुका हो, उससे दूसरे प्रकार का (पुत्र अथवा कन्या) उत्पन्न होता है; तथा रक्त का शोधन होता है।

श्रव दूसरी जाति की श्रमस्वेल का वर्णन किया जाता है;
किंतु प्रयोग का नंवर उक्त श्रमस्वेल के सिलसिले के साथ इस
कारण रखा गया है कि दोनों के गुणावगुण प्रायः एक समान हैं।
श्रमरवेल नं० २-[हिं०] श्रमस्वेल । श्राकाशवेल इसादि ।
[सं०] श्राकाशवल्ली । श्राकाशवल्लरी श्रादि । [वँ०] श्रकासवेल ।
श्राकासवेलि । श्राकासवेल । [संता०] श्रलगजरी । [मरा०]
श्राकासवेल । श्रकासवेल । श्रमस्वेल । [द०] केटन । [ते०]
पैंच फिग । [ता०] केटन । [मला०] श्रकासस बुल्लि ।

यह वाँदे से बंगाल श्रीर चटगाँव तक तथा दिच्या की श्रीर ट्रावनकोर तक पाई जाती है।

यह भी उक्त श्रमरवेल की नाई पत्र-विहीन, पीले रंग की, श्रनेक शाखा-प्रशाखाओं से सघन मादियों पर जाल के समान पसरी हुई रहती है। फल मटर के समान गोल श्रीर चिकने होते हैं।

गुण — यह बलकारी, स्वास्थ्यरचक श्रीर धातुबद्धक है। इसका स्वाद श्रन्छा नहीं होता, किंतु इसमें गंध नहीं होती। मॉरिशस टापू में इसका काढ़ा श्रांत के रोग श्रीर बालकों के गलरोग पर दिया जाता है। मडागास्कर में भी इसका व्यवहार होता है। इसको पीसकर तिल के तेल में मिलाकर बालों को दृढ़ करने के लिये लगाते हैं। मन्खन श्रीर श्रद्धक के साथ पीसकर घाव पर छगाते हैं। श्रांख श्राने पर इसके रस में चीनी मिलाकर श्रांखों के जपर लेप करते हैं।

प्रयोग—दूसरी जाति की ध्रमरवेळ वल-वीय्य-वर्द्ध तथा रक्तशोधक है। ११. पुराने घाव पर इसके चुर्ण में सेंठ श्रीर घी मिलाकर लेप करना चाहिए। १२. बालों के गिरने पर इसको तिल के तेल में मिळाकर लेप करना चाहिए। १३. श्रांल की सूजन पर इसके रस में मिस्री मिलाकर टपकाने से फायदा होता है। १४. जलोदर में काढ़े का बफारा देना हितकारी है। १४. रक्तार्श पर इसका प्रयोग उपकारी है। १६. बालरोग में इसको बालक के गले, हाथ थ्रीर गुरुकों पर बांधना चाहिए।

श्रमरवेल के बीज-[हि॰] श्राकाशबेल के बीज। [सं॰] श्रमर-वहीबीज। [का॰] तुख्मबरिश। [श॰] वजरुल कसूस। [यू॰] श्रमरलता के बीज।

श्रमरबेल के बीज मूली के बीज से छेाटे, लाल रंग के श्रीर स्वाद में फीके होते हैं।

यूनानी मतानुसार गुगा-देष—दूसरे दर्जे में गरम श्रीर रूज, मल की स्वच्छकारक, पकाशय श्रीर श्रीतों का उद्घाटक, श्रस्यंत मूत्र जानेवाले, प्रस्वेद श्रीर श्रातंव-प्रवर्तक, स्तनों में दूध बढ़ानेवाले, प्रकृति की सृदुकारक, मल की हरण करनेवाले, दोष ज्वर के नाशक तथा तिल्लो श्रीर फेफड़े की हानिकारक हैं।

द्र्पनाशक—सिकंज्ञवीन, मधु श्रीर कासनी के बीज। प्रतिनिधि—श्राफिस्तीं श्रीर बादरूज । (एक यूनानी दवा) मात्रा—र से ७ मासे।

प्रयोग—१. रुधिर शुद्ध करने के जिये बीजों के चूर्ण की फंकी देना हितकारी है। २. श्राध्मान श्रीर पेट की पीड़ा में बीजों के उबाजकर पेट पर बीधने से श्रपशब्द श्रीर डकार है। इ. वातोन्माद में बीजों का प्रयोग किया जाता है।

न्नमरलता-[यू॰] श्रमरवेल । श्राकाशवञ्ची । श्रमरलता के वीज-[यू॰] श्रमरवेल के वीज । तुल्मवरिश ।

श्रमरळत्ती-[हिं॰] श्रमरवस्त्ररी-[सं॰]

श्रमरविल्ल-[क॰] १. श्रमरवेज । श्राकाशवछरी । २. श्रमरविल्ली-[सं॰] ेश्रमरवेज नं॰ १ । श्राकाशवछी । ३.

श्रमरवेल नं० २। श्राकाशवल्ली।

श्रमरवेल-[हि॰, द॰]

श्रमरवेलि-[हि॰] श्रमरवेल्ल-[मरा॰]

श्रमरसर्षप-[सं०] देवसर्षप । निर्जर सरसेां ।

स्रमरा-[सं०] १. दूव। दूवां। २. गिलोय। गुह्ची।
गुरुच। ३. इनारू। इंद्रवारुणी। इंद्रायन। ४. बड़। वट वृच।
बरगद। ४. नील। नीली वृच। ६. घीकुवार। घृतकुमारी।
७. वृश्चिकाली। बिछाती। ८. मेदासिंगी। मेपर्शंगी।
६. बड़, नदी का। नदी वट। नदी का बड़ा। [हि०, बँ०, ने०,
आसा०] समझा। स्राम्नातक।

श्रमराह-[मु॰] श्रमडा । श्राम्रातक ।

श्रमराह्न-[सं०] देवदारु। देवदार।

श्रमरी-[सं०] 1. दूव नीली। नीली दूव। नील दूवी। २. विर्जुं ही। संभालू। सेंधुश्रार। मेर्वेंद्री। ३. मूर्वा। मरादु-फली। प्रनहार।

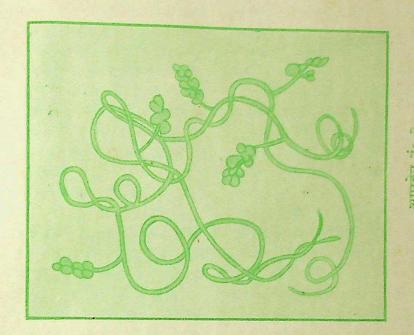
अमरुत-[हिं०] १. श्रमरूद्। पेरुक। २. [मला०] गिलोय। गुहुच। गुरुच। श्रमरुतकल्लि-[खा॰,को॰] श्रमरुतविल्ल-[मला॰] श्रमरुळ-[बँ॰] श्रमरुळ शाक-[बँ॰] श्रमरुळ साक-[बँ॰] श्रमरुळ साक-[बँ॰] श्रमरुळ साक-[बँ०] श्रमरुळ -[६ँ०] श्रमरुळ । श्रमुत फला सफरी। बीहा

अमरूत-[हिं०] अमरूद। असृत फल। सफरी। बीह।
अमरूद-[हिं०] } [सं०] पेहक। दढ़ बीज। मांसल।
बतु छ आदि। [बँ०] पियारा। [मरा०] पेह। [मा०]
जाम फल। [गु०] जाम फल। पेर। [ते०] काभि पंडु।
जमके ह्या। गोय्या। [ता०] से गपु। [झ०] के व्या।
[क०] शीबे। [ते०] असुक। [आसा०] मोधरियन।
[द०] जाम। लाल जाम। सफेद जाम। [स०] पेह।
तांबड़ा पेह। पांड्रा पेह। [फा०] अमरूद। कमशरी।
[अ०] कसुसरा। [लै०] Psidium Guyava. Syn:
Pyrus Communis. [अं०] Guava. The Guava
tree.

इसका उत्पत्ति-स्थान श्रमेरिका के गरम प्रांत तथा वेस्ट-इंडीज़ हैं। श्रव भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रांतों में तथा वरमा श्रीर सिलोन में होता है। विशेषकर वाटिकाश्रों में श्रधिक मिलता है। यह जंगलों में भी पाया जाता है एवं जंगली श्रमरूद भी देखने में श्राता है।

श्रमरूद के वृत्त मध्यमाकार के होते हैं श्रीर वारही मास हरे भरे रहते हैं। प्रायः सब प्रांतों के बागों श्रीर वाटिकाओं में रोपण किए जाते हैं। बीज श्रीर दाब कलम से पैधि तैयार किए जाते हैं। यह वृत्त ४.७ वर्ष में फल देने लगता है तथा फलों के भेद से श्रनेक प्रकार का होता है। छाल चिकनी, पतली, खाकीपन या किंचित् हरियाली लिए भूरे रंग की, कागज के सहश स्वचावाली होती है। लकड़ी हरापन लिए सफेद श्रीर साधारणतः हढ़ होती है। पत्ते समवर्ती ३ से ६ इंच तक छंबे, चौड़े, शरीफे के पत्तों के समान परंतु खुरदरे श्रीर रेशेवाले होते हैं। फूल सफेद १॥ इंच के घेरे में श्राते हैं। फळ गोल, गूदेदार छोटे बड़े कई प्रकार के होते हैं। बनारस श्रीर हलाहाबाद का श्रमरूद श्रच्छा होता है। बड़े श्रमरूद १ इंच के घेरे में गोलाकार श्रीर सुस्तादु होते हैं। पके फळ हरापन लिए पीले या सफेदी लिए पीले रंग के होते हैं। गूदा गुलाबी या सफेद होता है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष — कसैला, मधुर, प्राही श्रीर विंचित् खट्टा होता है। पकने पर स्वादिष्ठ, शीतळ, तीक्ष्ण, भारी, कफकारी, वात-वर्द्धक, उन्मादनाशक, वीर्य-दायक, रुचिकर्त्तां, त्रिदेषनाशक तथा अम, दाह श्रीर मूर्व्ह्रां का नाश करनेवाळा है।





अमरबेल नं ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूनानी प्रतानुसार गुएए-देष — पहले दर्जे में टंढा, तर श्रीर दूसरे दर्जे में गरम है। बलकारी, वद्दक श्रीर मृदु होने पर भी स्वच्छताप्रद, मन की प्रसन्न करनेवाला, प्रकृति की मृदुकारक श्रीर खुधा की बढ़ानेवाला है। हृदय की व्याकुलता का नाशक तथा हृदय, पकाश्य श्रीर पाचन-शक्ति की बल देनेवाला है। यह मस्तिष्क की तर रखता है। इसकी कली मन की प्रसन्न करनेवाली श्रीर बलकारी है तथा मुख से रुधिर श्राने में हितकारी है। इसके पत्ते श्रतिसार श्रीर व्यानाशक हैं। टंढी प्रकृति श्रीर निर्वेख श्रामाश्यवाले की हानिकारक तथा श्रमरा करनेवाला है।

द्पेनाशक—सोंठ का मुख्या थार सैंक। प्रतिनिधि—विही।

प्रयोग-१. श्रमरूद के वृत्त की द्वाल संकोचक श्रीर वालकों के अतिसार की गुणकारी है। प्रायः इसका काढ़ा दिया जाता है। पाचन-शक्ति की निर्वेतता पर इसके केामल पत्तों का उपयोग किया जाता है। पत्तों का काड़ा विशूचिका में लाभकारी है। इससे वमन श्रीर दस्त वंद होते हैं। दंतपीड़ा पर पत्तों का चबाना गुणकारी है। पत्तों की लुगदी में शंगे की भस्म की जाती है। २. श्रतिसार में कचा फल खिलाना हितकारी है। पुराने श्रतिसार में इसकी जड़ की छ।ल का श्रयवा के।मल पत्तों का काढ़ा पिलाया जाता है। कच्चे फलें। की श्रींटाकर पिलाने से भी लाभ होता है। ३. बालकों के श्रतिसार में इसके कामल पत्ते, अनार की कली श्रीर बबूल के पत्तों का फाँट पिलाना श्रथवा सवा तोले जड़ की १४ तोले जल में श्रद्धावशेष काढ़ा बना छ:-छ: मारो की मात्रा से दिन में तीन बार पिलाना चाहिए। विशूचिका में पत्तों का काढ़ा पिलाना गुणकारी है। ४. काँच निकलने पर गाड़ा किए हए काढे का लेप हितकारी है। १. घाव पर पत्तों की पुल्टिस वधिना श्रच्छा है। ६. मस्डे की स्जन श्रीर पीड़ा में पत्तों के काढ़े से कुछा करना गुण-प्रद है।

श्रमरेंद्रतरु-[सं०] देवदार । देवदार । श्रमती-[हि०] श्रत्यम्बपणी । रामचना । श्रमक-[सं०] १, श्रवरक । श्रश्नक । २, समद्रफेन

श्रमल-[सं०] १. श्रवरक । श्रश्नक । २. समुद्रफेन । श्रव्धि-कफ । ३. कपूर । कपूर । ४. निर्मली । कतक वृत्त । ४. रूपा-माखी । तारमाचिक । ६. श्रफीम । श्रहिफेन ।

माली। तारमाचिक। ६. अफाम। आहफाम।

प्रमलकी-[सं॰] सुई प्रांवला। सूम्यामलकी। पाताल प्रांवला।

प्रमलतास-[हि॰] प्रमलतास। घन बहेड़ा। घन बहेरा।

सोनालु। किरवारे।। किरमाला। बनर लगर। बंदर लगर।

सियार लाठी। सोनहाली। [सं॰] सुवर्णक। आरग्वध।

राजतक। व्याधिघात प्रादि।[बँ॰] राखाल नड़ी। सोगालु।

सोनालु। सोंदाल। सुंदा। सोनाली। प्रमलतास। बंदर लाठी। मिग्०] वाहवा। वाहव्याचे माइ। बाहवा। मावा।

वया । ववा । [गु०] गरमाछ । गरमाली । सरमाला । [क०] कवकेभर । हेग्गके । [ते०] रेह्नकाया । रेयलु । रेलराख । रेलकायलु । सुवरम । [मा०] किरमाला । [द्रा०] कान्नेमरं । शरकोत्री। [उ०] सुनारी। [पं०] श्रमलतास। श्रवशा श्रली । करंगल । किश्रर । कनियार । श्रमोली फली । [द०] गिरमाला। [कु०] राजवृत्त। कितोला। [ने०] राजवृत्त । [सं०] चिमकनी । [संता०] तुरनिक । [कोल॰] इरि । इरी । [गारो॰] सोनालु । [श्रासा॰] सनारः। [कच्छ०] बनदाँ छतः। [उ०] संदरीः। सुनरीः। [पश्चि॰] कितवाली। सिटाली। इटाला। भीमरी। सीम। [अव॰] वर्गा। [म॰, प्र॰] जग्गर वाह । रैछा । पिराजा। करकचा। [गोंड०] जगारा। जगरुश्रा। कंवर। रेटा। [ता०] केरिकाय । शरक केरिककाय । कीए । [माल॰] केलक काय । [को०, खा०] ककी । काकी । [अ०] खयार संबर । खियार संवर । व्यारे शंवर । फरलूस व्यार शंवर । [लै॰] Cassia Fistula. Syn: Cathartocarpus fistula. [%] The Pudding Pipe tree; The Indian Laburnum or Purging Cassia.

इसका वृत्त भारतव के कई प्रांतों में पाया जाता है। यह मध्यमाकार का होता है, कि तु कहीं कहीं बड़ा बृच भी देखने में श्राता है। छाल चैाथाई इंच मोटी, हरापन लिए खाकी, नई बाल चिकनी, नीबापन लिए लाल, भूरे रंग की श्रीर पुरानी खर-दार होती है। इसकी लकड़ी बहुत हरू होती है। इसका सार भाग हरू, खाकी या पीलापन लिए लाल एवं रक्तवर्ण का किंतु सूखने पर स्याहीमायल हो जाता है। १२ से १८ इंच तक लंबे सींकी पर ४ से म जोड़े समवत्ती पत्ते लगते हैं। वे श्रंडाकार, किंचित् छंबे आ से ३ इंच तक के घेरे में होते हैं। फूल सुग-धित, श्रिधिक पीले रंग के १० से २० इंच तक टंबी टइनियों पर कुमकों में श्राते हैं। फिलियां गोल १-२ फुट छंबी श्रीर एक इंच मोटी, चिकनी, काळापन लिए भूरे रग का होती हैं। इनके श्रंदर चवन्नी के समान पतले, काले, लसीले, गूदे से लिपटे हुए सिलसिलेवार पर्दे होते हैं। यही अमलतास की गिरी है। पदों के बीच में इमली के बीज क श्राकारवाले मूरे रंग के छोटे छ्रोटे श्रनेक बीज होते हैं। फलियाँ श्रमखतास कहवाती हैं।

इस वृत्त की जड़, जड़ की छाल, छाछ, पत्ते, फूछ श्रीर फली की गृदी श्रीपधि-प्रयोग में श्राती है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-दोष-मारी, स्वादिष्ट, शीवल, पेट के मल की ढीला करनवाला तथा ज्वर, इदयरोग, रक्तिपत, वात, उदावर्त श्रीर शूल का नाश करनेवाला है। इसकी फली कीटे के मलादि की निकालनेवाली, रुचिकारी, ज्वर में सदा पथ्य तथा कीढ़, पित्त श्रीर कफनाशक है। यह कीटे की शुद्ध करने में श्ररथंत उत्तम है। इसके पत्ते कफ धौर मेद की सीखनेवाले, मल की डीठा करनेवाले, उवर में पथ्य धौर चर्मारोग पर मठने में हितकारी हैं। इसके फूळ स्वादिष्ठ, शीतळ, कड़वे, ब्राही, कसेले, वातवर्द्ध क तथा कफ धौर पित्त-नाशक हैं।

इसकी सज्जा मधुर, स्निग्ध, श्रश्चिवर्द्धक, दस्तावर तथा पित्त श्रीर धात का नाश करनेवाली है।

दूध में श्रीटाई हुई इसकी जड़ वातरक्त, दाह श्रीर मंडल कुष्ठ को हरती है।

इसका श्रकं उदावर्त, वात, रक्तिपत्त, शूल, कंडु, प्रमेह, श्वास, कास, कृमि, कोढ़ श्रीर उवर-नाशक है।

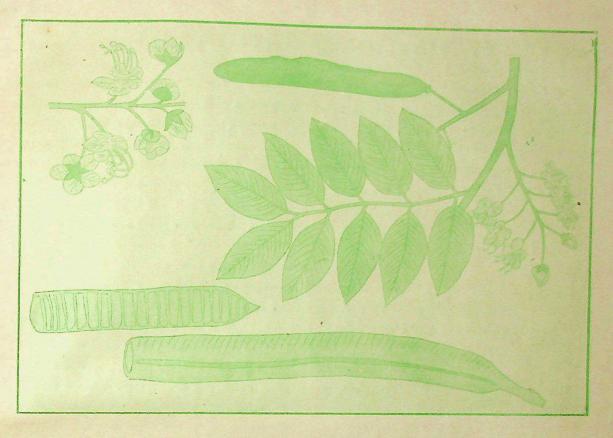
यूनानी मतानुसार गुण-दोष—पहले दर्जे में गरम तर श्रीर कोई मातदिल बतलाते हैं। वचः स्थल के मृदुकर्जा, प्रकृति के। मृदुकारक, रक्तप्रकोप श्रीर उप्णशोथ के। शांतिदायक, श्रतिसार द्वारा मल के। सुगमता से निकालनेवाली है (गर्भिणी श्रीर बालक के। भी देना हानिकारक नहीं है)। कंठरोग में धनियाँ के साथ इसके बने हुए काढ़े से कुल्ले करना चाहिए। परो सब प्रकार के शोथ को लाभकारक हैं। श्रींटाने से इनका प्रभाव मिथ्या है। जाता है। यह मृद्धांप्रद श्रीर श्रामाशय के। हानिकारक है।

द्र्पनाशक — रूमी मस्तकी, बादाम रोगन, कद्दू श्रीर इमली का फाद ।

प्रतिनिधि—त्रिगुण नींबू श्रीर मुनक्का। मात्रा—र से १ तोले तक।

प्रयोग-१. गृदी विरेचक तथा रुधिर की उष्णता का नाश करनेवाली है। इसको बालकों श्रीर खियों को निर्भय दे सकते हैं। श्रामवात, गठिया श्रादि वातरोगों पर लगाने से लाभ होता है। जड़ संस्नन, बलकारी, विरेचक तथा ज्वर श्रीर हदरोग-नाशक है। फूलों का गुलकंद ज्वरनाशक है। ४.७ बीजों का चूर्ण वमन-कारक है। प्रसवकाल की वेदना पर फल का छिलका, केसर श्रीर चीनी गुलाब जल में पीसकर उपयोग में श्राता है। कोंक्या में कोमल पत्तों का रस दाद पर खगाते हैं तथा भिलावें के रस से उत्पन्न हुए फोड़े पर लगाने से लाभ होता है। सिंध में पत्तों की पुल्टिस सर्दों से उत्पन्न हुई सूजन पर लगाई जाती है तथा इसको श्रदि तवात श्रीर श्रामवात पर लगाने से बाभ होता है। गृदी सारक श्रीर ज्वरप्त है। डाक्टरी श्रीषध "कास्करा सेगरेडा" के बदले में श्रमजतास की गूदी दी जा सकती है। २. वृच की छाल तीव्र गलपि ड-शोय की उत्तम श्रोपिध है। इसके काढ़े का सेवन करने से उक्त रोग में शीघ्र लाभ होता है। विशेषकर छोटे छोटे बालकों की जब यह रोग होता है, तब इसके काढ़े की १ से १० बूँद की मात्रा से दे। दे। या तीन तीन घंटे पर देने से बालक की गलशंथि की सूजन शीघ दर हो जाती है श्रीर वह बिना किसी कष्ट के श्रासानी से श्वास लेने

लगता है। ३. बालकों श्रीर गर्भवती स्त्रियों के दस्त लाने के बिये इसकी फली की गरम कर गिरी निकाल वादाम रेगन में चपडकर ग्रींटाने श्रीर छानकर पिलाने से लाभ होता है। ४. विरेचन के लिये गिरी का काढ़ा देना चाहिए। ४. व्यास की रुकावट में गिरी का काड़ा पीने से लाभ होता है। ६. पित्त-प्रकाप में इसकी श्रीर इसली की गूदी का फाँट हितकारी है। ७. ज्वर में फूलों का गुलकंद लाभदायक है। प. नाक की फ़ुंसियों पर इसके पत्ते और छाल की पीस तेल में मिलाकर लेप करने से फायदा होता है। ६. स्नायु की सूजन पर इसका लेप गुणकारी होता है। १०. त्वचारीग पर पत्ते श्रीर छाल का काढ़ा मलना श्रथवा इसके द्वारा सिद्ध किया हुआ तेल लगाना उपकारी है। ११. बद्धकोष्ठ में पत्तों का शाक भोजन के समय खाने से लाभ होता है। १२. बालक के अफरा और पेट की पीड़ा पर गिरी को नाभि के चारों श्रोर लेप करना चाहिए। १३. दस्त लाने के लिये इसकी श्रीर इमली की गूदी पानी में भिगो, मल और छानकर रात्रि को सोते समय पीने से अथवा १। तोला इसके फूलें। का गुलकंद गरम दूध कैसाथ सेवन करने से प्रात:काल दस्त होते हैं। १४. वातरक्त पर पत्तों की गरम करके बाँधना चाहिए। १४. श्रदि तवात श्रीर गठिया पर पत्तों की गरम कर वीधने से लाभ होता है। १६, वातरक्त श्रीर शिरोरोग पर पत्तों के काढ़े में घृत मिलाकर पान करने से फायदा होता है। १७. छोटे जोड़ों के शोध पर इसके पत्तों की पुल्टिस बांधनी चाहिए। १८. मुखपाक पर पत्तों की पीस जीभ पर मलने से लाभ होता है। १६. श्रंडवृद्धि में १॥ तोले गिरी की १० तोले पानी में चतुर्थांश काढ़ा बना उसमें ३ माशे घृत मिला खड़े होकर किंचित गर्म ही पीने से लाभ होता है। २०. नवीन पत्तों या कची फली की गिरी पीसकर लेप करने से दाद का नाश होता है। २१. श्रामवात में पत्तों की कड़वे तेल में तलकर श्रीर चावलों में मिलाकर खाने से लाभ होता है। २२. गुल्म राग में इसका चार माशे तेल पिलाना चाहिए। २३. हरिद्रा प्रमेह में इसका काढ़ा पीना हितकारी है। २४. गंडमाला पर इसकी जड़ की चावलों के पानी में पीसकर नस्य देना श्रथवा लेप करना हितकारी है। २४. खुजली, गजचर्म्स, क्रष्ट, दाद इत्यादि त्वचारागों में पत्तों का काँजी के साथ पीसकर लेप करना चाहिए। २६. कान बहने पर इसके काढ़े की कान में डालने से लाभ होता है। २७. कुष्ठ श्रीर दाद पर पत्तों की सिरके के साथ पीसकर लेप करने से फायदा होता है। २८. उपदंश की टाँकियाँ मिटाने के जिये पत्तों के काढ़े से धोना चाहिए। २६. सूबी खाँसी पर इसके फूलों के गुलकंद की २ तोले की मात्रा में सेवन करने से श्रथवा गिरी की पानी में घैांट त्रिगुण चीनी डाल गाढ़ी चाशनी बनाकर चाटने से फायदा होता है।



MERCHAN



日本日本

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar ३०. सुखपूर्धक प्रसव होने के लिये छिठके की थ्रांटाकर उसमें चीनी मिठाकर पिठाना चाहिए। ३१. खटमल दूर करने के लिये इसकी गृदी की चारपाई के पानें के छिद्रों में थाड़ी थोड़ी ठगा देना चाहिए। ३२. स्पंप के विष पर श्रमलतास गृच की छाल, जो स्वयं छूट गई हो, ३ माशे श्रोर ३ दाना काली मिचे को जल के साथ पीसकर पिजाना चाहिए।

श्रमछतास छेटा—[हिं०] छेटा श्रमजतास। सोनालु। सोनहालु। किरवारो। किरमाला। [सं०] कर्णिकार। परि-व्याध श्रीर पादपेत्पला। [वं०] छेट सोंदाला। [मरा०] लघु वाहवा। [गु०] नहाना गरमाला। [ते०] किरुगक्के। [श्रं०] A sort of Cassia.

यह वृत्त सुक्षे प्राप्त नहीं हो सका, इस कारण इसका विवरण थीर चित्र देने में असमर्थ हूँ। कि तु शालियाम निघंदु भूपण में इसका विवरण यों दिया गया है—"कर्णिकार के वृत्त प्रायः पर्वतों और वनां में अधिक होते हैं, पत्ते डाक के पत्तों के समान होते हैं। फूल छाछ और अत्यंत मनाहर छगते हैं।" कनकच्मपा नं० २ देखे।।

गुरा-दोष-कड्वा, चरपरा, कसेळा, गरम, सारक, लघु, रंजक श्रीर सुखदाता है तथा शोध, कफ, रुधिर-विकार, घाव, केंद्र, उदररोग, कृमि, प्रमेह श्रीर गुल्म का नाश करनेवाला है।

प्रयोग—१. होटे श्रमलतास का उपयोग बहुत कम देखने में श्राता है। २. गजचर्म, कोढ़, दाद, खुजली श्रीर चर्म रोग पर पत्तों की कांजी में पीसकर लेप करना चाहिए। ३. गंड-माळा पर, चावलों के पानी में पीसकर लेप करना हितकारी है।

श्रमलदीसि—[सं॰] कपूर। कपूर। काफूर। श्रमलपत्री—[सं॰] हंस (पत्ती)।

श्रमलबेत — [हिं०] श्रमलबेत । श्रमलबेत । श्रमलबेत । [सं०] श्रम्लवेतस । चुक । शतवेधि । सहस्रनुत इत्यादि । [बॅं०] थैकड़ । थैकल । श्रमलवेतस । [मरा०] श्रमलवेतस । चुका। [गु०] श्रमलवेत । [फा०] तुर्शक । [यू०] श्रमलवेद । [तै०] Acido Zeyfolia. [शं०] Common Soral.

इसका वृत्त मध्यमाकार का होता है श्रीर प्रायः वाटिकाओं में लगाया जाता है। फूल सफेद श्रीर फल गोल, खरबूज़े के समान, कच्चे रहने पर हरे श्रीर पकने पर पीले हो जाते हैं। ये फल चिकने होते हैं। श्रमलबेत दो प्रकार का होता है, एक श्रमल-बेत श्रीर दूसरी बेती। यह एक प्रकार का नींबू है।

श्रायुर्वेदीय मतानुसार गुण-देष — श्रत्यंत खटा, भेदक, हलका, श्रप्तिवर्द्धक, पित्तवर्द्धक, रोमांचकर्त्ता, रुखा तथा हृदय-रोग, श्रूल, गुल्म, मूत्र श्रीर मलदोष, प्रीहा, उदावर्त्त, हिचकी, मद्यदोष, श्रानाह, श्रफरा, श्ररुचि, ध्वास, खांसी, श्रजीर्थ, वमन, कफ श्रीर वातरोग का नाश करनेवाला है। यह बकरे के मांस को गलानेवाला है। जिस प्रकार चनालार से लोहे की

स्ईं गळ जाती है, उसी प्रकार इसके रस में भी स्ईं डाळने से गळ जाती है।

यूनानी सतानुसार गुण-देख-टंडा, तर, हृदय रोग के। हितकारी, पित्तनाशक, पाचक, पकाशय के। सृदुकर्ता, खुधा-कारक, रुधिर-विकार-नाशक, वातज गुरुम के वायु के। नाश करनेवाला थ्रीर उदरपीड़ा के। दूर करनेवाला है। इसका चूर्ण श्रानेक योगों में पड़कर श्रत्यंत गुण करता है। बादी श्रीर उदर रोग पर खुरासानी श्रजवायन के चूर्ण में नमक मिलाकर श्रमक वेत के रस में सात भावना देकर सेवन करना चाहिए। यह कफ के। उत्पन्न करनेवाला है।

द्पेनाशक—बोंग थ्रीर काली मिर्च। प्रतिनिधि—चुक।

प्रातानाध—चूक । मात्रा—१ से ३ मारो तक । श्रमछवेद-[य्॰] श्रमखवेत । श्रमखवेतस । श्रमछवेळ-[हि॰] श्रयम्बपणी । रामचना । श्रमितीं । श्रमछवेत-[हि॰] श्रमछवेत । श्रमछवेतस । श्रमछमणि-[सं॰] श्रमछरत-[सं॰] विछोर । स्फटिक मणि । श्रमछरता-[वँ॰] श्रयम्बपणी । रामचना । श्रमिती ।

श्रमलवेत-[हि॰]} श्रमलवेत। श्रम्बवेतस। श्रमलवेत-[हि॰]

श्रमलां सटा-[सं॰] सुई श्रांवला । सूम्यामलकी । श्रमला-[सं॰] १. सातला । सप्तला । थृहरभेद । २. श्रमड़ा । श्राम्रातक । ३. सुई श्रांवला । सूम्यामलकी । ४. नील । नीली वृत्त । महानील । ४. [वं॰, श्रासा॰] श्रांवला । श्रामलकी । श्रमलाटन-[हि॰] कटसरैया । वाणपुष्प ।

त्रमली-[हि॰, मु॰] इमली। ति'तिड़ी। [हि॰] गोरची। गोरख इमली।

श्रमलुक-[वँ०] श्रंगूर जंगली। वन श्रंगूर।

त्रमसुळ-[गु॰] त्रमसोळ-[मरा॰] विषांविल। वृत्ताम्ल। महादा।

त्रमाकीरे-[क॰] श्रसगंघ। श्रश्वगंघा।

श्रमाटम-[ने०] श्रमडा । श्राम्नातक । श्रमांपच श्ररिशि-[हा०] दूधी । दुग्धिका ।

स्रमावट-[६०] श्राम के रस की रोटी। [सं०] श्राम्नवर्त। [बँ०] श्राम्रसत्व, श्रामक। [सरा०] श्रामाचे साष्ट। श्राम्नवर्त।

गुगा — रुचिकारी, किंचित् दस्तावर तथा वमन, श्राम, वात श्रीर पित्त का नाश करनेवाला है। भूप में पकने से इसका होता है श्रीर कीठे की वायु की निकासता है।

श्रमा हरदी-[हि॰] श्रांबा हलदी। श्रामणंघ हरिदा। श्राम श्रमा हरुदी-[हि॰] श्रांबा हलदी। श्रामणंघ हरिदा। श्राम

श्रमितद्वम-[सं०] तेजपत्ता। पत्रज।

ग्रमिया

श्रमिया-[हि॰] श्राम। श्राम्र। श्रमितौ-[हि॰] श्रत्मन्तपणी । रामचना । **श्रमिलातका-**[सं०] सेवती। शतपत्रिका पुष्प वृत्त। सादा गुळाव। अमुद्रकी-[सं०] धान साठी। गर्भ में ही पकनेवाला बरसाती धान । साठी धान । **श्रमुईगुरु-**[सिह०] श्रदरक। श्राद्वक। श्रादी। श्रमुक-[ने०] श्रमरूद्। पेरुक। सफरी। श्रमुक कुरविरई-[ता॰] र श्रसगंध। श्रव्यगंधा। श्रमुकरांकि डंग-[द्रा॰] ﴾ श्रमुखुरा विरई-[ता॰] काकना नं० २। श्रकरी, पनीर के बीज। श्रमुगिलां-[भ्र०] बब्त । कीकर । श्रमुगिळां सिमग-[अ०] ववूल का गोंद । वर्वू र-निर्यास । गोंद बबूर। श्रमुम पचे श्रारिस्स-[ता॰] दूधी नं॰ १। दूधिया। दुग्धिका। अमुरस-[कु॰] श्रमडा। श्राम्रातक। **श्रम्** –[यू॰] रेशए बाळा । सोश्रा के समान एक यूनानी श्रीपर्ध । श्रमुला-[सं०] किन्हारी। लांगली। श्रमृडाल-[सं०] लामजक। पीला बाला। **त्रमृणाल-[सं॰] १. खस। वीरणमूज। उशीर। २.** लामजक। पीला बाला। **श्रमृणालय-[सं॰] लामज्ञक । पीला बाला । श्रमृत-**[सं॰] १. श्रमर। न मरनेवाला। देवता। २. विष। विष-मात्र । ३. श्रं गिक विष । सिंगिया विष । ४. वत्सनाभ । बच्छनाग विष । मीठा तेलिया । १. पारा । पारद । ६. ग्रीपिध । द्वा। ७. दूध। दुग्ध। द. घृत। घी। १. सोना। स्वर्ण। ५०. पानी । जल । ११. बाराहीकंद । गेंठी । चमारश्रालु । १२. बनमूँग। मुद्रपर्णी। मुगवन। १३ मेाठ। मकुछ। १४. गिलाय। गुडुचि। त्रमृत ग्रम्छिका-[सं॰] सुई र्थावला नं॰ १ । भूम्यामछकी । श्रमृतकंदा-[सं०] कंद गिलाय । कंद गुद्धचि । श्रमृतकद्ली-[सं०] केला भेद । कदली भेद । श्रमृतकल्लि-[खा॰] गिले।य । गुडूचि। श्रमृतकेलि-[सं०] नारियल की खीर। श्रमृतचार-[सं०] ने।सादर । नरसार । श्रमृतजटां-[सं॰] जटामांसी । चाळबुड़ । श्रमृतजा-[सं०] हरीतकी । हर। श्रमृतफल-[सं०] १. नासपाती । २. परवल । पटोल । परोरा। ३. पारा । पारद । ४. वृद्धि । (श्रष्टवर्ग की एक श्रोविध ।) ४. र्श्वावला। श्रामलकी। ६. श्रमरूद्। पेरुक। सफरी। ७. पारेवत । पालेवत फल ।

अमृतफळा–[सं॰] १. दाख। द्राचा। २. र्थावला। श्रामलकी।

श्रमृतमंजरी-[सं॰] गोरचदुग्धी । श्रमृतसंजीवनी । गोरख-श्रमृतरसा-[सं॰] दाख काली। काली द्राचा। श्रमृतलता-[सं०] गिलोय। गुडूचि। श्रमृतवल्लरी-[सं०] १. पोई शाक। उपोदिका। २. गिलोय। गुह्चि। गुरुच। श्रमृतवल्लि-[क॰] गिलोय। गुइचि। त्रमृतवह्मिका-[सं॰] १. श्रमृतवह्मी । श्रमृतस्रवा । २. गिलाय। गुडूचि। गुरुचे। त्रमृतवस्रो-[सं॰] १. श्रमृतवङ्घी । तोयवङ्घी । श्रमृतस्रवा । २. गिलोय । गुङ्क्चि । यह चित्रकृट प्रदेश में उत्पन्न होनेवाली गिलाय की जाति की एक लता है जो हदंती के नाम से प्रसिद्ध है। गुग्-िक चित् कड़वी, रसायन तथा विष, घाव, के।ढ़, श्रामवात, कामला श्रीर सूजन का नाश करनेवाली है। त्र्यसृतविष-[सं०] वस्सनाभ विष । मीठा विष । बच्छनाग । श्रमृतवुस-[तु॰] गिलोय। गुडूचि। असृतहेळ-[गोषा॰] } गिलोय। गुहूची। गुरुच। त्रमृतसंगम-[सं०] खपरिया । खपैरी तुत्य । श्रमृतसंजीवनी-[सं०] गोरचदुग्धी । गोरखदुद्धी । श्रमृतसंभवा-[सं०] गिलेाय। गुहूचि। श्रमृतसारज-[सं०] गुड़। मीठा। श्रमृतसारजा-[सं॰] चीनी । शर्करा। त्रमृतस्रवा-[सं०] १. श्रमृतवल्ली । तोयवल्ली । २. त्रायमान । त्रायमाणा । ३. रुद्रवंती । रुद्ंती । त्रमृता-[सं॰] १. गिलोय। गुडूचि। २. मदिरा। दारू। शराव । ३. माबकंगनी । ज्योतिष्मती । मलकौनी । ४. निसेष लाल । रक्त त्रिवृत्त । लाल निसाथ । ४. गोरचदुरधी । श्रमृत-संजीवनी । ६. श्रतीस । श्रतिविषा । ७. दूब । दूब्वा । द्रः भावता। श्रामलकी। १. हरीतकी। हरें। १०. तुलसी। सुरसा। ११. पीपल। पिष्पली। १२. इनारू। इंद्रवारुखी। १३. सालम मिस्रो । सुधामूली । सालब । १४. शिवलिंगी । छिंगिनी लता। १५. गॅंगेरन। नागवला। गुल शकरी। १६. कंद गिलोय। कंद गुडूचि। श्रमृताक-[सं॰] १. परवछ । पटेाल । २. नासपाती । श्रमृतादि-[सं०] सब प्रकार के कषाय द्रव्य। श्रमृतादि विष-[सं०] स्थावर विष । त्रमृताष्टक-[सं] हरीतक्यादि अष्टद्रव्य । हरीतकी श्रादि म्राठ त्र्रापियाँ । यथा-इरीतकी, नागरमोधा, चीता, चिरा-यता, इलदी, इंद्रजव, गिलोय श्रीर सेंठ।

गुरुकुल । परधानवालय हरिद्वार

पुस्तक वितरण की तिथि नीचे ग्रंकित है। इस तिथि सहित १५ वें दिन तक यह पुस्तक पुस्तकालय में वापिस ग्रा जानी चाहिए। ग्रन्थथा ५ नये पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

10 DEC 1973
72514 20061 MM
23 APR 1975
K 6/2864

PAYMENT PROCESSED
vide Bill No Dated......

ANIS BOOK BINDER



